Registered with the Registrar of Newspaper for India
R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946
94251-01132

Supported by: Kisaan Helpline +91-7415538151

गौरवपूर्ण प्रकाशन-द्वितीय दशक की ओर अग्रसर

मध्य भारत कृषक भारती

READ FOR ONLINE EDITION
Website: www.krishakbharti.in
E-mail: bhartikrishak75@gmail.com

ISSN-2582-5976

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली मासिक पत्रिका

वर्ष-20 अंक-04 ग्वालियर, जुलाई -2025 मूल्य 30 रुपए

मानसून ने पकड़ी रफ्तार, तय समय पर पूरे देश में झमाझम

खुशखबरी ! इस साल सामान्य से ज्यादा बारिश की उम्मीद

देश के ज्यादातार इलाकों में मानसून सक्रिय हो गया है। उत्तर भारत में भी मानसून की आमद हो गई है। इसी बीच खुशखबरी यह है कि इस बार मानसूनी बारिश पर्याप्त से भी ज्यादा होगी। भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए अच्छा मानसून सौगात की तरह होता है। लेकिन बारिश से बड़े शहरों की बदइंतजामी भी सामने आती है।

आम उत्पादन के लिए प्रेरित होंगे छत्तीसगढ़ के किसान

कृषि विकास एवं किसान कल्याण मंत्री राम विचार नेताम ने इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय के कृषि मंडपम में आयोजित राष्ट्रीय आम महोत्सव के समापन समारोह मे शामिल हुए।

किसानों की समृद्धि के लिए संकल्पित म.प्र. सरकार : सीएम

मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने दंदरौआ धाम (जिला भिण्ड) मेहगांव में नवीन एवं नवकरणीय ऊर्जा विभाग के पोर्टल को लॉच किया।

श्री गणेशाय नमः
श्री सॉवलिया सेठ
किसान कृषि सेवा केन्द्र
Gmail
Kisankrishisevakendramanasa@gmail.com
7692967419
9109726855
हमारी सेवाएँ:-
सभी तरह के उन्नत बीज- अश्वगंधा, अकरकरा, कलौंजी, तुलसी, केमोमाईल, चिया, जीरा, हल्दी, सौप, सर्पगंधा, तरबूज एवं सभी प्रकार की सब्जिया एवं फुलो के बीज, कृषि दवाईया, उर्वरक, वर्मी कम्पोस्ट यूनिट, अजोला यूनिट, किसान के घर पर तैयार वर्मी कम्पोस्ट, जैविक खेती से संबंधित सभी कार्य, सभी फसलो के फोरोमेन ट्रेप, सोयाबीन स्पाईरल ग्रेडर, कृषि एवं किसान संबंधित समस्त प्रकार के ऑर्डर की विश्वास पूर्ण, पूर्ति करना हमारा परम ध्येय है।
कृषि विभाग एवं उद्यानिकी विभाग संबंधित सभी योजनाओं के पंजियन किए जाते है।
उन्नत किस्म के नर्सीरी के पौधे, मासिक, साप्ताहिक कृषि साहित्य सभी प्रकार की पत्रिका उपलब्ध है।
स्थान- पुराना टॉकीज, एल.आई.सी. ऑफिस के सामने, रामपुरा रोड़ मनासा जिला नीमच (म.प्र.) 458110

An ISO 9001:2008 Certified Company
कृषि दर्शन®
खेत-खलिहान का राजा
1988
थ्रेशर 35HP हापर मॉडल
हडम्बा कटर थ्रेशर
ऑटोफीडिंग थ्रेशर
मक्का थ्रेशर
मिनी कम्बाईन थ्रेशर
रेज बेड सिड ड्रील
स्प्रे पंप 500 लि. गन बूम मॉडल
मोटर लिफ्टर
सुदर्शन इण्डस्ट्रीज
विक्रम नगर मौलाना, बड़नगर, जिला-उज्जैन-456771 (म.प्र.)
फोन : 07367-262235, मोबा.: 09827078882
वेब : www.krishidarshan.com, ई-मेल : krishidarshan@rediffmail.com

पर्यावरण अनुकूल पर्यटन

इसमें दो राय नहीं कि देश के पहाड़ी राज्यों के लिये पर्यटन उद्योग अब अर्थव्यवस्था को गति देने का एक सशक्त माध्यम बन गया है। कह सकते हैं तमाम पारिस्थितिकीय चुनौतियों के चलते एक मजबूरी भी बन गया है। लेकिन इसमें दो राय नहीं है कि राजस्व सृजन और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाने के लिये, राज्य सरकारें एक कठिन राह पर चलना सीख रही हैं। दरअसल, पर्यावरण के प्रति संवेदनशील और संरक्षित क्षेत्रों में यह चुनौती ज्यादा बड़ी है। यही वजह है कि हिमाचल प्रदेश के संवेदनशील स्पीति के इलाके में प्रदेश के वन विभाग ने आने वाले पर्यटकों के लिए दैनिक आधार पर उपयोगकर्ता शुल्क आरंभ करने का निर्णय किया है। निश्चित रूप से हिमाचल सरकार की इस अभिनव पहल का स्वागत ही किया जाना चाहिए। निस्संदेह, इस फैसले के बाद अब बिना किसी प्रवेश शुल्क के इन इलाकों में पहुंचना अतीत की बात हो जाएगी। इतना ही नहीं शूटिंग के लिये, मसलन वृत्तचित्र, फीचर फिल्मों व विज्ञापन आदि के साथ ही टेंट लगाने जैसी गतिविधियों के लिये भी शुल्क संरचना तैयार की गई है। यह एक हकीकत है कि पर्यटकों का अराजक व्यवहार वातावरण में न केवल पर्यावरणीय प्रदूषण फैलाता है बल्कि ठोस कचरा भी छोड़कर जाता है। जिसकी क्षति व सफाई

का दबाव राज्य पर पड़ता है। निस्संदेह, सरकार की नई पहल का उद्देश्य आदिवासी जिले लाहौल और स्पीति में पर्यटन के कार्बन फुटप्रिंट को कम करना है। इसके अलावा हिमाचल उच्च न्यायालय के निर्देशों के अनुपालन में आगंतुकों के लिये सुविधाओं का विस्तार करना भी है। दरअसल, राज्य सरकार सीमावर्ती इलाकों में पर्यटन को बढ़ावा दे रही है और प्रोटोकॉल में संशोधन करके यात्रियों की पहुंच को आसान बना रही है। ऐसी ही एक पहल मंगलवार को किन्नौर जिले के शिपकी-ला में मुख्यमंत्री सुखविंदर सुक्खू ने शुरू की। दरअसल, इन क्षेत्रों के सामरिक महत्व को देखते हुए राज्य के अधिकारी सेना और भारत-तिब्बत सीमा पुलिस के साथ समन्वय बनाकर काम कर रहे हैं।

निश्चित रूप से हिमाचल प्रदेश सरकार की यह पहल स्थानीय अर्थव्यवस्था के लिये, खासकर दूरदराज के गांवों के लिये अच्छा संकेत है। जब ग्रामीणों का जन-जीवन बाहर से आने वाले पर्यटकों की गतिविधियों से प्रभावित होता है तो उन्हें पर्यटन से होने वाले लाभ भी मिलने चाहिए। वहीं पर्यटकों की सुरक्षा का भी एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। पहलगाम आतंकी हमले ने हमें कई सबक दिए हैं। सबक याद दिलाए हैं कि यदि पर्यटकों की सुरक्षा दांव पर हो तो लापरवाही व चूक के लिये कोई जगह नहीं हो सकती।

'प्रकृति के रूप अनेक'

काजल राजावत (कुहू)
बिधूना, जिला औरैया (उ.प्र.)

इन फूलों में रंग भर के अनेक,
कुदरत ने रचा है कैसा सुदेश...
यहां चलती जब पवन है,
बहता संग इसके मन है...
मुरझाई अगर जो डाल कोई,
फिर पत्ते का न रहा मोल कोई...
पेड़ों की शीतल छाया में,
खलियानों की हरियाली की माया में...
लगता एक अलग सुकून है,
न जाने इस कुदरत में कितना खूबसूरती का जुनून है...
ईश्वर ने इस धरती को कैसा दिया अनुकूल है,
यहां भांति - भांति के दृश्य से देखकर हृदय बड़ा व्याकुल है...
बहते जल की इन तरंगों से,
नदियों के मन की उमंगों से...
जैसे वो बोल पड़ी हो इस चलते नीर के जरिए में,
हसरतें न जाने कितनी छुपी हो इनकी अनकही कड़ियों में...
जब - जब ठहरा है नीर तो बजूद न रहा उस तरंगिनि का,
जैसे मानो साथ छूटा हो जीवन संगिनी का...
पेड़ों में जो ऊंचाई है वो स्पर्श से है परे जहां,
ऐसे ही नहीं इन्हें विशाल कहा जाता है यहां...
इस मिट्टी की सुगंध में है सोने सा मोल मिला,
ये मिट्टी ही है सबके जीवन की आधार शिला!

सदस्यता ग्रहण करने एवं विज्ञापन प्रकाशन हेतु निम्न प्रतिनिधियों से सम्पर्क करें

छिंदवाड़ा (म.प्र.)
रामप्रकाश रघुवंशी
98272-78063
***
नरसिंहपुर (म.प्र.)
नवीन शुक्ला: 89894-36330

मुंगावली (म.प्र.)
भगवानदास चौबे
96854-88453
बलिया (उ.प्र.)
आर.एन. चौबे-94535-77732
पश्चिम बंगाल
राजेश नायक-98831-57482

उड़ीसा
समीर रंजन नायक
70422-31678
***
हापुड़ (उ.प्र.)
मयंक गौड़: 83848-66823

Online मंगाएं साहित्य

मध्यप्रदेश एवं छत्तीसगढ़ में अत्यंत लोकप्रिय हिन्दी मासिक समाचार पत्रिका **मध्य भारत कृषक भारती** द्वारा प्रकाशित कृषि साहित्य अब आप ऑनलाइन भी खरीद सकते हैं। हमारी वेबसाइट **www.krishakbharti.in** पर जाकर **Purchase** को क्लिक करके ऑनलाइन ऑर्डर कर सकते हैं।

वैज्ञानिक/लेखकों के लिए सूचना

प्रत्येक माह की 20 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को प्रिंट एडिशन में स्वीकार किया जाता है तथा 21 से 30 तारीख तक प्राप्त समाचार/लेख/फोटो फीचर को डिजीटल एडिशन में सम्मिलित किया जाना संभव हो सकेगा। लेख में मोबाइल नम्बर होना अनिवार्य है।
-संपादक

मध्य भारत कृषक भारती में प्रकाशित पाठ्य सामग्री में व्यक्त विचार वैज्ञानिकों/लेखकों के हैं। सम्पादक की सहमति अनिवार्य नहीं है। किसी त्रुटि शंका या समाधान के लिये वैज्ञानिकों/लेखकों के पते प्रकाशित किये जाते हैं जिस पर संपर्क किया जा सकता है। सभी प्रकार के विवादों के लिये न्याय क्षेत्र ग्वालियर होगा। सभी पद मानसेवी हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in

मध्य भारत कृषक भारती

हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

सदस्यता एवं विज्ञापन के लिए सम्पर्क करें
0751-4070802

▪ वार्षिक ₹ 400 ▪ द्विवार्षिक ₹ 750 ▪ पंचवार्षिक ₹ 1800

▪ वर्ष 20 ▪ अंक 04 ग्वालियर, जुलाई 2025 मूल्य ₹ 30/-

: सम्पादक मण्डल :

प्रधान सम्पादक

राजू गुर्जर (MJC)

94251-01132

94245-22090

❖

प्रसार/मार्केटिंग टीम

डी.के. बरार

91791-85002, 70247-93010

महेश अहिरवार: 94251-48365

: तकनीकी मार्गदर्शन/वैज्ञानिकगण :

डॉ. पंकज शर्मा
संयुक्त निदेशक, फसल स्वास्थ्य जीव विज्ञान, अनुसंधान स्कूल, आईसीएआर, राष्ट्रीय जैविक स्ट्रैस प्रबंधन संस्थान, बरोंडा, रायपुर (छ.ग.)
मोबा. 8949439288,9414239831

***

डॉ. अर्पिता श्रीवास्तव (Assistant Professor)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय रीवा (म.प्र.)

***

डॉ. आर.के.एस. तोमर (सेवानिवृत्त, कृषि वैज्ञानिक) राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि वि.वि. ग्वालियर (म.प्र.)

***

डॉ. अनिल कुमार सिंह (उद्यान वैज्ञानिक)
कृषि विज्ञान केन्द्र, पीपराकोठी (पूर्वी चम्पारण), डॉ.रा.प्र.के.कृ.वि.वि.,पूसा, समस्तीपुर

प्रो. (डॉ.) के. आर. मौर्य
पूर्व कुलपति, राजेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय पूसा (बिहार), एवं महात्मा ज्योति राव फूले विश्वविद्यालय जयपुर (राजस्थान)

***

डॉ. रंजु कुमारी (स.प्रा. सह कनीय वैज्ञानिक)
पादप प्रजनन एवं अनुवांशिकी विभाग, नालन्दा उद्यान महाविद्यालय, नूरसराय (नालन्दा), बिहार कृषि वि.वि.,सबौर, भागलपुर

***

डॉ. भागचन्द जैन
प्राध्यापक एवं प्रचार अधिकारी कृषि महाविद्यालय, इंदिरा गांधी कृषि विश्वविद्यालय रायपुर (छ.ग.)

***

डॉ. विश्वनाथ सिंह कंसाना
कृषि विज्ञान केन्द्र दतिया (म.प्र.)

डॉ. विनीता सिंह, अध्यक्ष
अनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग AKS विश्वविद्यालय, सतना (म.प्र.)

***

तपस्या तिवारी पीएचडी शोधार्थी, मृदा विज्ञान और कृषि रसायन विज्ञान विभाग, चंद्रशेखर आज़ाद कृषि और प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कानपुर (उ.प्र.)

***

बसंत कुमार दादरवाल
इंस्टीट्यूट ऑफ एग्रीकल्चर साइंस बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी वाराणसी (उ.प्र.)

***

श्रीमती रिया ठाकुर (वैज्ञानिक उद्यानिकी)
कृषि विज्ञान केन्द्र, चंदनगांव, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
मोबाइल: 9907279542

***

डॉ. मोहब्बत सिंह जमरा (असिस्टेंट प्रोफेसर)
पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू, (म.प्र.)

अंदर के पन्नों पर

मध्यप्रदेश/छत्तीसगढ़

- शून्य बजट प्राकृतिक खेती 08
- पोषकता से भरपूर माइक्रोग्रीन सब्जियों का उत्पादन 09
- माइक्रोबायोम इंजीनियरिंग:भारतीय मिट्टी का नया कृषि आयाम 10
- गिर गाय पालन की महत्वता 11
- ड्रैगन फ्रूट की भारत में व्यावसायिक खेती 12
- ग्रीष्मकालीन सोयाबीन में कीटों और रोगों का प्रबंधन 13
- उच्च तापमान और आद्रता में पशुपालन की चुनौतियां... 14
- हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया (गलघोंटू) कारण,... 15
- स्ट्रॉबेरी प्रसंस्करण और मूल्यवर्धित उत्पाद 16
- जैविक उत्पाद इतने महंगे क्यों होते हैं?... 17
- शूकर की गहन आवास प्रणाली 18
- डेयरी क्षेत्र में स्वच्छ दूध उत्पादन 19
- सत्यम कला एवं संस्कृति संग्रहालय सागर... 21
- स्वदेशी उत्पादों को अपनाने से मजबूत... 22
- खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी)-... 23
- दीमक नियंत्रण उपाय 24
- वर्षा ऋतु और पशुपालन: सुरक्षा, स्वच्छता और सतर्कता 25
- मुर्गियो में टीकाकरण - पक्षियों की रोग... 26
- खाद्य जनित परजीवी जन्य जूनोटिक ... 27
- ताड़-ग्रामीण कुटीर उद्योगों का आधार 28

उत्तर प्रदेश

- अमरूद से जेली बनाने की विधि और बाजार... 29
- बायोचार का उपयोग मृदा उर्वरता में सुधार 30
- सोरघम बाइकलर... 31
- वानिकी का महत्व 32
- मेंथा की खेती: एक लाभकारी औषधीय... 33
- बुन्देलखण्ड के पारम्परिक व्यंजन 34
- सस्टेनेबल डेयरी फार्मिंग एक स्थायी डेयरी... 35
- सोयाबीन की वैज्ञानिक खेती 36
- बाजरा के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन 37
- कालानमक किरण चावल का अग्रणी उत्पादन 38
- हाईटेक बागवानी तकनीकी अपनाकर करें... 39
- पूर्वी उत्तर प्रदेश में धान की फसल में ... 40
- लागत कम मुनाफा अधिक,मक्के की बुवाई ... 41
- खरीफ के मौसम की सबसे उपयोगी फसल मूंगफली 42
- कम वर्षा वाले क्षेत्रों में बाजरे की फसल किसानों ... 43
- कद्दूवर्गीय फसलों मे फल मक्खी का जीवनचक्र ... 44

राजस्थान

- वृक्ष बागवानी का अतीत, वर्तमान और भविष्य... 45
- मृदा स्वास्थ्य कार्ड द्वारा पोषक तत्व प्रबंधन 46
- बजरा एवं ज्वार में समन्वित कीट - रोग प्रबंधन... 47
- अजोला: पशुधन के लिए सदाबहार चारा 48
- टमाटर में लगने वाले प्रमुख कीट... 49

हरियाणा

- बाजरा की वैज्ञानिक खेती: हरियाणा के परिप्रेक्ष्य में 50
- सतत् आंतरिक डिज़ाइन: बेहतर कल ... 51
- उन्नत तकनीकी का महत्व जल बचत हेतु 52

बिहार

- क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन द्वारा अनाज ... 53
- साइलेज बनाने की वैज्ञानिक विधि 54

भारत ने विकसित की विश्व की पहली जीनोम संपादित धान की किस्में, जानिए...अब इतना हो जाएगा प्रोडक्शन

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद (आईसीएआर) ने जीनोम एडिटिंग (संपादित) कर धान की दो नई किस्में विकसित की हैं, जिनकी विशेषता कम लागत, कम पानी और कम समय में अधिक उत्पादन है। इससे 30 प्रतिशत तक धान का उत्पादन बढ़ जाएगा और जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों को भी कम करने में मदद मिलेगी।

पहली किस्म का नाम कमला (डीआरआर-100) है और दूसरी का नाम डीएसटी राइस-1 है। कृषि एवं किसान कल्याण मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने रविवार को इसे जारी किया।

भारत जीनोम संपादित धान से चावल की किस्में विकसित करने वाला दुनिया का पहला देश बन गया है। चौहान ने इसे कृषि शोध के क्षेत्र में भारत की ऐतिहासिक उपलब्धि बताया और कहा कि ये किस्में राष्ट्र में दूसरी हरित क्रांति का बिगुल बजाने में अग्रणी भूमिका निभाएंगी। जल्द ही किसानों को उपलब्ध करा दिया जाएगा।

जीनोम तकनीक से तैयार, जलवायु बदलाव से लड़ने में मददगार

देश में विकसित विश्व की पहली दो जीनोम संपादित धान की किस्मों का विकास वैज्ञानिक शोध में नवाचार की शुरुआत है। इस तकनीक के जरिये मूल डीएनए में सूक्ष्म बदलाव कर फसलों की नई किस्म तैयार की जाती है। सामान्य फसलों में ऐसे परिवर्तन को केंद्र सरकार के जैव सुरक्षा नियमों के तहत मंजूरी प्राप्त है। आईसीएआर 2018 से दोनों किस्मों को विकसित करने के लिए काम कर रहा था। इन किस्मों को छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश, ओडिशा, झारखंड, बिहार, उत्तर प्रदेश, बंगाल, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, केरल, कर्नाटक,

तमिलनाडु और महाराष्ट्र की कृषि परिस्थितियों के अनुरूप विकसित किया गया है।

45 लाख टन तक बढ़ेगा उत्पादन, सिंचाई में कमी

इन राज्यों में इन किस्मों की खेती से लगभग 45 लाख टन अधिक धान का उत्पादन होगा। ग्रीन हाउस गैस के उत्सर्जन में 20 प्रतिशत यानी 3,200 टन की कमी आएगी। फसल तैयार होने में 20 दिन कम लगने से लगभग तीन सिंचाई कम लगेगी। जल्दी पकने से अगली फसल की बुआई समय से हो सकेगी।

सांबा महसूरी से विकसित 'कमला', एमटीयू से बना 'पूसा डीएसटी राइस'

कमला को जीनोम तकनीक के जरिये आईसीएआर के भारतीय चावल अनुसंधान संस्थान (हैदराबाद) ने बारीक दाने वाली किस्म सांबा महसूरी (बीपीटी 5204) से विकसित किया है। परिष्कृत बीज में मूल किस्म सांबा महसूरी की तुलना में दानों की संख्या ज्यादा होगी। इसे कम सिंचाई की जरूरत होगी और यह 20 दिन पहले तैयार हो जाएगी। परीक्षण में कमला की औसत उपज प्रति हेक्टेयर 5.3 टन पाई गई है, जो सांबा महसूरी से लगभग 20 प्रतिशत अधिक है। अनुकूल परिस्थितियों में यह 30 प्रतिशत तक बढ़ सकता है।

पूसा डीएसटी राइस-1: दक्षिण भारत के लिए वरदान

दूसरी किस्म पूसा डीएसटी राइस-1 है, जिसे आईसीएआर (पूसा, नई दिल्ली) ने विकसित किया। इसका दाना लंबा और बारीक होगा। दक्षिण भारत में रबी मौसम के लिए यह अत्यधिक उपयुक्त है। यह अपनी मूल किस्म एमटीयू 1010 की तुलना में 20 प्रतिशत अधिक उपज देगी।

कमला किस्म के विकास के लिए डॉ. सत्येंद्र कुमार मंग्राउथिया, डॉ. आरएम सुंदरम, डॉ. आर. अब्दुल फियाज, डॉ. सीएन नीरजा और डॉ. एसवी. साई प्रसाद तथा पूसा डीएसटी राइस के लिए डॉ. विश्वनाथन सी., डॉ. गोपाल कृष्णनन एस, डॉ. संतोष कुमार, डॉ. शिवानी नागर, डॉ. अर्चना वत्स, डॉ. रोहम रे, डॉ. अशोक कुमार सिंह, डॉ. प्रांजल यादव, राकेश सेठ, ज्ञानेंद्र सिंह आदि का बड़ा योगदान है।

01/2023-24

द ग्रेन, राइस एंड ऑयलसीड्स मर्चेंट्स एसोसिएशन ने इस ट्रेंड को भारत के लिए खतरनाक बताया!

कृषि और किसानों के लिए 'दलदल' बन जाएगी दालों की आयात नीति

नई दिल्ली। दुनिया का सबसे बड़ा दलहन उत्पादक होने के बावजूद भारत क्यों बड़े पैमाने पर दाल आयात करने पर मजबूर हैं ऐसा क्यों है कि बढ़ती आबादी की दालों की जरूरत को हमारे किसान पूरा नहीं कर पा रहे हैं। कहीं, सरकारी नीतियों की वजह से तो ऐसा नहीं हो रहा है। द ग्रेन, राइस एंड ऑयलसीड्स मर्चेंट्स एसोसएिशन (ग्रोमा) ने कहा है कि वर्तमान में सरकार चना, अरहर, उड़द आदि का भारी मात्रा में आयात कर रही है, जिसकी वजह से भारतीय किसान इन्हें न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) से कम कीमत पर बेचने को मजबूर हैं। सही दाम न मिलने की वजह से किसान दालों की खेती में रुचि नहीं ले रहे हैं। किसानों में इस बात का विश्वास नहीं है कि उन्हें उचित दाम मिलेगा। जब सही कीमत मिलने का यकीन होगा तभी दालों का उत्पादन बढ़ेगा। एसोसिएशन ने इसी तर्क के साथ केन्द्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान को एक पत्र लिखा है जिसमें कहा गया है कि आयात वाली नीतियों की वजह से भारतीय कृषि क्षेत्र पर बड़ा खतरा है।

ग्रोमा के प्रेसीडेंट भीमजी एस. भानुशाली ने कृषि मंत्री को भेजे गए पत्र में लिखा है कि भारत को दालों के मामले में आत्मनिर्भर न बनने की वजह सरकार की आयात नीति को बताया गया है। बहरहाल, पत्र में लिखा गया है कि साल 2024-25 के बजट में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने पांच वर्षों के भीतर भारत को दालों, विशेषकर अरहर, उड़द, मसूर और चना के मामले में आत्मनिर्भर बनाने की नीति के बारे में बात की थी लेकिन, विदेशों से आयातित सस्ती दालों के कारण ऐसा कर पाना संभव नहीं दिख रहा है। यदि वर्तमान स्थिति जारी रही तो सस्ते आयात के कारण भारत का घरेलू दाल व्यापार समाप्त हो जाएगा। यही नहीं भारत आत्मनिर्भर होने की बजाय 100 फीसदी आयात पर निर्भर हो जाएगा।

एसोसिएशन ने केन्द्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान को लिखा पत्र

उत्पादन घटा, आयात बढ़ा

केन्द्रीय कृषि मंत्रालय की रिपोर्ट ग्रोमा की आशंका पर मुहर लगाती दिख रही है। साल 2021-22 में भारत में दलहन फसलों का उत्पादन 273 लाख मीट्रिक टन तक पहुंच गया था, जो अब 2024-25 में घटकर 252 लाख मीट्रिक टन रह गया है, जबकि मांग बढ़ गई है। नतीजा यह है कि 2021-22 में दालों का जो आयात महज 15 हजार करोड़ रुपए का था वो अब 2024-25 में बढ़कर 46 हजार करोड़ रुपए के पार पहुंच गया है। हम अपने देश के किसानों को दलहन फसलों का एमएसपी तक नहीं दे पा रहे हैं और दूसरे देशों से हजारों करोड़ रुपए में आयात कर रहे हैं, यह सिलसिला आखिर कहां रुकेगा।

कृषक हितग्राहियों को सायबर ठगों से सावधान करने की एडवायजरी जारी

भोपाल। किसानों के कल्याण और कृषि विकास की हितग्राही मूलक योजनाओं के नाम पर सायबर ठगों से सावधान करने के लिये कृषि अभियांत्रिकी द्वारा एडवायजरी जारी की है। संचालक अभियांत्रिकी ने बताया कि कस्टम हायरिंग सेंटर योजना का लाभ दिलाने के नाम पर स्वयं को विभागीय अधिकारी के रूप में अपना परिचय देकर सायबर ठगी करते है। ऐसे प्रकरण सामने आ रहे हैं। उन्होंने कहा कि कृषक हितग्राही योजनाओं के अंतर्गत कस्टम हायरिंग योजना की प्रक्रिया पूर्णतः पारदर्शी है। इस प्रक्रिया में किसी भी हितग्राही से योजना संबंधी संपर्क नहीं किया जाता है। संचालक कृषि अभियांत्रिकी ने हितग्राहियों से अपेक्षा की है कि वे अनजान नंबरों से आने वाले कॉल, वॉट्सऐप कॉल/वीडियो कॉल/अन्य सोशल मीडिया से प्राप्त होने वाले कॉल नबंर जिनमें मुख्यतः 07056847570, 07088438459, 0756847570, 9520711020 हो तो उन्हें बिल्कुल भी न उठाये जाए। अनजान व्यक्तियों पर विश्वास न करें, उनसे किसी भी प्रकार की सूचना व्यक्तिगत जानकारी साझा न करें। हो सकता है वह आपकी जानकारी अन्य माध्यम से प्राप्त कर आपको परेशान करे। यदि कोई व्यक्ति स्वयं को विभागीय अधिकारी बताकर/विभागीय अधिकारी के नाम से भी आपसे बात करे तो एकदम से उसकी बात पर विश्वास न करें।

12/2025-26

केन्द्रीय कृषि मंत्री शिवराज सिंह चौहान के 10 बड़े फैसले, हर जिले में नोडल एजेंसी बनेगी

हफ्ते में 3 दिन खेतों में जाएंगे केवीके वैज्ञानिक

विकसित कृषि संकल्प अभियान को सफल बताते हुए कृषि एवं ग्रामीण विकास मंत्री शिवराज सिंह चौहान ने एक साथ 10 बड़े फैसले ले लिए। प्रेस कॉन्फ्रेंस करके उन्होंने इसकी जानकारी दी। चौहान ने कहा कि इस अभियान से हमें भी काफी कुछ सीखने को मिला। अब इन सबक के आधार पर आगे काम होगा। किसानों से लगातार संपर्क बनाए रखने के लिए चौहान ने कृषि विज्ञान केंद्रों को पहले के मुकाबले ज्यादा एक्टिव रहने को कहा है। उन्होंने कहा कि अब अनिवार्य रूप से कृषि विज्ञान केंद्र के वैज्ञानिक सप्ताह में तीन दिन खेतों में जाएंगे और किसानों से संवाद करेंगे।

कृषि मंत्री ने लिए ये बड़े फैसले

- ज्ञान, अनुसंधान और क्षमताओं के गैप को पाटने की कोशिश करेंगे।
- हर जिले में कृषि विज्ञान केंद्रों को एक टीम के रूप में नोडल एजेंसी बनाएंगे।
- केवीके का एक जैसा स्वरूप होगा। अभियान के बाद भी ये टीम साथ काम करेगी।
- केवीके के वैज्ञानिक अनिवार्य रूप से सप्ताह में तीन दिन खेतों और किसानों के बीच में जाएंगे।
- कृषि मंत्री के तौर पर मैं खुद सप्ताह में दो दिन खेतों में जाऊंगा और किसानों से संवाद करूंगा।
- अफसरों को भी कहा है कि वह खुद फील्ड पर जाएं और किसानों से संवाद करें।
- राष्ट्रीय स्तर पर समन्वय करने के लिए किसानों के लिए काम करने वाले जितने विभाग हैं, उनका एकसाथ काम करना जरूरी है।
- राज्यवार कृषि के लिए आईसीएआर की तरफ से नोडल अफसर तय होगा। जो वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ संबंधित राज्यों की समस्याओं को दूर करने की कोशिश करेगा।
- राज्यों के साथ मिलकर रोडमैप बनाया जाएगा।

तीन बड़े सबक मिले

- सिर्फ दिल्ली में बैठक किसानों के लिए शोध व प्लानिंग नहीं की जा सकती है। इसके लिए जमीन पर उतरना होगा और किसानों से संवाद स्थापित करना होगा।
- कई किसान खुद भी परिस्थिति के अनुसार बेहतरीन शोध और इनोवेशन करते हैं। ऐसे इनोवेशन को बढ़ावा दिया जाएगा।
- ग्राउंड पर किसानों के सामने कई चुनौतियां और समस्याएं हैं। उन्हें समझकर उसे दूर करने की कोशिश करनी होगी।

कृषक डीएपी के स्थान पर एनपीके मिश्रित खाद का करें उपयोग

कटनी। कृषि वैज्ञानिकों द्वारा किसान भाईयों को डीएपी खाद के स्थान पर एनपीके मिश्रित खाद के उपयोग के संबंध में सलाह दी गई है। किसानों को बताया गया है कि वर्तमान में डीएपी उर्वरकों का उपयोग अनुशंसित मात्रा से अधिक हो रहा है, जिससे जमीन की उर्वरा क्षमता धीरे-धीरे कम होती जा रही है। क्योंकि किसानों द्वारा निरंतर अत्यधिक मात्रा में डीएपी उर्वरक का उपयोग किया जा रहा है। कृषि विज्ञान केन्द्र पिपरौंध के कृषि वैज्ञानिक डॉ. आरपी बेन ने बताया कि डीएपी उर्वरक में फास्फोरस तत्व अधिक मात्रा में होने से फास्फोरस एक ही स्थान पर जमीन में पड़ा रहता है और फसल के पौधे इस तत्व का संपूर्ण उपयोग नहीं कर पाते हैं। जमीन में फास्फोरस अधिक मात्रा में संग्रहित होने के कारण जमीन की उर्वरा शक्ति भी धीरे-धीरे कम होती जाती है। इसलिए डीएपी उर्वरक के स्थान पर किसानों द्वारा एनपीके उर्वरक का उपयोग करना अच्छा उपाय है। इससे फसलों का उत्पादन अधिक होने के कारण जमीन भी खराब नहीं होगी। एनपीके के उर्वरक में सभी तत्व समान मात्रा में होने और फसल की आवश्यकतानुसार मात्रा में होने के कारण फसल इसका संपूर्ण उपयोग कर लेती है और जमीन में अतिरिक्त तत्वों का संग्रहण भी नहीं होता। साथ ही फसल की उत्पादकता भी अच्छी होती है।

उज्जैन की कपिला गोशाला को मिला सम्मान

उज्जैन। मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री डॉ मोहन यादव के द्वारा सीएम हाउस में मध्य प्रदेश के सभी गौशाला संचालकों का सम्मेलन किया गया। जिसमें उज्जैन रत्नाखेड़ी स्थित कपिला गौशाला पूरे मध्य प्रदेश में दूसरे नंबर पर आई और 3 लाख रुपए का पुरस्कार भी दिया गया। इस अवसर पर उज्जैन नगर निगम आयुक्त आशीष पाठक, स्वामी अच्युतानंद महाराज, मनोज मौर्य ने मुख्यमंत्री डॉ यादव से पुरुस्कार प्राप्त किया।

अक्षिता एग्रो

राघवेन्द्र सिंह
8959728253

खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां सभी प्रकार के बीज एवं कीटनाशक दवाएं एवं खरपतवार नाशक दवाएं और अधिक उपज की दवाएं उचित दामों पर मिलती हैं

पता: अरैया रोड, आंतरी, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

01/203-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

शून्य बजट प्राकृतिक खेती

✍ **श्रद्धा तारे** पीएच.डी. शोधार्थी, कीट विज्ञान विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर

✍ **श्रद्धा परमार** पीएचडी शोधार्थी, कीट विज्ञान विभाग, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर

✍ **संदीप पाटीदार** पीएच.डी. शोधार्थी, कीट विज्ञान विभाग, महाराणा प्रताप कृषि एवं प्रौद्योगिकी वि.वि., उदयपुर, राजस्थान

✍ **उपासना डिगरसे** पीएच.डी. शोधार्थी, कृषि विस्तार विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर

भारत में कृषि एक प्रमुख आजीविका का साधन है, लेकिन रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और महंगे बीजों पर बढ़ती निर्भरता ने किसानों की लागत को कई गुना बढ़ा दिया है। इसके परिणामस्वरूप अनेक किसान ऋण के बोझ में फँस जाते हैं। इस समस्या के समाधान के रूप में 'शून्य बजट प्राकृतिक खेती' (Zero Budget Natural Farming - ZBNF) एक अत्यंत प्रभावशाली और व्यावहारिक विकल्प के रूप में उभर कर सामने आई है। इस कृषि पद्धति का प्रचार-प्रसार पद्मश्री किसान वैज्ञानिक श्री सुभाष पालेकर जी ने किया है।

ZBNF का मूल सिद्धांत

ZBNF का लक्ष्य बाहरी निवेश को न्यूनतम रखते हुए भूमि की प्राकृतिक उर्वरता को बढ़ाना है। यह पद्धति पूरी तरह से प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करती है और मिट्टी के जीवाणुओं को सक्रिय कर उपज को बेहतर बनाती है। रासायनिक खेती के विपरीत, यह प्रणाली किसानों को आत्मनिर्भर बनाती है और मिट्टी को पुनर्जीवित करने में सहायक होती है।

'शून्य बजट प्राकृतिक खेती' के चार प्रमुख स्तंभ

ZBNF चार जैविक घटकों पर आधारित है, जो इसे प्रभावी और लाभकारी बनाते हैं-

1. **जीवामृत (Jeevamrut):** जीवामृत एक विशेष जैविक घोल है, जिसे गाय का गोबर, गोमूत्र, गुड़, बेसन और मिट्टी मिलाकर तैयार किया जाता है। यह मिट्टी में सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाकर पौधों को आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है। नियमित रूप से जीवामृत डालने से मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है और फसल अधिक स्वास्थ्यप्रद होती है।

2. **बीजामृत (Beejamrut):** बीजामृत एक प्राकृतिक बीज उपचार विधि है, जिसमें गाय के गोबर, गोमूत्र, नींबू का रस, मिट्टी और चूना मिलाया जाता है। इसमें बीजों को डुबोकर रखा जाता है जिससे वे रोग-मुक्त होते हैं और अंकुरण की दर में सुधार होता है। यह किसानों को गुणवत्तापूर्ण और सशक्त बीज प्रदान करने का एक जैविक समाधान है।

3. **मल्चिंग (Mulching / Acchadan):** मल्चिंग एक ऐसी तकनीक है जिसमें खेत की मिट्टी को खरपतवार, पत्तियों, फसल अवशेषों या घास से ढक दिया जाता है। इससे मिट्टी में नमी बनी रहती है, सूक्ष्म जीवों की सक्रियता बढ़ती है और मिट्टी का तापमान नियंत्रित रहता है। यह विधि जल-संरक्षण और मिट्टी के कटाव को रोकने में सहायक होती है।

4. **वापासा (Waaphasa):** वापासा का अर्थ मिट्टी में वायु और नमी का संतुलन बनाए रखना है। ZBNF के अनुसार, मिट्टी में 50% वायु और 50% नमी होनी चाहिए ताकि पौधों की जड़ों का विकास ठीक प्रकार से हो। यह न केवल पानी की बचत करता है, बल्कि फसलों को अत्यधिक सिंचाई से होने वाले नुकसान से भी बचाता है।

ZBNF के लाभ

* **मिट्टी की उर्वरता में वृद्धि:** प्राकृतिक जैविक उत्पादों का प्रयोग मिट्टी में जैविक कार्बन और सूक्ष्मजीवों की संख्या बढ़ाता है, जिससे मिट्टी की उर्वरता लंबे समय तक बनी रहती है।

* **जल संरक्षण:** मल्चिंग और वापासा तकनीकों से मिट्टी में नमी बनी रहती है, जिससे सिंचाई की आवश्यकता कम होती है।

* **रासायनिक प्रदूषण में कमी:** किसानों द्वारा रसायनों के प्रयोग में कमी लाने से मिट्टी, जल और पर्यावरण का प्रदूषण कम होता है।

* स्वास्थ्यवर्धक फसलें: ZBNF से प्राप्त फल-सब्जियां और अन्न रासायनिक अवशेषों से मुक्त होते हैं, जिससे वे स्वास्थ्य के लिए अधिक लाभकारी होते हैं।

* **जलवायु परिवर्तन के प्रति सहनशीलता:** प्राकृतिक खेती से मिट्टी की संरचना सुधरती है और फसलें सूखा, अत्यधिक वर्षा और गर्मी जैसे परिवर्तनों को सहन कर पाती हैं।

सरकार द्वारा मिलने वाली सहायता

परम्परागत कृषि विकास योजना (PKVY) योजना के तहत किसानों को जैविक आदानों जैसे की बीज, जैव-उर्वरक, जैव-कीटनाशक, जैविक खाद, कम्पोस्ट/वर्मी-कम्पोस्ट, वानस्पतिक अर्क आदि के लिए क्रमशः 31000 रुपये प्रति हेक्टेयर प्रति 3 वर्ष एवं 32500 रुपये प्रति हेक्टेयर प्रति 3 वर्ष की वित्तीय सहायता दी जाती है। इसके अलावा किसान उत्पादक संगठन (एफपीओ) के गठन, प्रशिक्षण, प्रमाणीकरण, मूल्यवर्धन और जैविक उत्पादों के विपणन के लिए भी सहायता प्रदान की जाती है। भारतीय प्राकृतिक कृषि पद्धति (बीपीकेपी) के तहत, क्लस्टर निर्माण, प्रशिक्षित कर्मियों द्वारा क्षमता निर्माण और निरंतर सहायता, प्रमाणन और अवशेष विश्लेषण के लिए 3 वर्ष हेतु 12200 रुपये/हेक्टेयर की वित्तीय सहायता प्रदान की जाती है।

सरकार द्वारा राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम (एनपीओपी) प्रमाणीकरण के माध्यम से भागीदारी गारंटी प्रणाली (पीजीएस) प्रमाणीकरण के लिए 3 वर्ष के लिए 2700 रुपये प्रति हेक्टेयर की दर से 8.0 हेक्टेयर या उससे अधिक भूमि वाले किसानों को वित्तीय सहायता भी दी जाती है।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती की चुनौतियाँ और सीमाएँ

प्रारंभिक पैदावार में गिरावट: रासायनिक खेती से ZBNF अपनाने की प्रक्रिया में शुरुआती वर्षों में फसल उत्पादन में हल्की कमी देखी जा सकती है। इससे किसानों को कुछ आर्थिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ सकता है, जब तक कि मिट्टी की उर्वरता पूरी तरह से प्राकृतिक रूप से पुनः विकसित न हो जाए।

* **ज्ञान और प्रशिक्षण की आवश्यकता:** हर किसान को ZBNF तकनीकों की पूरी समझ नहीं होती। इस प्रणाली को सफलतापूर्वक अपनाने के लिए उन्हें विस्तृत प्रशिक्षण, मार्गदर्शन और अनुभव की आवश्यकता होती है।

* **अधिक श्रम की मांग:** ZBNF पूरी तरह से शून्य बजट कृषि नहीं है। इसमें कई तरह की लागतें शामिल होती हैं, जैसे- गायों के रखरखाव, सिंचाई हेतु बिजली और पम्पों की लागत, श्रम आदि। जीवामृत और बीजामृत जैसे जैविक उत्पाद तैयार करना, साथ ही मल्चिंग की प्रक्रिया, काफी मेहनत और समय की मांग करती है। बड़े पैमाने पर खेती करने वाले किसानों के लिए यह अतिरिक्त श्रम एक चुनौती बन सकता है।

बाजार में पहचान और समर्थन की कमी

ZBNF से प्राप्त कृषि उत्पादों को अक्सर बाजार में उचित कीमत और पहचान नहीं मिलती। जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए सरकारी नीति और व्यापारिक संरचना में सुधार की आवश्यकता होती है, ताकि किसानों को उनके उत्पादों का सही मूल्य प्राप्त हो।

इन चुनौतियों के बावजूद, शून्य बजट प्राकृतिक खेती (ZBNF) एक स्थायी और आर्थिक रूप से लाभदायक कृषि प्रणाली साबित हो सकती है यदि इसे सही ढंग से लागू किया जाए और आवश्यक संसाधन उपलब्ध कराए जाएँ।

शून्य बजट प्राकृतिक खेती (ZBNF) न केवल एक कृषि तकनीक है, बल्कि यह एक जीवनशैली और विचारधारा है। यह किसानों को आत्मनिर्भर बनाती है और पर्यावरण के अनुकूल उत्पादन को बढ़ावा देती है। हालांकि, इसके व्यापक प्रसार के लिए वैज्ञानिक अनुसंधान, सरकारी समर्थन और बाजार व्यवस्थाओं में सुधार की आवश्यकता है। यदि ZBNF को सही ढंग से लागू किया जाए, तो यह भारत में कृषि संकट का समाधान बन सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

पोषकता से भरपूर माइक्रोग्रीन सब्जियों का उत्पादन

अभिषेक यादव, मनीषा पाठक
रोहित कुमार यादव
(पीएचडी शोधार्थी उद्यानिकी विभाग, राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर)

माइक्रोग्रीन, जिसे "छोटा पौधा" या "नन्हा साग" भी कहा जाता है, एक प्रकार की सब्जी है जो बीज से उगाई जाती है और 2-3 इंच की लंबाई तक पहुंचने पर काटी जाती है। यह एक लोकप्रिय व्यवसायिक खेती है जिसे घर के अंदर या बाहर, कम जगह में भी किया जा सकता है। माइक्रोग्रीन्स को उनके तीखे स्वाद, आकर्षक रंगों और उच्च पोषक तत्वों के लिए जाना जाता है, जो उन्हें विभिन्न व्यंजनों और सलाद में उपयोग करने के लिए एक उत्कृष्ट विकल्प बनाता है।ये पौधे सामान्यतः 7 से 21 दिनों के अंदर तैयार हो जाते हैं। इनमें विटामिन सी, ई, के, बीटा-कैरोटीन, आयरन और फाइबर जैसे पोषक तत्व प्रचुर मात्रा में होते हैं। यह हाइड्रोपोनिक, ऑर्गेनिक और मिट्टी तीनों तरीकों से उगाए जा सकते हैं। माइक्रोग्रीन खेती में बहुत कम पानी और संसाधनों की आवश्यकता होती है।

खेती का तरीका

माइक्रो-ग्रीन्स की खेती व्यावसायिक रूप से और घर पर दोनों तरीकों से की जा सकती है। इस प्रक्रिया में पौधों को एक उथले कंटेनर में उगाया जाता है, जिसमें मिट्टी या हाइड्रोपोनिक मैट्स जैसे माध्यम भरे होते हैं। स्वस्थ वृद्धि सुनिश्चित करने के लिए पर्याप्त रोशनी, नमी और वेंटिलेशन आवश्यक होते हैं। माइक्रो-ग्रीन्स का छोटा विकास चक्र उन्हें शहरी निवासियों के लिए एक आकर्षक विकल्प बनाता है, जिनके पास सीमित स्थान होता है, क्योंकि इन्हें खिड़की की चौखट या छोटे ट्रे में आसानी से उगाया जा सकता है। इसके अलावा, इनकी तेज़ वृद्धि के कारण साल भर ताज़ी हरी सब्ज़ियों की निरंतर आपूर्ति संभव होती है।

माइक्रो-ग्रीन्स के लिए उपयोग की जाने वाली कुछ सामान्य सब्जियां

1.मूली : मूली के माइक्रो-ग्रीन्स में तीखा और मिर्च जैसा स्वाद होता है। ये जल्दी उगते हैं और व्यंजनों में अच्छा करारापन जोड़ते हैं।

2.सूरजमुखी: सूरजमुखी के माइक्रो-ग्रीन्स में हल्का मिठास वाला और मेवों जैसा स्वाद होता है। ये विटामिन और खनिजों से भरपूर होते हैं।

3.मटर : मटर के माइक्रो-ग्रीन्स में ताज़ा और मीठा स्वाद होता है। ये पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं और प्रोटीन का अच्छा स्रोत माने जाते हैं।

4.ब्रोकोली : ब्रोकोली के माइक्रो-ग्रीन्स में हल्का और थोड़ा कड़वा स्वाद होता है। ये एंटीऑक्सीडेंट्स से भरपूर होते हैं और विटामिन ए और सी का अच्छा स्रोत होते हैं।

5.केल : केल के माइक्रो-ग्रीन्स में तीखा और थोड़ा कड़वा स्वाद होता है। ये पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं और इनमें एंटीऑक्सीडेंट्स की मात्रा काफी अधिक होती है।

पाक उपयोगिता

माइक्रो-ग्रीन्स पाक कला में अनेक संभावनाएँ प्रदान करते हैं, जो विभिन्न व्यंजनों में स्वाद और दृश्य आकर्षण दोनों जोड़ते हैं। इनकी नाज़ुक बनावट और सघन स्वाद इन्हें सलाद, सूप, सैंडविच और मुख्य व्यंजनों को सजाने के लिए आदर्श बनाते हैं। माइक्रो-ग्रीन्स को स्मूदी, जूस और यहाँ तक कि डेज़र्ट्स में भी मिलाया जा सकता है, जिससे किसी भी भोजन में पोषण का बढ़िया संयोग जुड़ता है। दुनियाभर के शेफ्स ने माइक्रो-ग्रीन्स को अपनी पाक कला में रचनात्मकता लाने का एक तरीका मानकर अपनाया है, और वे अनोखे संयोजनों और प्रस्तुतीकरणों के साथ प्रयोग कर रहे हैं।

सब्ज़ियों के माइक्रो-ग्रीन्स की सफल खेती के लिए आवश्यक कारक:

1.उचित बीजों का चयन: ऐसे बीज चुनें जो विशेष रूप से माइक्रो-ग्रीन्स उत्पादन के लिए चिह्नित हों। कुछ लोकप्रिय विकल्पों में ब्रोकोली, मूली, सूरजमुखी और मटर शामिल हैं।

2.ग्रोइंग माध्यम की तैयारी: उगाने के लिए अच्छी गुणवत्ता वाली पॉटिंग मिक्स या नारियल की भूसी (कोको पीट) का उपयोग करें। यह माध्यम जलनिकासी योग्य और प्रदूषण रहित होना चाहिए।

3.पर्याप्त रोशनी देना: माइक्रो-ग्रीन्स की स्वस्थ वृद्धि के लिए तेज़ लेकिन अप्रत्यक्ष रोशनी आवश्यक है। इन्हें धूप वाली खिड़की के पास रखें या ग्रो लाइट्स का उपयोग करें, जिससे प्रतिदिन कम से कम 12-16 घंटे तक उचित रोशनी मिल सके।

4.सही तरीके से सिंचाई करना: माइक्रो-ग्रीन्स को धीरे और समान रूप से पानी दें, जिससे माध्यम नम बना रहे लेकिन बहुत अधिक गीला न हो। अत्यधिक पानी देने से फफूंदी या कवक संक्रमण हो सकता है।

5.उचित वायु संचार बनाए रखना: रोग और फफूंदी से बचाव के लिए अच्छी हवा का प्रवाह जरूरी है। इसके लिए एक छोटा पंखा इस्तेमाल करें या खिड़कियाँ खोलें ताकि पर्याप्त वेंटिलेशन हो सके।

6.सही समय पर कटाई: माइक्रो-ग्रीन्स आमतौर पर बुआई के 1-3 सप्ताह बाद, जब पहले असली पत्ते निकलते हैं, तब कटाई के लिए तैयार होते हैं। कटाई के समय साफ कैंची का उपयोग करें और पौधों को मिट्टी की सतह के ठीक ऊपर से काटें।

माइक्रो-ग्रीन्स में पोषक तत्व प्रबंधन

माइक्रो-ग्रीन्स में पोषक तत्वों का प्रबंधन उनके बेहतर विकास और गुणवत्ता के लिए आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करने की प्रक्रिया है। माइक्रो-ग्रीन्स को अंकुरण के 7 से 14 दिनों के भीतर ही काटा जाता है, जब वे कोमल और युवा अवस्था में होते हैं। चूंकि इनका विकास चक्र बहुत छोटा होता है, इसलिए इनकी पौष्टिक गुणवत्ता बनाए रखने के लिए उचित पोषक तत्व देना अत्यंत आवश्यक होता है।

ग्रोइंग माध्यम

ऐसा ग्रोइंग माध्यम चुनें जो आवश्यक पोषक तत्व, जल धारण क्षमता और उचित जल निकासी प्रदान करे। आम विकल्पों में पीट-आधारित मिक्स, नारियल कोयर (कोको पीट) या सॉइल-लेस हाइड्रोपोनिक सिस्टम शामिल हैं।

उर्वरक प्रबंधन

माइक्रो-ग्रीन्स की वृद्धि तेज़ होने के कारण इन्हें अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। संतुलित, जल में घुलनशील उर्वरक का उपयोग करें जिसमें नाइट्रोजन की मात्रा अधिक हो ताकि पत्तेदार वृद्धि को बढ़ावा मिले। निर्माता के निर्देशों के अनुसार उर्वरक को पानी में घोलकर सिंचाई के समय उपयोग करें।

मुख्य पोषक तत्व

माइक्रो-ग्रीन्स को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, और पोटेशियम जैसे मैक्रोन्यूट्रिएंट्स की आवश्यकता होती है। नाइट्रोजन पत्तियों की वृद्धि में सहायक फॉस्फोरस जड़ों के विकास में सहायक पोटेशियम पौधे की कुल ऊर्जा और शक्ति बढ़ाता है

उर्वरक अनुपात को माइक्रो-ग्रीन की किस्म के अनुसार समायोजित करने की आवश्यकता होती है।

सूक्ष्म पोषक तत्व

माइक्रो-ग्रीन्स को आयरन, मैंगनीज़, जिंक, कॉपर और बोरॉन जैसे सूक्ष्म पोषक तत्वों की भी आवश्यकता होती है। ये आमतौर पर माध्यम में अल्प मात्रा में होते हैं या इन्हें माइक्रोन्यूट्रिएंट उर्वरक से पूरित किया जा सकता है।

पी.एच. एवं ई.सी. स्तर

पोषक तत्वों की सही उपलब्धता के लिए ग्रोइंग माध्यम का पी एच स्तर मानक 5.5 से 6.5 के बीच बनाए रखें। साथ ही, इलेक्ट्रिकल कंडक्टिविटी की निगरानी करें ताकि पोषक तत्वों का अवशोषण सही ढंग से हो और असंतुलन न उत्पन्न हो।

सिंचाई

माइक्रो-ग्रीन्स को लगातार और पर्याप्त नमी प्रदान करें। बहुत अधिक या बहुत कम पानी देने से पोषक तत्वों की कमी या अधिकता हो सकती है। जलभराव से बचने के लिए उचित जल निकासी सुनिश्चित करें।

ईरम खान बीएससी कृषि स्नातक
मेडी- कैप्स यूनिवर्सिटी इंदौर (म.प्र.)

माइक्रोबायोम इंजीनियरिंग: भारतीय मिट्टी का नया कृषि आयाम

माइक्रोबायोम शब्द उस सूक्ष्मजीवी समुदाय को दर्शाता है जो किसी भी प्राकृतिक वातावरण , जैसे कि मिट्टी, जल, पौधों या मानव शरीर में रहता है। मृदा माइक्रोबायोम में मुख्य रूप से बैक्टीरिया, कवक (फफूँद), वायरस, आर्किया और प्रोटोजोआ शामिल होते हैं।

आज के समय में जब खेती लगातार रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों पर निर्भर होती जा रही है, तब ऐसी तकनीकों की आवश्यकता है जो खेती को टिकाऊ, लाभकारी और पर्यावरण के अनुकूल बना सकें। माइक्रोबायोम इंजीनियरिंग एक ऐसी ही आधुनिक जैविक तकनीक है, जो खेत की मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीवों को समझकर और उनके साथ समन्वय बनाकर खेती को नया आयाम दे सकती है। खास बात यह है कि भारत जैसे देश, जहाँ मिट्टी और जलवायु की विविधता अत्यधिक है, वहाँ यह तकनीक विशेष रूप से उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

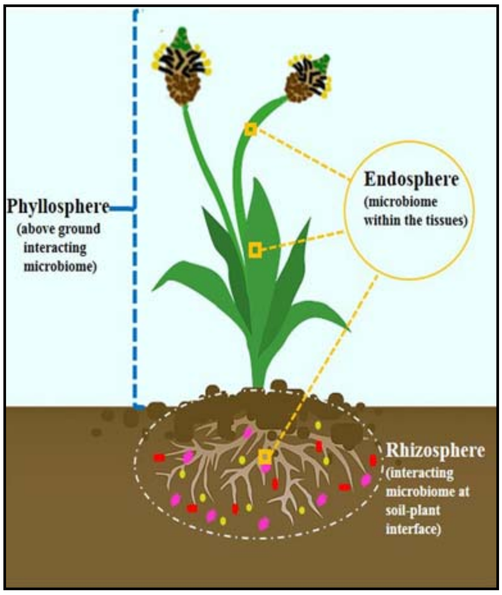

माइक्रोबायोम इंजीनियरिंग एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसमें लाभदायक सूक्ष्मजीवों की पहचान की जाती है और उन्हें इस तरह व्यवस्थित किया जाता है कि वे मिट्टी में फसलों के विकास में अधिकतम सहयोग दे सकें। इसमें विशेष प्रकार के बैक्टीरिया या फफूंद मिट्टी में मिलाए जाते हैं जो पौधों को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटैशियम जैसी पोषक तत्वों को बेहतर ढंग से अवशोषित करने में मदद करते हैं। साथ ही ये सूक्ष्मजीव फसलों को कीटों और बीमारियों से भी सुरक्षा प्रदान करते हैं। यह एक ऐसी उन्नत कृषि पद्धति है जिसमें वैज्ञानिक तरीकों से मिट्टी में मौजूद सूक्ष्मजीवों का चयन, संशोधन और पुनःस्थापन किया जाता है ताकि वे फसलों की वृद्धि, सुरक्षा और उत्पादन को बेहतर बना सकें। इस प्रक्रिया में निम्न चरण होते हैं,

- मिट्टी का नमूना विश्लेषण, सूक्ष्मजीव विविधता, पोषण स्तर और पीएच मान की जाँच।
- लाभकारी सूक्ष्मजीवों की पहचान, जैसे नाइट्रोजन-स्थिर बैक्टीरिया, फॉस्फेट घुलनशील जीवाणु, जैविक कीटनाशक आदि।
- लैब में इन जीवों की वृद्धि और पैकेजिंग।
- खेत में इनका नियंत्रित उपयोग।

संभावित लाभ

- **फसल उत्पादकता में वृद्धि** - मिट्टी अधिक पोषक बनती है, जिससे पौधों की वृद्धि तीव्र होती है।
- **रसायनों की निर्भरता में कमी** -सूक्ष्मजीव नाइट्रोजन, फॉस्फोरस आदि पोषक तत्व उपलब्ध कराते हैं।
- **मिट्टी का स्वास्थ्य बेहतर-** जैविक गतिविधियाँ मिट्टी की संरचना और जलधारण क्षमता को सुधारती हैं।
- पर्यावरण संरक्षण-कीटनाशकों और रसायनों का उपयोग घटने से जैव विविधता और जल स्रोतों की सुरक्षा होती है।
- किसानों की लागत घटती है और आय में बढ़ोतरी होती है।
- माइक्रोबायोम इंजीनियरिंग आज की नहीं, बल्कि कल की जरूरत है। यह न केवल भारतीय कृषि को रसायन-मुक्त बना सकती है, बल्कि किसानों को सशक्त, पर्यावरण को सुरक्षित और मिट्टी को फिर से जिंदा कर सकती है।

प्रदेश की औद्योगिक विकास दर को गति देने के लिए राज्य सरकार प्रतिबद्ध: सीएम

इन्दौर। मुख्यमंत्री डॉ. मोहन यादव ने कहा है कि प्रदेश की कृषि विकास दर के समान औद्योगिक विकास दर को आगे बढ़ाने के लिए के लिए राज्य सरकार कृत संकल्पित है। इसी उद्देश्य से उद्योग व्यापार और निवेश गतिविधियों को प्रोत्साहित करने के लिए प्रदेश में क्षेत्रीय स्तर पर समिट आयोजित करने और देश-विदेश के प्रमुख औद्योगिक व्यापारिक केंद्रों से संपर्क का क्रम जारी है। राज्य सरकार की इस पहल का प्रदेश को लाभ भी मिल रहा है। इसी क्रम में सूरत में 'मध्य प्रदेश में निवेश के अवसरों पर इंटरएक्टिव सेशन' रखा गया है। यह आयोजन उद्योग एवं रोजगार वर्ष 2025 अभियान की श्रृंखला में बेंगलुरु के बाद दूसरा बड़ा संवाद है।

जैन बीज भण्डार एवं पशु आहार
मैन बाजार, चीनोर रोड,
छीमक जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
प्रो. मुकेश जैन, मोबाइल: 9977638510
04/2023-24

गिर गाय पालन की महत्वता

डॉ. अलका सुमन, डॉ. आदेश कुमार
योगिता पांडेय, डिम्पी सिंह, शशि टेकाम
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय महू (म.प्र.)

गिर गाय भारत की एक प्रमुख देशी गाय नस्ल है, जो मुख्य रूप से गुजरात के सौराष्ट्र क्षेत्र में पाई जाती है। यह नस्ल अपनी दुग्ध उत्पादन क्षमता, सहनशीलता और पोषण गुणों के कारण विशेष रूप से महत्वपूर्ण मानी जाती है। गिर गाय का पालन न केवल आर्थिक दृष्टि से लाभदायक है, बल्कि यह पर्यावरण और स्वास्थ्य की दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी है।

1. दुग्ध उत्पादन में श्रेष्ठता

गिर गाय का दूध अत्यधिक पौष्टिक होता है और इसमें 2 प्रकार का केसिन प्रोटीन पाया जाता है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए लाभकारी माना जाता है। इसका दूध पचाने में आसान होता है और बच्चों व बुजुर्गों के लिए विशेष रूप से उपयुक्त है।

2. आय का अच्छा स्रोत

गिर गाय की दुग्ध क्षमता अधिक होने के कारण इसका पालन किसानों और पशुपालकों के लिए एक स्थायी आय का स्रोत बन सकता है। शुद्ध नस्ल की गिर गाय का बाजार मूल्य भी अधिक होता है, जिससे इसे पालना आर्थिक रूप से लाभकारी बनता है।

3. प्राकृतिक खेती में सहायक

गिर गाय का गोबर और मूत्र जैविक खाद और कीटनाशक बनाने में प्रयोग किया जाता है, जिससे रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता कम होती है। यह प्राकृतिक खेती को बढ़ावा देता है और भूमि की उपजाऊता बनाए रखता है।

4. जलवायु के प्रति सहनशीलता

गिर गाय गर्म और शुष्क जलवायु में भी अच्छी तरह अनुकूलित हो जाती है। यह रोगों के प्रति भी अधिक प्रतिरोधक क्षमता रखती है, जिससे इसके पालन में जोखिम कम होता है।

5. भारतीय नस्लों का संरक्षण

गिर गाय जैसी देशी नस्लों का पालन भारतीय जैव विविधता और पशु संपदा के संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह हमारी सांस्कृतिक विरासत का भी एक हिस्सा है, जिसे संरक्षित करना आवश्यक है। गिर गाय पालन न केवल पोषण और स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभकारी है, बल्कि यह किसानों की आय, जैविक खेती और देशी नस्लों के संरक्षण के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। वर्तमान समय में जब जैविक उत्पादों की मांग बढ़ रही है, गिर गाय पालन एक सुनहरा अवसर बन सकता है।

01/2023-24

ड्रैगन फ्रूट की भारत में व्यावसायिक खेती

डॉ. नेहा द्विवेदी असिस्टेंट प्रोफेसर (गेस्ट फैकल्टी), कृषि अर्थशास्त्र विभाग, आरवीएसकेवीवी- कृषि महाविद्यालय, इंदौर

डॉ. अंकिता साहू असिस्टेंट प्रोफेसर, कृषि अर्थशास्त्र विभाग, आरवीएसकेवीवी- कृषि महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

ड्रैगन फ्रूट भारत में एक नया परिचय है और इसकी व्यावसायिक खेती जोर पकड़ रही है। भारत में कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, गुजरात, छत्तीसगढ़, ओडिशा, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, मिजोरम और नागालैंड के किसानों ने इसकी खेती शुरू कर दी है। 2020 में भारत में ड्रैगन फ्रूट की खेती के तहत कुल क्षेत्रफल 3,000 हेक्टेयर से अधिक है, जो घरेलू मांग को पूरा करने में सक्षम नहीं है, इसलिए भारतीय बाजार में उपलब्ध अधिकांश ड्रैगन फ्रूट थाईलैंड, मलेशिया, वियतनाम और श्रीलंका से आयात किए जाते हैं।

सामान्य नामः लाल पिताया, कमलम, पिताया रोजा ।

सामान्य आवश्यकताएँ: यह फसल कठोर होती है और फूल और फल के लिए अनुकूल किसी भी प्रकार की जलवायु स्थिति और अच्छी जल निकासी वाली मिट्टी की स्थिति में जीवित रह सकती है। ड्रैगन फ्रूट की रिपोर्ट की गई वर्षा की आवश्यकता 1145- 2540 मिमी/वर्ष है। ड्रैगन फ्रूट का पौधा 20-29ºC के औसत तापमान के साथ शुष्क उष्णकटिबंधीय जलवायु को पसंद करता है, लेकिन 38-40ºC के तापमान और थोड़े समय के लिए 0ºC तक के तापमान को सहन कर सकता है।

प्रवर्धन

ड्रैगन फ्रूट के पौधे तने की कटिंग के माध्यम से आसानी से बढ़ सकते हैं। आम तौर पर रोपण के लिए 20-25 सेमी लंबे तने की कटिंग का उपयोग किया जाता है। कटिंग को रोपण से एक-दो दिन पहले तैयार किया जाना चाहिए और कट से निकलने वाले लेटेक्स को सूखने दिया जाना चाहिए। कटिंग को फलने के मौसम के बाद कुलीन मातृ पौधों से लिया जाना चाहिए। रोगों को रोकने के लिए कटिंग को कवकनाशी से उपचारित किया जाना चाहिए। इन कटिंग को 12 × 30 सेमी आकार के पॉलीथीन बैग में लगाया जाता है, जिसमें मिट्टी, खेत की खाद और रेत का 1:1:1 अनुपात भरा होता है। बैग को जड़ जमाने के लिए छायादार जगह पर रखा जाता है। कटिंग को सड़ने से बचाने के लिए अधिक नमी से बचना चाहिए। ये कटिंग बहुत अच्छी तरह से जड़ें जमाती हैं और 5-6 महीने में रोपण के लिए तैयार हो जाती हैं।

रोपण

ड्रैगन फ्रूट की खेती रोपण के लिए पूर्ण सूर्यप्रकाश वाले खुले क्षेत्र को पसंद करती है। आम तौर पर सिंगल पोस्ट सिस्टम में रोपण 3×3 मीटर की दूरी पर किया जाता है। पोल की सिंगल पोस्ट ऊर्ध्वाधर ऊंचाई 1.5 मीटर से 2 मीटर होती है जिस बिंदु पर उन्हें शाखा लगाने और नीचे लटकने की अनुमति होती है। रोपण का मौसम आम तौर पर ग्रीष्मकालीन मानसून (जून-अगस्त) होता है। जुलाई-अक्टूबर में बाजार गुणवत्ता वाले फलों की 6-8 फ्लश में फलन होता है।

कटाई: भारत में ड्रैगन फ्रूट की कटाई का सबसे आदर्श समय जून-अक्टूबर है। पौधे रोपण की तिथि से 12-15 महीने बाद उपज देना शुरू कर देते हैं। फूल आने के 25-35 दिन बाद ड्रैगन फ्रूट कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। आमतौर पर अपरिपक्व फल की बाहरी चमकीली हरी त्वचा पकने की प्रक्रिया के अंत में धीरे-धीरे लाल हो जाती है। रंग बदलने के सात दिन बाद कटाई का सही समय पाया गया। कटाई के लिए केवल पके हुए फलों का चयन किया जाना चाहिए ताकि सप्ताह के दौरान दो बार कटाई की जा सके। फलों को बिना नुकसान पहुँचाए प्रूनिंग चाकू का उपयोग करके मैन्युअल रूप से काटा जाता है। फिर, काटे गए फलों को पैकेजिंग या भंडारण कक्ष में स्थानांतरित करने से पहले तुरंत छाया में रखना चाहिए। ताज़े काटे गए ड्रैगन फ्रूट की शेल्फ लाइफ परिवेश की स्थितियों में 3-4 दिनों के बीच बदलती रहती है। कटाई के 7-8 दिनों के बाद फलों का वजन कम होने लगता है और वे सिकुड़ने लगते हैं। फलों को आम तौर पर 25-30 दिनों के लिए 8ºC पर छिद्रित बैग में संग्रहित किया जाता है। कभी-कभी 15-20ºC का भंडारण तापमान और 85-90ºC की सापेक्ष आर्द्रता ताजा बाजार डिलीवरी के लिए बेहतर होती है। 90-98% की सापेक्ष आर्द्रता के साथ 7-10ºC पर भंडारण के दौरान शेल्फ लाइफ 45 दिनों तक बढ़ सकती है। पीली किस्मों को 10ºC तापमान पर 28-30 दिनों तक संग्रहीत किया जा सकता है।

प्रसंस्करण

ड्रैगन फ्रूट पल्प और जूस में 1.5 प्रतिशत पेक्टिन, 55 प्रतिशत चीनी और 0.9 प्रतिशत साइट्रिक एसिड घोल मिलाकर पीने से ड्रैगन फ्रूट जैम और जेली के रंग के साथ-साथ अन्य ऑर्गेनोलेप्टिक विशेषताओं में भी सुधार हुआ। ड्रैगन फ्रूट आरटीएस पेय के मामले में 14 प्रतिशत पल्प, 12 प्रतिशत चीनी और 0.9% सबसे उपयुक्त पाया गया। तैयार उत्पाद ऑर्गेनोलेप्टिक रूप से स्वीकार्य पाया गया। तैयार उत्पादों को माइक्रोबियल खराब होने या गुणवत्ता में किसी भी महत्वपूर्ण नुकसान के बिना परिवेश भंडारण की स्थिति में तीन महीने से अधिक की अवधि के लिए संग्रहीत किया जा सकता है

सरकार से सहायता

बागवानी के एकीकृत विकास के लिए मिशन (MIDH) इस फसल की खेती का समर्थन करता है। MIDH के तहत क्षेत्र विस्तार का लक्ष्य 5 वर्षों में 50,000 हेक्टेयर है। इस फल की खेती के लिए विशेषज्ञ मार्गदर्शन ICAR-केंद्रीय द्वीप कृषि अनुसंधान संस्थान, पोर्ट-ब्लेयर, अंडमान और निकोबार द्वीप समूह और बागवानी अनुसंधान संस्थान (IIHR), बेंगलुरु, कर्नाटक के हिरेहल्ली, बेंगलुरु, कर्नाटक से प्राप्त किया जा सकता है।

अर्थशास्त्र

ड्रैगन फ्रूट रोपण के बाद पहले वर्ष में आर्थिक उत्पादन के साथ तेजी से लाभ प्रदान करता है और 3-4 वर्षों में पूर्ण उत्पादन प्राप्त होता है। फसल की जीवन प्रत्याशा लगभग 20 वर्ष है। प्रति वर्ष प्रति पिलर (3-4 पौधे) औसत उपज लगभग 15 किलोग्राम है। फलों का वजन 300 से 500 ग्राम तक होता है। रोपण के 2 वर्ष बाद औसत आर्थिक उपज 10 टन प्रति एकड़ है। वर्तमान में बाजार दर 100 रुपये प्रति किलोग्राम फल है, इसलिए प्रति वर्ष फलों की बिक्री से होने वाली आय 10,00,000 रुपये है। लाभ लागत अनुपात (बीसीआर) हैः 2.58।

प्रो. बालिक दास राय
बन्टी राय
98276-11495
88715-18885
मैं. माँ उर्वरक केन्द्र

अमित राय
रसायनिक एवं जैविक खाद बीज एवं दवाई के विक्रेता

पताः भितरवार रोड, डबरा (म.प्र.)
03/2023-24

ग्रीष्मकालीन सोयाबीन में कीटों और रोगों का प्रबंधन

डॉ. द्वारका सहायक प्रोफेसर (अतिथि), कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि वि.वि., कृषि महाविद्यालय, लक्ष्मीपुर, पन्ना

डॉ. एस.जी. घुगल सहायक प्रोफेसर (अतिथि), कीटशास्त्र विभाग, जवाहरलाल नेहरू कृषि वि.वि., कृषि महाविद्यालय पवारखेड़ा

शोभाराम ठाकुर वरिष्ठ तकनीकी अधिकारी, कीटशास्त्र विभाग, तिल एवं रामतिल परियोजना, जनेकृविवि, टीकमगढ़ कॉलेज

निशा चढ़ार एम.एससी.(बॉटनी), महाराजा छत्रसाल बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, शासकीय स्नातकोत्तर उत्कृष्ट महाविद्यालय, टीकमगढ़

ग्रीष्मकालीन सोयाबीन में प्रमुख कीट जैसे सोयाबीन माइट, कॉकरोच, बीन फ्लाई और लेपिडोप्टेरा पौधे की पत्तियाँ, तने और फलियों को नुकसान पहुँचाते हैं, जबकि रोगों में फफूंदी रोग, झुलसा रोग, फोम रोग और वायलेट रोप मुख्य रूप से पत्तियाँ, तने और जड़ों को प्रभावित करते हैं। इन कीटों और रोगों से फसल की रक्षा के लिए प्रतिरोधी किस्मों का चयन, बीज का उपचार, खेत की सफाई, फसल चक्र का पालन, नियमित निरीक्षण, जैविक नियंत्रण जैसे बीटी का उपयोग तथा आवश्यकतानुसार नियंत्रित रासायनिक छिड़काव महत्वपूर्ण उपाय हैं, जो फसल की पैदावार और गुणवत्ता को सुरक्षित बनाए रखते हैं।

परिचयः ग्रीष्मकालीन सोयाबीन एक महत्वपूर्ण दलहनी फसल है जो प्रोटीन और तेल के लिए व्यापक रूप से उगाई जाती है। हालांकि, इस फसल की पैदावार कई प्रकार के कीट और रोगों के कारण प्रभावित हो सकती है। कीट जैसे माइट, कॉकरोच, बीन फ्लाई और अन्य कीट सोयाबीन के पत्ते, तने और फलियों को नुकसान पहुंचाते हैं, वहीं रोग जैसे फफूंदी, झुलसा, फोम रोग और वायलेट रोप पौधे के विभिन्न अंगों को संक्रमित कर फसल को कमजोर करते हैं। इसलिए, ग्रीष्मकालीन सोयाबीन की उन्नत पैदावार और गुणवत्ता सुनिश्चित करने के लिए इन कीटों और रोगों की सही पहचान, निरोध और नियंत्रण आवश्यक है।

ग्रीष्मकालीन सोयाबीन में प्रमुख कीट -

1. सोयाबीन माईट (टेट्रानाइकस प्रजाति)

लक्षण- पत्तियों पर सफेद-पीले रंग के धब्बे बनते हैं, पत्तियाँ सिकुड़ जाती हैं और झड़ने लगती हैं।

क्षति- माइट पौधे की पत्तियों से रस चूसकर पौधे कमजोर कर देता है, जिससे फसल की पैदावार घटती है।

सुरक्षा- गर्मी के मौसम में नियमित निरीक्षण। पौधों को अधिमात्रा न दें जिससे माइट का प्रकोप बढ़ता है।

आवश्यक होने पर माइटिसाईड का छिड़काव करें।

2. सोयाबीन कैटरपिलर (स्पोडोप्टेरा लिटूरा)

लक्षण- कीट पत्तियों को खा जाता है, पत्तियाँ छेददार हो जाती हैं।

क्षति- पत्तियों की कटाई से पौधा कमजोर पड़ जाता है और उत्पादन कम हो जाता है।

सुरक्षा- नीम आधारित जैविक कीटनाशकों का उपयोग। हफ्ते में 1-2 बार निरीक्षण करें। कीटों के अंडे और लार्वा को हाथ से हटाना।

3. सोयाबीन बीन फ्लाई (मेलेनोग्रोमाइजा सोजी)

लक्षण- पौधे के तनों में सुराख बनना, पौधे झुक जाते हैं।

क्षति- तने की नालीदार चोट से पौधा कमजोर हो जाता है और सूख जाता है।

सुरक्षा- संक्रमित पौधों को जलाना। प्रतिरोधी किस्मों का चयन। बालू मिट्टी का उपयोग तने की सुरक्षा के लिए।

4. सोयाबीन लेपिडोप्टेरा (हेलिकोवर्पा अर्मिजेरा)

लक्षण- फल, फूल, और पत्तियाँ कीट द्वारा क्षतिग्रस्त होती हैं।

क्षति- फसल की मात्रा और गुणवत्ता दोनों प्रभावित होती है।

सुरक्षा- फसल चक्र अपनाना। कीटनाशकों का संतुलित और नियंत्रित उपयोग। जैविक नियंत्रण जैसे बीटी का छिड़काव।

ग्रीष्मकालीन सोयाबीन में प्रमुख रोग

1. पाउडरी फफूंदी रोग

लक्षण- पत्तियों और तनों पर सफेद, पाउडर जैसा कवक जमना।

क्षति- पत्तियाँ पीली होकर झड़ने लगती हैं, जिससे पौधे कमजोर होते हैं।

सुरक्षा- रोगप्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग। बीज का उपचार फफूंदी नाशक दवाओं से करें। रोगग्रस्त पौधों को तुरंत हटाएं।

2. झुलसा रोग

लक्षण- पत्तियों, फलियों और तनों पर भूरे-काले धब्बे। क्षति-पौधों की वृद्धि रुक जाती है, फलियां सूख जाती हैं।

सुरक्षा- बीज का उपचार कवकनाशी दवाओं से। फसल अवशेषों को जलाना। प्रतिरोधी किस्मों का चयन।

3. फ्रॉग आई लीफ स्पॉट रोग

लक्षण- पत्तियों पर गोलाकार भूरे रंग के धब्बे जिनके किनारे काले होते हैं।

क्षति- पत्तियाँ झड़ने लगती हैं और फसल कम होती है।

सुरक्षा- रोगनाशक दवाओं का छिड़काव। उचित दूरी पर पौधे लगाना जिससे वायु संचार अच्छा रहे। फसल चक्र अपनाना।

4. जड़ सड़न

लक्षण- पौधे के जड़ में सड़न, पौधा झुक जाता है और धीरे-धीरे सूख जाता है।

क्षति- पौधों की संख्या घट जाती है जिससे उत्पादन कम होता है।

सुरक्षा- खेत का जल निकासी उचित रखें। बीज का उपचार करें। प्रभावित पौधों को निकालकर नष्ट करें।

सोयाबीन में कीट और रोग से सुरक्षा के सामान्य उपाय

प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग- जो किस्में कीट और रोगों के प्रति अधिक प्रतिरोधी हों, उनका चयन करना चाहिए।

साफ-सफाई- फसल के बाद खेत की साफ-सफाई करना ताकि रोगजनक और कीट न फैलें।

बीज उपचार- बीज को जैविक या रासायनिक कीटनाशकों और रोगनाशकों से उपचारित करें।

फसल चक्र अपनाना- सोयाबीन के बाद ऐसी फसल लगाएं जो कीट और रोगों का फैलाव कम करें।

नियमित निरीक्षण- खेत का समय-समय पर निरीक्षण करें ताकि कीटों और रोगों का जल्दी पता चल सके।

जैविक नियंत्रण- जैसे कि जीवाणु, प्राकृतिक शिकारी और परजीवी का उपयोग करें।

रासायनिक नियंत्रण- आवश्यकता अनुसार उचित कीटनाशकों और रोगनाशकों का नियंत्रित छिड़काव करें।

निष्कर्षः सभी प्रकार के कीट और रोग ग्रीष्मकालीन सोयाबीन की फसल को प्रभावित कर उसकी उत्पादन क्षमता को कम कर देते हैं। इसलिए, सोयाबीन की फसल में कीटों और रोगों का सही समय पर नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है। प्रतिरोधी किस्मों का चयन, उचित बीज उपचार, खेत की सफाई, नियमित निरीक्षण, जैविक और रासायनिक नियंत्रण के संतुलित उपयोग से इन समस्याओं को प्रभावी रूप से कम किया जा सकता है। ऐसा प्रबंध अपनाकर न केवल फसल की सुरक्षा सुनिश्चित होती है बल्कि किसानों की आय में भी वृद्धि होती है, जिससे स्थायी और सफल खेती संभव हो पाती है।

उच्च तापमान और आद्रता में पशुपालन की चुनौतियाँ और समाधान

डॉ. मारिया खान जूनियर वेट्नेरी ऑफिसर, संवेदना डेवलपमेंट सोसायटी, बी.एफ.आई.एल. - सी.एस.आर., जिला-रायसेन (म.प्र.)

डॉ. असद खान पी.एच.डी. शोधार्थी, भा.कृ.अनु.प.-राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

गर्मी का मौसम आते ही न केवल इंसानों के लिए बल्कि पशुओं के लिए भी कई समस्याएँ खड़ी हो जाती हैं। जैसे-जैसे तापमान बढ़ता है, वैसे-वैसे पशुओं पर इसका प्रतिकूल प्रभाव भी गहराता है। अत्यधिक तापमान, उमस भरी आद्रता और लू जैसी स्थितियाँ पशुओं के स्वास्थ्य, उत्पादन और प्रजनन क्षमता पर बुरा असर डालती हैं। ऐसे में पालतू पशुओं की समुचित देखभाल अत्यंत आवश्यक हो जाती है।

1.ग्रीष्म अथवा ऊष्मीय तनाव (हीट स्ट्रेस) से पशुओं की रक्षा कैसे करें?

ग्रीष्म तनाव तब होता है जब शरीर से बाहर की गर्मी और शरीर की अंदरूनी गर्मी का संतुलन बिगड़ जाता है। गाय, भैंस, भेड़ एवं बकरियों में श्वेद (पसीना) बहा कर शरीर को ठंडा रखने की प्रक्रिया अन्य स्तनधारी जीवों कि तुलना में अपेक्षाकृत कम प्रभावी होती है इसलिए वे जल्दी से गर्मी सहन नहीं कर पाते। विशेषकर भैंस में मोटी चमड़ी, कम श्वेद ग्रंथियां एवं काले गहरे रंग की त्वचा के कारण वह अत्यधिक ऊष्मा का अवशोषण करती है तथा इस प्रकार वह ऊष्मीय तनाव के लिए अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील होती है।

पशुओं में ग्रीष्म तनाव के लक्षण

* भारी सांस लेना * अधिक लार गिरना
* दूध उत्पादन में गिरावट * खाना कम करना
* थकान या सुस्ती * शरीरिक तापमान में वृद्धि

बचाव के उपाय

छायादार आश्रय: पशुओं को पेड़, शेड या टीन शेड की छाया में रखें। शेड का ऊँचाई उचित हो और उसमें हवा का आवागमन अच्छा हो।

ठंडा पानी: बार-बार ताजा और ठंडा पानी उपलब्ध कराएं। पानी की कमी से हीट स्ट्रेस और ज्यादा बढ़ जाता है।

नहलाना: दिन में एक-दो बार ठंडे पानी से पशुओं को नहलाना बहुत फायदेमंद होता है। भैंसों को ऊष्मीय तनाव से बचाने के लिए प्राकृतिक या कृत्रिम रूप से निर्मित तालाबों में उनके लोटने की व्यवस्था करें।

मौसम के अनुसार चारा: सूखे व गर्म चारे की बजाय हरा चारा दें जिसमें नमी की मात्रा ज्यादा हो।

2.उच्च आर्द्रता और संक्रमण का खतरा

गर्मी के मौसम में जब आद्रता बढ़ जाती है, तो जीवाणु (बैक्टीरिया), कवक (फंगस) और विषाणु (वायरस) के संक्रमण का खतरा भी बढ़ जाता है। यह पशुओं के खुर, त्वचा और थनों को प्रभावित कर सकता है।

बचाव के उपाय

* पशुओं के रहने के स्थान को सूखा और साफ रखें।
* नियमित रूप से बिछावन बदलें और कीटनाशक चूना छिड़कें।
* थनों की सफाई पर विशेष ध्यान दें, जिससे थनैला (मास्टाइटिस) जैसी बीमारी न हो।

3.गर्मी के मौसम में दूध उत्पादन पर प्रभाव

अत्यधिक गर्मी और तनाव से पशु कम खाना खाते हैं, जिससे उनकी शारीरिक ऊर्जा का स्तर कम हो जाता है और दूध की मात्रा घट जाती है।

क्या करें?

* संतुलित आहार दें जिसमें खनिज मिश्रण और नमक की ढेली (साल्ट लिक) भी शामिल हो।
* पशुओं को दिन में कम-से-कम दो बार खिलाएं, एक बार सुबह ठंडे समय में और एक बार शाम को।
* यदि संभव हो, तो पंखे या कूलर का उपयोग करें, विशेषकर दूध देने वाली गायों और भैंसों के लिए।

4. प्रजनन पर प्रभाव और उपाय

* गर्मी के मौसम में पशुओं का प्रजनन चक्र भी प्रभावित हो सकता है। ऊष्मीय तनाव से गायें समय पर हीट में नहीं आतीं, या फिर गर्भधारण नहीं हो पाता।

सुझाव

* सुबह के समय कृत्रिम गर्भाधान (ए.आई.) करें जब तापमान कम होता है।
* गर्मियों में प्रजनन की योजना सीमित रखें और मानसून या सर्दी में अधिक क्रियाशीलता बढ़ाएँ।

निष्कर्ष

गर्मी और आद्रता का मौसम पशुपालकों के लिए चुनौतीपूर्ण होता है, लेकिन थोड़ी सी सावधानी और देखभाल से इन चुनौतियों का सामना किया जा सकता है। यदि पशु स्वस्थ रहेंगे, तो उनका उत्पादन और प्रजनन भी बेहतर रहेगा। अतः इस भीषण गर्मी में पशुओं की देखभाल को प्राथमिकता दें, यही एक जिम्मेदार और सजग पशुपालक की पहचान है। नीचे दी गई सारणी में विभिन्न पालतू पशुओं का सामान्य शारीरिक तापमान दिया गया है। यदि यह इससे ज्यादा हो जाए, तो तुरंत पशु चिकित्सक से संपर्क करें।

पशु	शारीरिक तापमान	
	सेल्सियस	फैरनहाइट
गाय:	38.0 - 39.3	100.4 - 102.8
भेड़:	38.3 - 39.9	100.9 - 103.8
बकरी:	38.5 - 39.7	101.3 - 103.5
शूकर:	38.7 - 39.8	101.6 - 103.6
घोड़ा:	37.5 - 38.5	99.0 - 101.0

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

✍ डॉ. रवि सिकरोडिया, दलजीत छाबरा,
✍ जोयसी जोगी, राखी गांगिल, राकेश शारदा
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, महू (म.प्र.)

हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया (गलघोंटू) कारण, लक्षण एवं बचाव

हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया एक अत्यंत संक्रामक और घातक बैक्टीरियल रोग है, इस बीमारी को गलघोंटू के नाम से भी जाना जाता है यह मुख्यतः गाय, भैंस और अन्य रूमिनेंट पशुओं को प्रभावित करता है। परन्तु अन्य पशुओं की तुलना में भेस में अधिक तीव्रता में देखने को मिलती है भारत जैसे उष्णकटिबंधीय देशों में यह रोग विशेष रूप से वर्षा ऋतु में फैलता है, जब तापमान और आर्द्रता में वृद्धि होती है।

कारण

यह रोग पास्चुरेल्ला मल्टोसिडा नामक जीवाणु के कारण होता है, यह एक ग्राम नेगेटिव जीवाणु है इस बैक्टीरिया के अनेक प्रकार हो सकते हैं जिनमें से टाइप बी:2 मुख्य रूप से एशिया में बीमारी करता है। यह जीवाणु बाइपोलर स्टैनिंग भी दिखाता है जिसमें जीवाणु सेफ्टीपिन के जैसा दिखाई देता है यह बैक्टीरिया सामान्य मीडिया पर ग्रोथ नहीं करता है। बरसात के मौसम में तापमान में उतार-चढ़ाव, अधिक आर्द्रता, और कीचड़युक्त वातावरण रोगजनकों के प्रसार को बढ़ावा देते हैं। साथ ही, पशु अक्सर भीगने, ठंड लगने, या अस्वच्छ स्थिति में रहने के कारण तनाव में आ जाते हैं, जिससे उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता कमजोर हो जाती है। यह स्थिति पास्चुरेल्ला मल्टोसिडा जीवाणु को सक्रिय कर देती है, जो पशुओं में रक्त और ऊतकों को संक्रमित करता है।

रोग के लक्षण

हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया एक तीव्र और घातक संक्रामक रोग है, जिसके लक्षण अचानक प्रकट होते हैं और रोग का प्रगति बहुत तेज होती है। इसके प्रमुख लक्षण निम्नलिखित हैं:

1. तेज़ बुखार-शरीर का तापमान 105.106° फारेनहाइट तक पहुँच सकता है।
2. गर्दन, जबड़े और छाती में सूजन-यह सूजन सख्त और दर्दयुक्त होती है। सूजन के कारण गले और फेफड़ों में दबाव पड़ता है, जिससे पशु हाँफने लगता है।
3. अत्यधिक लार के साथ-साथ नाक से भी स्राव हो सकता है।
4. पशु चारा-पानी लेना बंद कर देता है।
5. पशु ज्यादा समय लेटा रहता है और चलने में असमर्थ होता है।
6. नाक से झागदार, कभी-कभी रक्तयुक्त स्राव
7. कई बार बिना कोई स्पष्ट लक्षण दिखाए ही पशु की कुछ घंटों में मौत हो जाती है।

रोग का फैलाव

हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया का फैलाव मुख्यतः संक्रमित पशुओं की लार, नाक के स्राव, मूत्र, मल या मृत शरीर के संपर्क से होता है, और यह रोग विशेषकर बरसात के मौसम में तेजी से फैलता है। एक साथ चारा-पानी लेना, गंदे बाड़े और उपकरणों का साझा उपयोग इस रोग के प्रसार को बढ़ावा देते हैं। संक्रमित पशु के छींकने या खांसने से हवा में फैले जीवाणु भी आस-पास के पशुओं को संक्रमित कर सकते हैं। इसके अलावा, तनाव, ठंड, भीगना या कमजोर प्रतिरोधक क्षमता वाले पशु इस रोग के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं।

निदान और उपचार

हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया का निदान पशु चिकित्सक द्वारा लक्षणों के आधार पर या प्रयोगशाला परीक्षणों से किया जाता है। प्रारंभिक अवस्था में यदि सही एंटीबायोटिक (जैसे सेफ्ट्रायएक्सोन, ऑक्सीटेट्रासाइक्लिन) और सपोर्टिव थेरेपी दी जाए तो पशु को बचाया जा सकता है। लेकिन अक्सर इसकी पहचान देर से होती है, जिससे मृत्यु की संभावना अधिक होती है।

रोकथाम के उपाय

1. हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया से बचाव के लिए टीकाकरण सबसे प्रभावी उपाय है। ऑयल-एडजुवेंट वैक्सीन को साल में एक बार, विशेष रूप से बरसात के मौसम की शुरुआत से पहले (अप्रैल.जून के बीच) पशुओं को लगाया जाना चाहिए। यह टीका 6 महीने से अधिक आयु के सभी गाय-भैंसों को दिया जा सकता है, और यह 9.12 महीनों तक प्रतिरक्षा प्रदान करता है। वार्षिक टीकाकरण अत्यंत आवश्यक है। टीकाकरण के बाद हल्का बुखार या सूजन सामान्य प्रतिक्रिया हो सकती है

2. हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया से बचाव में साफ-सफाई का विशेष महत्व है, क्योंकि यह रोग गंदगी, कीचड़ और संक्रमित स्रावों के संपर्क से तेजी से फैलता है। पशुशाला को हमेशा सूखा, हवादार और साफ-सुथरा रखना चाहिए; बारिश के मौसम में पानी के जमाव और कीचड़ से विशेष रूप से बचाव करें। चारा-पानी के बर्तन प्रतिदिन धोने चाहिए और संक्रमित पशु के संपर्क में आए उपकरणों को कीटाणुनाशक से साफ करना चाहिए। पशुओं को कीचड़ या गंदे स्थानों में चराने से बचाएं और बीमार पशु को तुरंत अलग करके उसकी देखभाल करें।

3. हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया से बचाव और उपचार के दौरान पशुओं के खान-पान का विशेष ध्यान रखना अत्यंत आवश्यक है। संक्रमित या जोखिम में आए पशुओं को पोषक तत्वों से भरपूर संतुलित आहार देना चाहिए ताकि उनकी रोग प्रतिरोधक क्षमता बनी रहे। चारा हमेशा सूखा, ताज़ा और फफूंदी रहित होना चाहिए; बरसात में भीगा या सड़ा हुआ चारा देने से बचें। स्वच्छ और ठंडे पानी की पर्याप्त व्यवस्था करें और पानी के बर्तनों को नियमित रूप से साफ करें। कमजोर और बीमार पशु को अतिरिक्त खनिज मिश्रण, विटामिन्स तथा टॉनिक दिए जा सकते हैं, जिससे उनकी रिकवरी तेज हो सके। अच्छा आहार न केवल इलाज में मदद करता है, बल्कि भविष्य में संक्रमण से बचाव के लिए शरीर को मजबूत बनाता है।

4. बीमार पशुओं को अलग करें: संक्रमित पशुओं को अलग कर उचित इलाज दें ताकि रोग का प्रसार न हो।

हीमोरेजिक सेप्टीसीमिया एक गंभीर रोग है, जो विशेषकर बरसात के मौसम में पशुपालकों के लिए एक बड़ी चुनौती बन जाता है। इस रोग से होने वाली पशु मृत्यु न केवल भावनात्मक क्षति पहुंचाती है, बल्कि आर्थिक रूप से भी भारी नुकसान देती है। इसलिए समय पर टीकाकरण, साफ-सफाई और सतर्कता ही इससे बचाव का सबसे अच्छा तरीका है। जागरूकता और प्रारंभिक रोकथाम के ज़रिए इस घातक रोग पर नियंत्रण पाया जा सकता है।

सत्येन्द्र (बेरू वाले)
Mob. 9425630881
9691896745
श्री जीवन कृषक सेवा केन्द्र

हमारे यहाँ सभी प्रकार के
खेती के बीज, कीटनाशक
खरपतवार नाशक दवाईयाँ
एवं खाद उचित रेट पर मिलता है।
पता- पिछोर तिराहा, ग्वालियर रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)
02/2023-24

माया बिसेन (सहायक प्रोफेसर) उद्यानिकी विभाग
डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम विश्वविद्यालय इंदौर (म.प्र.)

स्ट्रॉबेरी प्रसंस्करण और मूल्यवर्धित उत्पाद

स्ट्रॉबेरी उत्पादों की एक विस्तृत श्रृंखला है, जिसमें खाद्य पदार्थ, त्वचा की देखभाल के उत्पाद और यहां तक कि कुछ असामान्य उपयोग भी शामिल हैं। स्ट्रॉबेरी प्रसंस्करण और मूल्यवर्धित उत्पाद शेल्फ लाइफ बढ़ाने, गुणवत्ता में सुधार करने और स्ट्रॉबेरी से उनके ताजा रूप से परे नए उत्पाद बनाने हेतु इस्तेमाल की जाने वाली विधियों को संदर्भित करता है ये प्रक्रियाएं फसल-उपरांत होने वाले नुकसान को कम करने, वर्ष भर स्ट्रॉबेरी की उपलब्धता सुनिश्चित करने और उपभोक्ताओं के लिए खाद्य विकल्पों की एक विस्तृत श्रृंखला बनाने में मदद करती हैं। स्ट्रॉबेरी उत्पादों की विस्तृत श्रृंखला उपभोक्ताओं को अधिक विकल्प प्रदान करती है।

मूल संवर्धन और उसका महत्व: सुरक्षित, पौष्टिक और सुविधाजनक खाद उत्पादन की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए अवसर है। वे खादय हानि को काम करने, शेल्फ लाइफ बढ़ाने, पोषण मूली बढ़ाने और मूल वर्धित उत्पाद बनाने में मदद करते हैं, जिससे कृषि आय बढ़ती है और खादय सुरक्षा में योगदान मिलता है।

बर्फ जमना: स्ट्रॉबेरी को पूरा या प्यूरी के रूप में जमाया जा सकता है ताकि बाद में विभिन्न व्यंजनों में उपयोग के लिए उनका स्वाद और बनावट बरकरार रहे।

सुखाना/निर्जलीकरण: स्ट्रॉबेरी को सुखाने से लम्बे समय तक उपयोग हेतु उपयुक्त सांद्रित उत्पाद तैयार किया जा सकता है, जैसे स्ट्रॉबेरी रोल या पाउडर।

जूसिंग/प्यूरीइंग: स्ट्रॉबेरी का जूस और प्यूरी पेय पदार्थों, दही और अन्य खाद्य उत्पादों में लोकप्रिय सामग्री हैं।

ध्यान केन्द्रित करना: स्ट्रॉबेरी का उपयोग जैम, जेली और अन्य मीठे उत्पाद बनाने के लिए किया जा सकता है।

जैम/जेली बनाना: इन पारंपरिक तरीकों में चीनी और पेक्टिन का उपयोग करके एक स्थायी, फैलने योग्य उत्पाद तैयार किया जाता है।

सिरप/संरक्षित पदार्थ: स्ट्रॉबेरी सिरप और संरक्षित पदार्थों का उपयोग विभिन्न व्यंजनों में टॉपिंग और सामग्री के रूप में किया जाता है।

कैंडी: स्ट्रॉबेरी कैंडी को फल को सुखाकर और फिर उसका प्रसंस्करण करके बनाया जा सकता है।

उच्च दबाव प्रसंस्करण (एचपीपी): एचपीपी का उपयोग बिना गर्मी के स्ट्रॉबेरी को संरक्षित करने, उनकी गुणवत्ता और शेल्फ लाइफ को बनाए रखने के लिए किया जा सकता है।

स्ट्रॉबेरी से मूल्यवर्धित उत्पाद

फ्रोजन स्ट्रॉबेरी उत्पाद: फ्रोजन स्ट्रॉबेरी का उपयोग स्मूदी, दही, आइसक्रीम , कॉकटेल और अन्य फ्रोजन डेसर्ट है।

स्ट्रॉबेरी जूस और पेय पदार्थ: स्ट्रॉबेरी जैम, जेली और प्रिजर्व स्ट्रॉबेरी पाउडर स्ट्रॉबेरी आधारित कार्यात्मक खाद्य पदार्थ

जैम और फल संरक्षित: स्ट्रॉबेरी जैम, जेली और फल स्प्रेड में एक लोकप्रिय सामग्री है।

फल चमड़ा: सूखे और संसाधित स्ट्रॉबेरी फल चमड़ा एक स्वस्थ नाश्ता विकल्प है।

आइसक्रीम और स्मूदी: स्ट्रॉबेरी आइसक्रीम और स्मूदी क्लासिक मिठाई विकल्प हैं।

बेक्ड सामान: स्ट्रॉबेरी का उपयोग विभिन्न बेक्ड सामानों में किया जाता है, जिनमें केक, शॉर्टकेक, पाई, कोबलर और कुकीज़ शामिल हैं।

शरबत: स्ट्रॉबेरी शरबत एक मीठा पेय है, जो एक लोकप्रिय पेय है।

फ्रूट क्रश: स्ट्रॉबेरी फ्रूट क्रश एक फल-आधारित स्प्रेड है।

चबाने योग्य: विभिन्न ब्रांड स्ट्रॉबेरी-स्वाद वाले फल चबाने योग्य उत्पाद उपलब्ध कराते हैं।

सिरप: स्ट्रॉबेरी सिरप का उपयोग पेय और मिठाइयों में किया जाता है।

पाउडर: स्ट्रॉबेरी पाउडर फल का एक गाढ़ा रूप है, जिसका उपयोग अक्सर खाना पकाने और बेकिंग में किया जाता है।

सूखे स्ट्रॉबेरी: सूखे स्ट्रॉबेरी एक स्वस्थ और सुविधाजनक नाश्ता विकल्प हैं।

रागी बाइट्स: स्ट्रॉबेरी-स्वाद वाले रागी बाइट्स एक स्वस्थ नाश्ते का विकल्प हैं।

त्वचा की देखभाल:

फेस वॉश: स्ट्रॉबेरी से बने फेस वॉश त्वचा को साफ और नमीयुक्त बनाने में मदद कर सकते हैं।

फेस पैक और मास्क: स्ट्रॉबेरी आधारित फेस पैक और मास्क ताजगी और नमी प्रदान कर सकते हैं।

स्क्रब: स्ट्रॉबेरी स्क्रब मृत त्वचा कोशिकाओं को हटाने और एक्सफोलिएट करने में मदद कर सकता है।

बाम: स्ट्रॉबेरी लिप बाम होठों को नमी देने और आराम देने में मदद कर सकता है।

अन्य त्वचा देखभाल उत्पाद: अन्य उत्पादों में जैल, गीले वाइप्स और यहां तक कि नाक की पट्टियां भी शामिल हैं।

अन्य उपयोग

सलाद ड्रेसिंग: स्ट्रॉबेरी आधारित सलाद ड्रेसिंग एक मीठा और तीखा स्वाद जोड़ सकती है।

फल और पनीर की थाली: स्ट्रॉबेरी फल और पनीर की थाली में एक स्वादिष्ट अतिरिक्त वस्तु हो सकती है।

सिरका: स्ट्रॉबेरी से स्ट्रॉबेरी सिरका बनाया जा सकता है।

वाइन: स्ट्रॉबेरी का उपयोग वाइन उत्पादन में किया जा सकता है।

12/2022-23

जैविक उत्पाद इतने महंगे क्यों होते हैं? टिकाऊ विकल्पों के पीछे की ऊँची कीमतों को समझना

कपिल मारन (पीएचडी शोधार्थी, कृषि विस्तार शिक्षा विभाग) राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.)

अंजुला भारतीय (पीएचडी शोधार्थी, कृषि विस्तार शिक्षा विभाग) राजमाता विजयाराजे सिंधिया कृषि विश्वविद्यालय, ग्वालियर

डॉ. अर्पित सौमतिया (YP II) भा.कृ.अ.प - कृषि प्रौद्योगिकी अनुप्रयोग अनुसंधान संस्थान, क्षेत्र-9, जबलपुर

जैसे-जैसे पर्यावरणीय स्थिरता और व्यक्तिगत स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता बढ़ रही है। जैविक खेती आधुनिक कृषि चर्चा का एक महत्वपूर्ण हिस्सा बन गई है। पर्यावरण, अर्थव्यवस्था और समाज के लिए लाभकारी मानी जाने वाली जैविक खेती खासतौर पर ग्रामीण क्षेत्रों में सतत विकास को बढ़ावा देने में अहम भूमिका निभा रही है। हालांकि इसके कई फायदों के बावजूद एक बड़ा सवाल अक्सर सामने आता है: जैविक उत्पादों की कीमत इतनी ज्यादा क्यों होती है?

जैविक खेती के फायदे: जैविक कृषि एक समग्र उत्पादन प्रणाली है जो मिट्टी, पारिस्थितिकी तंत्र और लोगों के स्वास्थ्य को बेहतर बनाने पर केंद्रित होती है। यह प्राकृतिक प्रक्रियाओं और चक्रों पर निर्भर करती है और रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों और आनुवंशिक रूप से संशोधित जीवों (GMOs) से दूर रहती है। इस प्रकृति-मैत्रीपूर्ण तरीके से न केवल जैव विविधता को संरक्षित किया जाता है, बल्कि मिट्टी की उर्वरता भी बढ़ती है और प्रदूषण कम होता है। वैश्विक जैविक खाद्य और पेय पदार्थ बाजार में लगातार वृद्धि देखी जा रही है। 2022 में इसकी अनुमानित कीमत 208.19 बिलियन अमेरिकी डॉलर थी और यह 2023 से 2030 के बीच हर साल औसतन 11.7% की दर से बढ़ने की उम्मीद है।

कीमत का रहस्य: उपभोक्ताओं में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता बढ़ने से लोग अब यह समझने लगे हैं कि वे क्या खा रहे हैं और इसका उनके शरीर और पर्यावरण पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। इसी के चलते जैविक खाद्य पदार्थों की मांग में भी वृद्धि देखी गई है। बाजार में इन उत्पादों की उपस्थिति और प्रचार-प्रसार ने उपभोक्ताओं में एक सकारात्मक दृष्टिकोण विकसित किया है। अधिकांश लोग मानते हैं कि जैविक खाद्य न केवल स्वास्थ्यवर्धक होते हैं बल्कि पर्यावरण के लिए भी लाभकारी हैं। परंतु, इसके बावजूद एक हैरान करने वाली सच्चाई यह है कि जैविक उत्पादों की वास्तविक खरीद उस उत्साह के अनुसार नहीं हो रही है जो उपभोक्ताओं द्वारा दिखाया जाता है। इस विसंगति को ही 'एटीट्यूड-बिहेवियर गैप' कहा जाता है। अर्थात उपभोक्ताओं का दृष्टिकोण तो जैविक खाद्य के पक्ष में होता है लेकिन उनका व्यवहार (यानी खरीदारी का निर्णय) उस दृष्टिकोण का अनुसरण नहीं करता।

इस व्यवहारिक अंतर की कई गहरी और परस्पर जुड़ी हुई वजहें हैं। सबसे प्रमुख कारण है जैविक उत्पादों की ऊँची कीमतें। पारंपरिक खाद्य उत्पादों की तुलना में जैविक वस्तुएं अक्सर दो से तीन गुना महंगी होती हैं। यह कीमत अंतर अधिकांश उपभोक्ताओं के बजट के लिए अव्यवहारिक बन जाता है। खासकर मध्यमवर्गीय और निम्न आय वर्ग के लिए। उपभोक्ता भले ही जैविक विकल्प को पसंद करें लेकिन जब बात जेब से खर्च करने की आती है तो वे पारंपरिक विकल्प को ही चुनते हैं। इसके अतिरिक्त उपभोक्ताओं की पारंपरिक खरीदारी की आदतें भी एक बड़ी रुकावट हैं। वर्षों से एक ही प्रकार की वस्तुएँ एक ही दुकान से एक निश्चित दाम पर खरीदने की आदत लोगों को नए विकल्पों की ओर जाने से रोकती है। कई बार उपभोक्ता बदलाव को लेकर अनिश्चित होते हैं और उन्हें यह डर रहता है कि नया उत्पाद उनकी अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरेगा। इसके साथ ही जागरूकता की कमी और प्रचार का असमान वितरण भी इस 'एटीट्यूड-बिहेवियर गैप' को और गहरा करता है।

जैविक उत्पादों की ऊंची कीमत के कई प्रमुख कारण निम्नलिखित भी हो सकते है: उदाहरण सहित समझे-

1. सीमित आपूर्ति बनाम बढ़ती मांग: जैविक खाद्य उत्पादों की मांग शहरी क्षेत्रों में तेजी से बढ़ रही है क्योंकि उपभोक्ता अब स्वास्थ्य और पर्यावरण के प्रति अधिक जागरूक हो गए हैं। लेकिन जैविक खेती करने वाले किसान अभी भी सीमित हैं। इसका कारण है जैविक खेती की कठिन प्रक्रिया, कम पैदावार, और रूपांतरण की जटिलताएँ। इस कारण जैविक खाद्य की आपूर्ति कम होती है जबकि मांग लगातार बढ़ती है। उदाहरणः अगर एक शहर में 10,000 लोग जैविक टमाटर खरीदना चाहते हैं, लेकिन केवल 2,000 किलो जैविक टमाटर ही उपलब्ध हैं, तो इनकी कीमत बढ़ना स्वाभाविक है। सामान्य टमाटर ?20 प्रति किलो हो सकते हैं, लेकिन जैविक टमाटर रु. 60-80 प्रति किलो बिक सकते हैं।

2. उच्च उत्पादन लागत: जैविक खेती में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग नहीं होता, इसलिए किसानों को प्राकृतिक तरीके अपनाने पड़ते हैं जैसे- गोबर खाद, जैविक कीटनाशक, मिश्रित फसलें आदि। इसके अलावा अधिक श्रम की आवश्यकता होती है और फसलें अक्सर धीरे-धीरे बढ़ती हैं। साथ ही हर कदम पर सख्त रिकॉर्ड रखाव भी ज़रूरी होता है। जिससे लागत और बढ़ जाती है। उदाहरणः एक पारंपरिक किसान केवल एक बार में रासायनिक खाद डालकर काम पूरा कर सकता है। लेकिन जैविक किसान को बार-बार खाद बनानी पड़ती है। समय देना होता है और उसे हर प्रयोग का रिकॉर्ड रखना होता है। ये सभी बातें लागत में वृद्धि करती हैं।

3. कटाई के बाद की प्रक्रिया: जैविक उत्पादों को पारंपरिक उत्पादों से पूरी आपूर्ति श्रृंखला (supply chain) में अलग रखना पड़ता है ताकि कोई मिलावट न हो। इसके लिए अलग गोदाम, अलग ट्रक और अलग पैकिंग की जरूरत होती है। यह पूरी प्रक्रिया काफी महंगी होती है।

उदाहरण: यदि एक गोदाम में पारंपरिक और जैविक दोनों प्रकार के गेहूँ रखे जाएँ तो जैविक की प्रमाणिकता पर सवाल उठ सकता है। इसलिए एक अलग गोदाम किराए पर लेना पड़ेगा जिसकी लागत अंततः उपभोक्ता को चुकानी पड़ती है।

4. अप्रभावी वितरण प्रणाली और सरकारी सहायता की कमी: भारत में जैविक खाद्य का वितरण अभी बहुत असंगठित है। बहुत कम किसान सहकारी समितियों या मार्केटिंग चैनलों से जुड़े होते हैं। इसके अलावा पारंपरिक खेती को जहां सब्सिडी, बीमा और समर्थन मूल्य मिलते हैं। जैविक किसानों को उतनी सरकारी सहायता नहीं मिलती। इससे वे बाजार में प्रतिस्पर्धा करने में कमजोर हो जाते हैं और उनकी लागत उपभोक्ताओं तक पहुँचते-पहुँचते और अधिक हो जाती है।

उदाहरण: एक पारंपरिक धान उत्पादक किसान को न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) और बीज-सब्सिडी मिलती है। लेकिन एक जैविक किसान को अपने उत्पाद बेचने के लिए निजी रिटेलरों पर निर्भर रहना पड़ता है जिनकी पहुंच सीमित होती है। इससे उत्पाद महंगा और वितरण धीमा हो जाता है।

कीमत के परे मूल्य: हालांकि जैविक खाद्य की ऊँची कीमत उपभोक्ताओं को हतोत्साहित कर सकती है। कई लोग तब इस पर अतिरिक्त खर्च करने को तैयार होते हैं जब वे समझते हैं कि यह कीमत वास्तव में किन चीजों के लिए दी जा रही है। Hamm और अन्य शोधकर्ताओं के अनुसार जैविक खाद्य की प्रमुख विशेषताएं हैं: खाद्य सुरक्षा, पर्यावरण संरक्षण, बेहतर स्वाद और पशु कल्याण व श्रमिक अधिकार जैसे नैतिक मूल्य आदि है। **जैविक उत्पादों की कीमतें उन छिपी हुई पर्यावरणीय और सामाजिक लागतों को भी दर्शाती हैं जिनसे पारंपरिक खेती नहीं बचती, जैसे:**

1.कीटनाशकों के कारण खेतों में काम करने वालों के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव। 2.स्थानीय पारिस्थितिक तंत्र और जैव विविधता का संरक्षण। 3.ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों में वृद्धि और किसानों की स्थायी आजीविका। 4.पशुओं हेतु बेहतर जीवन स्थितियाँ और देखभाल।

अंतर को पाटना: आगे क्या?: जैविक उत्पादों की ऊँची कीमतें लंबे समय से आम उपभोक्ताओं की पहुँच से बाहर मानी जाती रही हैं। लेकिन आने वाले वर्षों में इस स्थिति में बदलाव की उम्मीद की जा रही है। तकनीकी नवाचार जैसे स्मार्ट फार्मिंग उपकरण और प्राकृतिक संसाधनों का वैज्ञानिक उपयोग उत्पादन लागत को घटा रहे हैं। जिससे जैविक खेती पहले की तुलना में अधिक प्रभावी और किफायती बन रही है। साथ ही उपभोक्ताओं के बीच स्वास्थ्य और पर्यावरण को लेकर बढ़ती जागरूकता जैविक उत्पादों की मांग को नई ऊँचाइयों पर ले जा रही है। यदि लॉजिस्टिक्स और आपूर्ति श्रृंखला में सुधार कर उत्पादों को सीधे किसानों से उपभोक्ताओं तक पहुँचाया जाए तो बिचौलियों की लागत कम होगी और उत्पाद सस्ते हो सकते हैं। इसके अलावा उपभोक्ताओं को पारदर्शी लेबलिंग और प्रमाणन के माध्यम से सही जानकारी देना एटीट्यूड-बिहेवियर गैप को कम करने में मदद कर सकता है। यानी उपभोक्ता न सिर्फ सोचेंगे बल्कि खरीदेंगे भी। इस दिशा में सरकार की भूमिका भी अहम है। जैविक खेती को बढ़ावा देने के लिए यदि सब्सिडी, टैक्स छूट और प्रमाणन सुविधाएँ दी जाएँ तो जैविक उत्पाद आम जनमानस हेतु अधिक सुलभ और व्यवहार्य बन सकते हैं। ऐसे समन्वित प्रयास न केवल उपभोक्ता हित में होंगे बल्कि टिकाऊ कृषि और पर्यावरण संरक्षण की दिशा में भी मील का पत्थर साबित हो सकते हैं। इसके अलावा स्कूलों, अस्पतालों और सार्वजनिक वितरण प्रणालियों में जैविक उत्पादों के उपयोग को प्राथमिकता देना भी मांग को स्थायी रूप से बढ़ा सकता है।

निष्कर्ष: हालांकि वर्तमान समय में जैविक उत्पादों की कीमतें पारंपरिक उत्पादों की तुलना में अधिक है फिर भी इनकी गुणवत्ता और लाभों को देखते हुए ये मूल्य उचित प्रतीत होते हैं। जैविक खेती में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का उपयोग नहीं किया जाता जिससे उत्पाद न केवल स्वास्थ्य के लिए सुरक्षित होते है बल्कि मिट्टी, जल और जैव विविधता की रक्षा में भी सहायक होते हैं। जो इसकी कीमत को प्रभावित करता है। हालांकि, जैसे-जैसे लोगों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता बढ़ रही है और वे अपने भोजन के स्रोतों को लेकर अधिक सतर्क हो रहे हैं जैविक उत्पादों की मांग में निरंतर वृद्धि हो रही है। यह उम्मीद की जा सकती है कि भविष्य में उत्पादन बढ़ने और आपूर्ति श्रृंखला बेहतर होने के साथ-साथ इनकी कीमतों में स्थिरता आएगी। साथ ही सरकारों और संगठनों की सहायता से यदि जैविक खेती को प्रोत्साहन मिले तो ये उत्पाद आम आदमी की पहुँच में भी आ सकते हैं। फिलहाल, उपभोक्ताओं के लिए यह आवश्यक है कि वे कीमत के पीछे छिपे कारणों को समझें और इस दिशा में एक जागरूक तथा जिम्मेदार निर्णय लें जिससे न केवल उनका स्वास्थ्य बेहतर हो बल्कि पर्यावरण और समाज को भी दीर्घकालिक लाभ मिल सके।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

शूकर की गहन आवास प्रणाली

मोहब्बत सिंह जमरा, दानवीर सिंह यादव
निर्मला जमरा, दीपिका डायना जेसी
अरुणिका अड़मे
पशु चिकित्सा एवम पशुपालन महाविद्यालय, महू, इन्दौर
नानाजी देशमुख पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वद्यिालय,जबलपुर

सुअर पालन की गहन आवास प्रणाली एक ऐसी विधि है जिसमें सुअरों को एक नियंत्रित और सीमित क्षेत्र मे रखा जाता है जिससे वैज्ञानिक रूप से व्यवस्थित आवास प्रणाली न केवल सुअरो को आरामदायक स्थान उपलब्ध कराती है बल्कि रोग नियंत्रण, निगरानी, खानपान एवं प्रजनन प्रक्रिया को भी सुचारू बनाती है। इसमे उचित जगह, स्वच्छता, वेंटिलेशन, तापमान नियंत्रण और अलग- अलग श्रेणियों के अनुसार बाड़ो का प्रबंधन प्रमुख होता है।

पालन व्यवसाय लिए आवास की व्यवस्था

आवास आधुनिक ढंग से बनाए जायें ताकि साफ सुथरे तथा हवादार हो, भिन्न- भिन्न उम्र के सुअर के लिए अलग - अलग कमरा होना चाहिए। ये इस प्रकार हैं।

प्रसूति सुअर आवास

यह कमरा साधारणतः 10 फीट लम्बा और 8 फीट चौड़ा होना चाहिए तथा इस कमरे से लगे इसके दुगुनी क्षेत्रफल का एक खुला स्थान होना चाहिए। बच्चे साधारणतः दो महीने तक माँ के साथ रहते हैं। प्रसूति सुअरी के गृह में दिवार के चारों ओर दिवार से 9 इंच अलग तथा जमीन से 9 इंच ऊपर एक लोहे की 3 इंच से 4 इंच मोटी बल्ली की रूफ बनी होती है, जिसे गार्ड रेल कहते हैं। छोटे-छोटे सुअर बचे अपनी माँ के शरीर से दब कर अक्सर मरते हैं, जिसके बचाव के लिए यह गार्ड रेल आवश्यक है।

गाभिन सुअर के लिए आवास

गाभिन सुअर को अलग से रखना चाहिए, अन्य सुअरी के बीच रहने से आपस में लड़ने या अन्य कारणों से गाभिन सुअरी को चोट पहुँचने की आंशका रहती है जिससे उनके गर्भ को नुकसान हो सकता है। प्रत्येक कमरे में 3-4 सुअरी को आसानी से रखा जा सकता है। प्रत्येक गाभिन सुअरी को बैठने या सोने के लिए कम से कम 10-12 वर्गफीट स्थान देना चाहिए। रहने के कमरे में ही उसके खाने पीने के लिए नाद होना चाहिए तथा उस कमरे से लेगें उसके घूमने के लिए एक खुला स्थान होना चाहिए।

विसूखी सुअरी के लिए आवास

जो सुअरी गर्भधारण नहीं हुई हो उसे अलग से पैन में रखा जाना चाहिए। प्रत्येक कमरे में 8-10 सुअरी तक रखी जा सकती है। गाभिन सुअरी घर के समान ही इसमें भी खाने पीने के लिए नाद एवं घूमने के लिए स्थान होना चाहिए । प्रत्येक सुअरी के सोने या बैठने के लिए कम से कम 10-12 वर्गफीट स्थान देना चाहिए।

नर सुअर के लिए आवास

नर सुअर जो प्रजनन के काम आता है उन्हें सुअरी से अलग कमरे में रखना चाहिए। प्रत्येक कमरे में केवल एक नर सुअर रखा जाना चाहिए । एक से ज्यादा एक साथ रहने आपस में लड़ने लगते हैं एवं दूसरों का खाना खाने की कोशिश करते हैं नर सुअरों के लिए 10 फीट 8 फीट स्थान देना चाहिए । रहने के कमरे में खाने पीने के लिए नाद एवं घूमने के लिए कमरे से लगा खुला स्थान जोना चाहिए ।

बढ़ रहे बच्चों के लिए आवास

दो माह के बाद साधारण बच्चे माँ से अलग कर पाला जाना चाहिए। 4 माह के उम्र में नर एवं मादा बच्चों को अलग-अलग कर देना चाहिए । एक उम्र के बच्चों को एक साथ रखना अच्छा होता है। ऐसा करने से बच्चे को समान रूप से आहार मिलता है एवं समान रूप बढ़ते हैं। प्रत्येक बच्चे के लिए औसतन 3 इ 4 फीट स्थान होना चाहिए तथा रात में उन्हें सावधानी में कमरे में बंद कर देना चाहिए।

सूकर पालन हेतु स्थान की आवश्यकता

सूकर (प्रकार)	ढका क्षेत्र (मी.2)	खुला क्षेत्र (मी.2)	अधिकतम सुअर प्रति पेन
नर सूकर	6.5-7.5	8.8-12.0	01
मादा सूकर	1.8-2.7	1.5-1.8	3-10
बच्चा देने वाली सूकरी	7.5-9.0	8.8-12.0	01
बच्चे (03 से 05 माह)	0.9-1.2	0.9-1.2	30

आवास का निर्माण

सूकर आवास के प्रत्येक भाग को सावधानी पूर्वक उनकी आवश्यकताओं के अनुसार निर्माण कराया जाना चाहिए।

फर्श

सूकर आवास का फर्श मजबूत होना चाहिए क्योंकि कमजोर फर्श को सूकर अपने थूथन द्वारा तोड़कर गड्ढ़ा कर देते है।

भोजन व जलकुण्ड

सूकर की लार से सामान्य बनावट वाले भोजन व जलकुण्ड क्षति ग्रस्त हो जाते है। अतः इनको भी मजबूत कंकरीट सीमेंट से ही निर्मित करना चाहिए। इन कुण्डों के कोने गोलाई लिए हुए निर्मित कराना चाहिए, जिससे सफाई में आसानी रहे, अन्यथा गंदगी के बने रहने की संभावना रहती है।

दीवार

सूकर गृह की दीवार भी मजबूत होनी चाहिए। क्योंकि सूकर एक शक्तिशाली पशु है। ईट या पत्थर से बनी दीवार मजबूती प्रदान करती है। दीवारों को 1-1.5 मीटर ऊंचाई तक चिकने सीमेंट से निर्मित करना चाहिए जिससे उन्हें साफ करने मे आसानी हो। 1 से 1.5 मीटर से ऊपर की दीवार लोहे के पाईपों का प्रयोग कर निर्मित कर सकते है। इसके अतिरिक्त दीवारों के कोने गोलाई लिए होने चाहिए। इस प्रकार गोलाई लिए हुए कोने वाली दीवार को साफ करना आसान होता है।

छत

सूकर गृह की छत ऐसी निर्मित होनी चाहिए कि वह धूप, वर्षा तथा खराब मौसम से बचाव कर सकने में सक्षम हो। फर्श से छत की ऊंचाई लगभग 3 मीटर होना चाहिए। जिससे मौसम बदलने का प्रभाव सूकर गृह के अंदर कम हो। प्रायः छत एसबैस्टस से बनाई जाती है, सीमेंट-कंकरीट से भी बना सकते हैं।

मध्य मार्ग

विभिन्न सूकर आवासों के मध्य का मार्ग इस प्रकार निर्मित होना चाहिए कि सूकर की देख रेख हेतु तथा श्रमिकों को सामान लाने ले जाने में सुविधा हो। मध्य मार्ग को स्वच्छ रखना भी आसान होना चाहिए। अतः मध्य मार्ग को कम से कम 1 लीटर चौड़ा सीमेंट का बना होना चाहिए तथा सूकर आवासों के उत्सर्जन कक्ष की ओर ढलान को बनाना चाहिए।

निकासी

सूकर आवास के प्रत्येक गृह में मल-मूत्र तथा अन्य प्रकार के कूड़े-कचरे सूकर पालन पोषण के दौरान निकलते हैं। उन्हें उत्सर्जन हेतु सूकर आवासों के अन्तिम बाहरी हिस्सें में एकत्र करने हेतु प्रत्येक सूकर गृह निकास नाली की व्यवस्था होती है। प्रत्येक सूकर गृह की छोटी-छोटी निकास नालियां एक मुख्य निकास नाली से मिलान करें। जो मध्य मार्ग के साथ-साथ बनाई जाती है, जिससे होकर सूकर गृहों का कचरा उत्सर्जन कुण्ड में एकत्र होता है। प्रत्येक निकास नाली गोलाई लिए हुए बनाई जानी चाहिए।

डेयरी क्षेत्र में स्वच्छ दूध उत्पादन

डॉ. सुरभि यादव
डॉ. प्रदीप कुमार सिंह, डॉ सरलीन तोमर
डॉ. स्वाति गुप्ता, डॉ. अंशुल खरे
नानाजी देशमुख पशु चिकित्सा विज्ञान विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

Table 1: कच्चे दूध में प्राथमिक माइक्रोबियल खतरे

रोगज़नक़	स्रोत	संक्रामक खुराक	Thermal Resistance (D-value)
Campylobacter jejuni	मल संदूषण	500 CFU	D_{60} °C = 0.7 min
Listeria monocytogenes	पर्यावरण/बायोफिल्म्स	1,000 CFU	D_{72} °C = 0.3 min
Staphylococcus aureus	मैस्टीटिक थन	10^5 CFU (enterotoxin)	D_{65} °C = 0.5 min
Mycobacterium bovis	जूनोटिक संचरण	10^2 CFU	D_{72} °C = 15.0 min

गोजातीय दूध, कैसिइन मिसेल, व्हे प्रोटीन, लैक्टोज और खनिजों से युक्त जलीय चरण में वसा की बूंदों का एक एमल्शन है, जो सूक्ष्मजीवों के लिए श्रेष्ठ विकास माध्यम प्रदान करता है। FAO/WHO स्वच्छ दूध को कच्चे दूध के रूप में परिभाषित करता है जिसमें सूक्ष्मजीव विज्ञानी और रासायनिक पैरामीटर कोडेक्स एलिमेंटेरियस मानकों (CAC/GL 67-2008) के अनुरूप होते हैं। दूषित दूध से दुनिया भर में सालाना 2.5 मिलियन से अधिक खाद्य जनित बीमारियाँ होती हैं (WHO, 2022), जिसके लिए उत्पादन प्रोटोकॉल में वैज्ञानिक सख्ती की आवश्यकता है।

डेयरी क्षेत्र में स्वच्छ दूध उत्पादन एक बहुआयामी और अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है, जिसमें पूरे उत्पादन श्रृंखला में बारीकी से ध्यान देने की आवश्यकता होती है। यह समग्र दृष्टिकोण खाद्य सुरक्षा, गुणवत्ता और सार्वजनिक स्वास्थ्य के उच्चतम मानकों को सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है। **स्वच्छ दूध उत्पादन की जटिलता विभिन्न परस्पर जुड़े पहलुओं को समाहित करती है, जिनमें शामिल हैं:**

* फार्म-स्तरीय स्वच्छता * पशु स्वास्थ्य प्रबंधन * दुग्ध-दोहन की विधियाँ * दुग्ध-दोहन के बाद की हैंडलिंग * प्रसंस्करण तकनीक * गुणवत्ता नियंत्रण उपाय * विनियामक अनुपालन * तकनीकी नवाचार

फार्म-स्तरीय स्वच्छता

फार्म स्तर पर स्वच्छता बनाए रखना अत्यंत आवश्यक है। इसमें मिल्किंग मशीन, भंडारण टैंक और परिवहन कंटेनरों सहित सभी दुग्ध-दोहन उपकरणों की नियमित और उत्तम सफाई और कीटाणुशोधन प्रोटोकॉल का पालन करना शामिल है। दुग्ध-दोहन क्षेत्र और पशु रखने वाले स्थानों की सफाई और कीटाणुशोधन भी नियमित रूप से किया जाना चाहिए ताकि बैक्टीरियल संक्रमण का खतरा कम किया जा सके।

अंतर्जात संदूषण उप-नैदानिक स्तनदाह से उत्पन्न होता है, जहाँ रोगाणु स्तन ऊतक पर टीट नलिकाओं के माध्यम से आक्रमण करते हैं, जो कि चिपकने वाले पदार्थ (जैसे, एस. ऑरियस फ़ाइब्रोनेक्टिन-बाइंडिंग प्रोटीन) को पैदा करते हैं जो इन्हे फ़ैगोसाइटोसिस से बचाते हैं। बहिर्जात संदूषण निम्न माध्यमों से होता है:

* **फीकल-ओरल मार्ग:** खाद से एंटरोबैक्टीरियासी
* **पर्यावरणीय जलाशय:** पानी/मिट्टी में साइक्रोट्रॉफ़िक स्यूडोमोनास स्पेशीस
* **मानव वाहक:** अनुचित हैंडलिंग से साल्मोनेला स्पेशीस

थनों की स्वच्छता

थनों की स्वच्छता स्वच्छ दूध उत्पादन की आधारशिला है। किसानों को दुग्ध-दोहन से पहले थनों की सफाई और कीटाणुशोधन की विस्तृत प्रक्रिया अपनानी चाहिए। इसमें तीन चरण होते हैं: पहले गंदगी हटाना, फिर थनों पर प्रभावी कीटाणुनाशक लगाना, और अंत में थनों को अच्छी तरह सुखाना। ये कदम दूध में रोगजनक जीवों के प्रवेश को रोकने के लिए आवश्यक हैं।

दूध दुहने से पहले स्वच्छता का प्रोटोकॉल

1. आयोडोफोर (0.5% उपलब्ध I2) के साथ पूर्व-डुबाना
2. तौलिये से पोंछें
3. फोरस्ट्रिपिंग (पहले 3 धाराओं को त्यागें)
4. 90 सेकंड के भीतर स्वच्छ समूहों को संलग्न करें

मिल्किंग मशीन पैरामीटर:

वैक्यूम स्थिरता: 42 ± 2 kPa (टीट-एंड हाइपरकेराटोसिस को रोकता है)

स्पंदन अनुपात: 60:40 60 चक्र/मिनट पर

पशु स्वास्थ्य प्रबंधन

स्वच्छ दूध उत्पादन सीधे पशु स्वास्थ्य से जुड़ा होता है। इसके लिए नियमित पशु-चिकित्सा जांच, टीकाकरण कार्यक्रमों का पालन, और रोगों की रोकथाम व प्रबंधन की रणनीतियाँ आवश्यक हैं। विशेष रूप से मास्टाइटिस (थन की सूजन) की रोकथाम, शीघ्र पहचान और उपचार बहुत जरूरी है क्योंकि यह दूध की गुणवत्ता को बुरी तरह प्रभावित करता है। सोमैटिक सेल काउंट और बैक्टीरिया कल्चर जैसी उन्नत जांच विधियाँ इसमें सहायक होती हैं।

मास्टिटिस नियंत्रण

* **सोमैटिक सेल काउंट (एससीसी) प्रबंधन:** स्स्ट को <200,000 सेल/एमएल बनाए रखें
* सेफालोनियम इन्फ्यूजन के साथ चयनात्मक ड्राइ काऊ चिकित्सा (एसडीसीटी)
* टीट सीलेंट (उदाहरण के लिए, निष्क्रिय मैट्रिक्स में बिस्मथ सबनाइट्रेट)

दुग्ध-दोहन प्रक्रिया

दुग्ध-दोहन प्रक्रिया के दौरान स्वच्छता नियमों का कड़ाई से पालन अनिवार्य है। इसमें मानकीकृत दोहन प्रक्रिया, कर्मचारियों को उचित प्रशिक्षण, और व्यक्तिगत सुरक्षा उपकरणों का उपयोग शामिल है। स्वचालित दुग्ध-दोहन प्रणालियाँ जब ठीक से संचालित की जाती हैं, तो यह मिल्किंग को अधिक सुसंगत और कम प्रदूषित बनाती हैं। लेकिन इन प्रणालियों का नियमित रखरखाव और अंशांकन आवश्यक होता है।

दूध की दुग्ध-दोहन के बाद की हैंडलिंग

दूध की गुणवत्ता बनाए रखने के लिए दुग्ध-दोहन के तुरंत बाद की प्रक्रिया अत्यंत महत्वपूर्ण है। दूध को 4°C से नीचे के तापमान तक दो घंटे के भीतर ठंडा करना चाहिए ताकि बैक्टीरिया की वृद्धि रोकी जा सके। इसके लिए कुशल कूलिंग सिस्टम और परिवहन में कोल्ड चेन की निरंतरता बनाए रखना आवश्यक है।

4°C तक तेजी से ठंडा करना

* स्यूडोमोनास की वृद्धि दर को 0.8 लॉग CFU/h (20°C) से घटाकर 0.05 लॉग CFU/h कर देता है
* शेल्फ-लाइफ को 72 घंटे तक बढ़ा देता है (इंटरनेशनल डेयरी जर्नल, 2021)

प्रसंस्करण के दौरान स्वच्छता

प्रसंस्करण स्तर पर पाश्चुरीकरण दूध की सुरक्षा सुनिश्चित करने की मुख्य प्रक्रिया है। यह प्रक्रिया दूध से रोगजनक जीवों को नष्ट करती है लेकिन उसके पोषण को बनाए रखती है। आजकल माइक्रोफिल्ट्रेशन और अल्ट्राफिल्ट्रेशन जैसी उन्नत तकनीकों का उपयोग भी किया जा रहा है ताकि दूध को और अधिक स्वच्छ और सुरक्षित बनाया जा सके।

क्लीन-इन-प्लेस (CIP) सिस्टम

* क्षारीय चरण (1.0% NaOH, 75°C): प्रोटीनयुक्त बायोफिल्म्स को हाइड्रोलाइज़ करता है
* एसिड चरण (0.8% HNO3, 60°C): मिल्कस्टोन (CaCO3) को घोलता है
* टर्मिनल सैनिटेशनः पर एसिटिक एसिड (150 पीपीएम)
* OH रेडिकल के माध्यम से माइक्रोबियल झिल्ली को बाधित करता है
* **प्रभावकारिता सत्यापनः** ATP बायोल्यूमिनेसेंस <50 RLU सैनिटेशन की पुष्टि करता है

एंटीबायोटिक अवशेष

* वापसी अवधि को ट्रैक करने के लिए इलेक्ट्रॉनिक झुंड स्वास्थ्य रिकॉर्ड लागू करें
* **तेजी से पता लगानाः** रिसेप्टर-बाइंडिंग परख (व-लैक्टमः LOD 2 μg/kg)
* **माइकोटॉक्सिनः** बेन्टोनाइट क्ले फीड एडिटिव्स के माध्यम से एफ्लैटॉक्सिन M1 नियंत्रण (बाइंडिंग प्रभावकारिता >85%)
* **EU अधिकतम सीमाः** 0.050 μg/kg

Table 2: वैश्विक कच्चे दूध की गुणवत्ता मानक

पैरामीटर	यूरोपीय संघ विनियमन	अमेरिकी पाश्चुरीकृत दूध अध्यादेश	परीक्षण पद्धति
Aerobic Plate Count	≤100,000 CFU/mL	≤100,000 CFU/mL	ISO 4833-1:2013
SCC	≤400,000/mL	≤750,000/mL	Flow cytometry (ISO 13366-2)
Inhibitory Substances	< MRL*	< MRL*	Delvotest® SP-NT
Freezing Point	≥−0.520°C	≥−0.508°C	Thermistor cryoscopy

गुणवत्ता नियंत्रण उपाय

दूध की गुणवत्ता को सुनिश्चित करने के लिए प्रत्येक चरण पर गुणवत्ता नियंत्रण उपाय आवश्यक हैं। दूध के नमूनों का नियमित परीक्षण ङ्क जैसे कुल बैक्टीरियल काउंट, सोमैटिक सेल काउंट, एंटीबायोटिक अवशेष

आदि - करना जरूरी है। HACCP (Hazard Analysis and Critical Control Points) प्रणाली संभावित खतरों की पहचान और नियंत्रण के लिए एक संरचित दृष्टिकोण प्रदान करती है।

स्वच्छ दूध उत्पादन में शिक्षा और प्रशिक्षण की भूमिका

दुग्ध उत्पादन श्रृंखला से जुड़े प्रत्येक व्यक्ति को प्रशिक्षण देना अत्यंत आवश्यक है। प्रशिक्षण कार्यक्रमों में व्यक्तिगत स्वच्छता, उपकरणों की सफाई, पशु स्वास्थ्य प्रबंधन और स्थापित प्रोटोकॉल के पालन की जानकारी दी जानी चाहिए।

तकनीकी नवाचार

तकनीकी नवाचार स्वच्छ दूध उत्पादन में क्रांतिकारी बदलाव ला रहे हैं। स्वचालित सफाई प्रणालियाँ, रीयल-टाइम गुणवत्ता मॉनिटरिंग उपकरण, और ब्लॉकचेन आधारित ट्रैसेबिलिटी सिस्टम जैसे तकनीकें न केवल दक्षता बढ़ा रही हैं, बल्कि हर स्तर पर निगरानी को भी मजबूत बना रही हैं।

स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए नियम और विनियम

सरकारी निकाय और उद्योग संगठन स्वच्छ दूध उत्पादन के लिए मानक और नियम निर्धारित करते हैं। इन नियमों का पालन सुनिश्चित करने के लिए नियमित निरीक्षण, ऑडिट और प्रमाणन आवश्यक हैं। यह प्रक्रिया उद्योग में निरंतर सुधार को भी प्रोत्साहित करती है।

निष्कर्ष

अंत में, स्वच्छ दूध उत्पादन एक जटिल और बहुविषयक प्रक्रिया है, जो समग्र दृष्टिकोण की मांग करती है। इसमें स्वच्छता, पशु कल्याण, तकनीकी नवाचार और विनियामक अनुपालन के प्रति अडिग प्रतिबद्धता की आवश्यकता होती है। यदि इन सभी पहलुओं को समन्वित रूप से लागू किया जाए तो डेयरी उद्योग उच्चतम गुणवत्ता वाला दूध प्रदान कर सकता है, जिससे उपभोक्ताओं की सुरक्षा और उनके विश्वास को सुनिश्चित किया जा सकता है। **स्वच्छ दूध उत्पादन एक अंतःविषय विज्ञान है जिसमें पशु चिकित्सा प्रतिरक्षा विज्ञान, माइक्रोबियल जीनोमिक्स और थर्मल इंजीनियरिंग के एकीकरण की आवश्यकता होती है। भविष्य की प्राथमिकताओं में शामिल हैं:**

* रिवर्स वैक्सीनोलॉजी के माध्यम से गर्मी प्रतिरोधी स्टैफिलोकोकस टीके विकसित करना
* छोटे किसानों के लिए सौर ऊर्जा से चलने वाले एडियाबेटिक कूलिंग का विस्तार करना
* खेत से लेकर प्रोसेसर तक ब्लॉकचेन ट्रेसेबिलिटी को लागू करना
* सार्वजनिक स्वास्थ्य की सुरक्षा और डेयरी क्षेत्र की स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए साक्ष्य-आधारित प्रोटोकॉल का सख्ती से पालन करना सर्वोपरि है।

✍ **दामोदर अग्निहोत्री** संस्थापक एवं अध्यक्ष,
सत्यम कला एवं संस्कृति संग्रहालय सागर (म.प्र.)

सत्यम कला एवं संस्कृति संग्रहालय सागर में संरक्षित बुन्देलखण्ड के परम्परिक कृषि उपकरणों का संक्षिप्त परिचय

भारत कृषि प्रधान देश है। यहां के सभी क्षेत्रों और प्रदेशों में अलग-अलग पारम्परिक पद्धति से कृषि कार्य किये जाते रहें हैं तथा स्थानीय संसाधानों के अनुरूप कृषि कार्य विविध विधि से होती रही है।

बुन्देलखण्ड की पारम्परिक कृषि पद्धति से आमजन को रू-ब-रू कराने के उद्देश्य से मेरे द्वारा बुन्देलखण्ड के पारम्परिक कृषि उपकरणों को संरक्षित किया गया है, जिसे देखकर हम अपने पूर्वजों की दूरदृष्टि, कलाप्रियता, प्रकृति प्रेम व उनकी आत्मनिर्भर जीवनशैली को अच्छे से समझ सकते हैं।

जन्म से 50 वर्ष की उम्र तक मुझे अपनी जन्म भूमि ग्राम खैजराबाग में रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। जिससे बुन्देली लोक जीवन को नजदीक से देखने-समझने और उसका हिस्सा बनने का अवसर मिल सका। मुझे खूब याद है जब मैं दुलिया में बीज भर कर गले में टांगकर नारी (हल) के साथ-साथ चलकर खेत में बीज बोने का कार्य करता था। बीज बोने वाले को बोका कहता जाता था। नारी (हल) से बीज बोने से समय अधिक लगता था, जिस कारण रात्रि में भी बीज बोने बोनीद्ध का कार्य किया जाता था। रात्रि में प्रकाश (उजाला) दिखाने के लिये एक व्यक्ति भवका या लालटेन लेकर नारी के साथ-साथ चलता था। सभी खेतों में जुगनू सी टिमटिमाती रोशनी के साथ बिलवारी गीतों की मुधर ध्वनि सुनकर मन आनन्दित हो उठता था, लेकिन आज यह सब कहानी में बदल गया है।

परम्परागत कृषि पद्धति प्राकृतिक संसाधनों एवं आत्मनिर्भर जीवनशैली पर आधारित थी, जबकि वर्तमान कृषि पद्धति आधुनिक तकनीक, रासायनिक खादों और रासायनिक कीटनाशकों पर आधारित है। आधुनिक कृषि पद्धति से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है, लेकिन फसल की गुणवत्ता में कमी आ रही है, साथ ही कृषि भूमि विषाक्त हो रही है। आधुनिक कृषि पद्धति, भूमि पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य के लिये हानिकारक है। बुन्देली कहावत है कि पहलो सुख निरोगी काया'। अतः हम सभी को चाहिये कि हम अपने पूर्वजों द्वारा स्थापित पारम्परिक कृषि पद्धति की ओर लौटें, इसे अपनाये जिससे आने वाली पीढ़ी के लिये हम स्वस्थ पर्यावरण और उत्तम स्वास्थ्य प्रदान कर सकें।

हल (हर)-खेत की मिट्टी को 6-7 इंच की गहराई तक खोदने या पलटने वाले कृषि उपकरण को हल कहते हैं। दो बैलों की सहायता से किसान इसे खेत में चलाते है। यह लकड़ी से बना होता है।

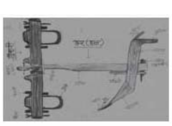

हल में लगने वाले छोटे-बडे कल पुर्जे: हरीश (यह 10 से 12 फुट लम्बी लकड़ी होती है), पड़हारी, पटिया, मुठिया, कांटे 3, चुटकी (टॉच), फार, गॉगरों, जुआरी, सैला, पंचारी, जोत, निहना, हरैनी, परैना (खोलिया, अरई), पगैया।

बखर (कव्वा)-खेत में 2-3 इंच गहराई तक मिट्टी को पलटने के लिये व खरपतवार नष्ट करने के लिये बखर का उपयोग किया जाता है। यह लकड़ी से निर्मित होता है तथा दो बेलों की सहायता से किसान इसे खेत में चलाता है ।

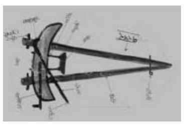

बखर में लगने वाले छोटे-बडे कल पुर्जे: डॉड़ी-2, लोड़, निजौना, मुठिया, दतुआ, पांस, कुरौरा, हरैनी, चुटकी, परैना (खोलिया, अरई), जुआंरी, सैला, पंचारी, जोत, निहना, पगैया ।

नारी - हल से खेत में बीज बोने वाले पारम्परिक कृषि उपकरण को बुन्देलखण्ड में नारी कहते हैं। यह लकड़ी से बनी होती है तथा दो बैलों की सहायता से इसे किसान खेत में चलाते है, बीज बोने वाला बोका नारी के साथ-साथ चलकर खेत में बीज बोता है।

नारी में लगने वाले छोटे-बड़े कल पुर्जे- हरीश (यह 10 से 12 फुट लम्बी होती है), पड़हारी, पटिया, मुठिया, चुटैया, कांटे-3, चुटकी (टॉच), फार, थपरी, कनपट्टा, पोर, चाड़ी, दुलिया, गॉगरों, जुऑरी, सैला, पंचारी, जोत, निहना, हरैनी, परैना (खोलिया, अरई), पगैया ।

4. **बैलगाड़ी**-बैलगाड़ी से फसल एवं खाद, घांस, लकड़ी, भूसा आदि के ढोने के साथ-साथ समस्त कृषि कार्यो में मालवाहक के रूप में इसका उपयोग किया जाता है।

रहट - कुऐ से सिचाई हेतु रहट का उपयोग किया जाता रहा है। रहट कुऐ के ऊपर बीचो-बीच फिट रहता है तथा 10 से 15 फुट की गोल आकृति में एक चक्र सा बना होता है। जिसके ऊपर माला की तरह एक के बाद एक पानी के कटोरा (वर्तन) बंधे रहते हैं। दो बैलों की सहायता से इसे गोल आकृति में चलाया जाता है। रहट चलने पर पानी के भरे वर्तन ऊपर आते एवं खाली वर्तन नीचे चले जाते हैं। इस प्रकार रहट में बंधे वर्तनों के खाली भरने का क्रम सतत् चलता रहता है ।

चरखा- कुआ से सिचाई हेतु चरसा का भी उपयोग किया जाता रहा है। यह मृत पशु के चमड़े से बनाया जाता है। चरसा के द्वारा एक बार में लगभग 200 लीटर पानी कुऐ से निकाला जा सकता है। चरसा से सिचाई करने हेतु कुऐ के किनारे पर एक घाट या ठिया बनाया जाता है जिस पर ऊपर-नीचे दो बेलन लगे होते हैं। चरसा के दोनो हिस्से रस्सी से बधे होते है, जिन्हें दो बैलों के द्वारा बेलन की सहायता से खीचा जाता है।

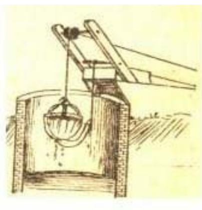

सिंचाई के परम्परागत साधन

मीठ - कुआ से मीठ के द्वारा सिचाई करने में लकड़ी के टोल टेक्स वैरियर जैसा ही सिस्टम कार्य करता है। मीठ के द्वारा सिंचाई हेतु कुऐ के पास दो खड़ी लकड़ी गाड़ देते है, फिर 12 से 20 फुट की एक लम्बी लकड़ी लेकर उसके अग्र भाग में पानी का एक बड़ा वर्तन बांध दिया जाता है तथा उसके पिछले भाग को जमीन में गड़ी लकड़ियों के मध्य में कील के सहारे जोड़ देते है । एवं पिछले भाग पर पत्थर आदि बांध कर वजन दे देते है । इस लम्बी लकड़ी को थोडा दबाने से वह कुए के नीचे चली जाती है, और बधां हुआ बर्तन पानी से भर जाता है। फिर इस लकड़ी को छोड़ देने पर उसके पिछले हिस्से पर वजन बंधा होने से वह धीरे-धीरे ऊपर आ जाती है।

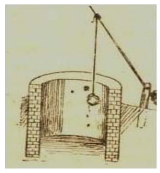

बैलगाड़ी में लगने वाले छोटे-बड़े कल-पुर्जे

चका-पूठा-6, गज-12, आऊन, नाहें, अन्दा हाल।

भौरा-धुरी, धुर खीला, पट्टा, चखला, चखीला ।

ढाची-धुरा- 2, धुरखीला-2, पटला, पटली, बागड़ा-2, कटारो, घुरिया, मुड़ी, हॅकनी, खडेलुआ ।

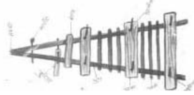

बॉगड़ा- पटला, पटली के ऊपर कसाव हेतु दोनों तरफ लगाई जाने वाली लम्बी लकड़ियां ।

मुड़ी-बैलगाडी में बैठे व्यक्ति अथवा सामग्री को सुरक्षात्मक दृष्टि से सहारा देने के लिये यह बैलगाड़ी के दोनों तरफ लगाई जाती है।

खड़ेलुभा - यह बैलगाडी के दोनो तरफ तीन-तीन लगे होते हैं, जो बैलगाडी में रखे सामान को साधने में सहायक होते है।

जुऑरी-सेला, पंचारी, जोत, निहना पगेया ।

ढबूआ- खेत की फसल को किसान के द्वारा रखवाली करने हेतु धूप-पानी से बचाव हेतु घास-पूस से निर्मित गोलाकार झोपड़ी।

खलिहान में उपयोग होने वाले कृषि उपकरण

- मैड़ी-लकड़ी का गोल खम्बा जिसका नुकीला हिस्सा जमीन में गड़ा रहता है।
- गड़ान-गहाई करने हेतु बेलों को बाँधने की के म्यक कृषि उप जंजीर ।

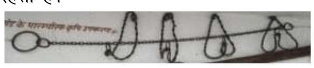

- कानी-गड़ान की जंजीर में लगी बैलों को अलग-अलग बाँधने हेतु कानी।

स्वदेशी उत्पादों को अपनाने से मजबूत होगी अर्थव्यवस्था

माधव पटेल दमोह (म.प्र.)

हाल ही में ऑपरेशन सिंदूर के बाद से बहुत सारे तथ्य और बातें निकाल कर आई है जिन पर हम सभी लोगों को एक जिम्मेदार नागरिक होने के नाते ध्यान देने की आवश्यकता है।हालांकि यह कोई युद्ध नहीं था केवल एक युद्ध अभ्यास जैसा घटनाक्रम था और महज दो दिन में ही शत्रु देश की ओर से युद्धविराम के लिए अपील की जाने लगी।परंतु यह दो दिन का समय भी हमारे लिए बहुत सारे प्रश्न और बातें हमारे आगे के व्यवहार के लिए छोड़ गया।आज सबसे बड़ी आवश्यकता है देश को आर्थिक रूप से समृद्ध करने की इसमें जितना योगदान शासकीय नीतियों,रणनीतियों का है उससे कहीं अधिक योगदान हम आम नागरिकों के दैनिक दिनचर्या का है हमें इस छोटे से युद्ध अभ्यास से पता चला कि कौन देश हमारे अपने हैं कौन से हमारे विरोध में खड़े थे अब बात आती है कि क्या किया जाए तो एक जिम्मेदार नागरिक होने के नाते हम स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने की आदत डाले और इसके लिए मुहिम चलाएं तो निश्चित रूप से देश में रोजगार का सृजन के साथ हमारे बहुत सारे युवाओं को रोजगार मिलेगा और हमारे देश का पैसा देश में ही रहने से देश की अर्थव्यवस्था और अधिक मजबूत होगी।यह बहुत ही प्रसन्नता का विषय है कि आज हम दुनिया की चौथी अर्थव्यवस्था बन गए हैं परंतु इस स्थिति को बनाए रखने के लिए और इस स्थान में सुधार करने के लिए जरूरी है कि हम सभी लोगों में स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग की आदत का विकास करें यदि हम देखें तो सभी क्षेत्रों में जिन उत्पादों का हम उपयोग कर रहे हैं लगभग सभी के स्वदेशी विकल्प मौजूद है केवल आवश्यकता है अपनी मनोदशा में परिवर्तन करने की हमारे स्वदेशी उत्पाद किसी भी मापदंड में दूसरे उत्पादों से कम नहीं है केवल उनका व्यापक प्रचार प्रचार न होने से लोगों को उनकी उपलब्धता की जानकारी नहीं है इसके साथ-साथ जरूरी है कि हम विद्यालयों के पाठ्यक्रम में भी स्वदेशी भाव जागृत करने के लिए कुछ पाठ्य सामग्री जोड़े। वर्तमान में जो विदेशी उत्पाद प्रचलन में हैं उनके स्वदेशी विकल्पों का व्यापक प्रचार प्रचार किए जाने की आवश्यकता है।हालांकि स्वदेशी भावना का प्रचार प्रसार स्वदेशी जागरण मंच,स्वावलंबी भारत अभियान के द्वारा निरंतर किया जा रहा है परंतु इसे आम लोगों का आंदोलन बनाने की आवश्यकता है जब यह विचार हमारी जीवन शैली में सम्मिलित हो जाएंगे तो फिर बिना किसी प्रयास के लोग स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग में झिझक नहीं करेंगे स्वदेशी वस्तुओं को अपनाने से देश का आर्थिक विकास होगा स्वदेशी उत्पादों के उपयोग से घरेलू उद्योगों को बढ़ावा मिलता है, जिससे रोजगार के अवसर बढ़ते हैं और देश की अर्थव्यवस्था मजबूत होती है।

स्वदेशी उत्पाद अपनाने से विदेशी मुद्रा की बचत होगी स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग करके, देश विदेशी मुद्रा की बचत करता है, जो आयात पर खर्च होती थी।स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग करने से स्थानीय उद्योगों का विकास होगा स्वदेशी का उपयोग स्थानीय उद्योगों को बढ़ावा देता है, जिससे वे विकसित होते हैं और रोजगार सृजित करते हैं जो आर्थिक मजबूती के साथ-साथ समाज के प्रत्येक वर्ग में आर्थिक समानता का प्रसार करने में सहयोग मिलेगा क्योंकि छोटी-छोटी इकाईयां स्वदेशी वस्तुओं का उत्पादन करेंगी तो उससे अर्जित बचत की राशि निचले स्तर तक सभी व्यक्तियों तक संचित होती रहेगी इसलिए आइए हम संकल्प लें कि हम स्वयं स्वदेशी वस्तुओं को अपनाकर कम से कम पांच लोगों को स्वदेशी वस्तुएं अपनाने के लिए प्रेरित करने का कार्य करेंगे।

सुन्दरजा आम मध्यप्रदेश के सभी आमों में सर्वश्रेष्ट: डॉ. पाटिल

रीवा। अखिल भारतीय समन्वित फल अनुसंधान परियोजना आईसीएआर बेंगलूरू से आए फल परियोजना समन्वयक डा़ प्रकाश पाटिल ने फल अनुसंधान केन्द्र, कृषि महाविद्यालय रीवा के कुठुलिया में आम और अमरूद में चल रहे अनुसंधान कार्य को देखा और प्रोजेक्ट इंचार्ज डॉ टीके सिंह के कार्य को सराहा और बधाई दी। डॉ पाटिल सुबह सुबह आम और अमरूद के बगीचों का भ्रमण कर गहन निरीक्षण करते हुए शोध कार्य में लगे वैज्ञानिकों डॉ टीके सिंह, डॉ. अखिलेश कुमार, डॉ के एस बघेल, डॉ. सौरव सिंह एवं सुधीर सिंह से विभिन्न प्रयोगों में हो रहे कार्य की जानकारी ली और मार्गदर्शन किया। इस अवसर पर रीवा के प्रगतिशील कृषकों, वैज्ञानिकों एवं छात्र-छात्राओं द्वारा आम दिवस मनाया गया जिसके मुख्य अतिथि डॉ. प्रकाश पाटिल, अध्यक्षता डॉ एसके त्रिपाठी अधिष्ठाता कृषि महाविद्यालय एवं विशिष्ट अतिथि डॉ अजीत प्रताप सिंह, अधिष्ठाता, पशु चिकित्सा महाविद्यालय रीवा थे। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि को अधिष्ठाता कृषि महाविद्यालय ने श्रीफल, मोमेंटो एवं शाल से सम्मानित किया। परियोजना के इंचार्ज डॉ टीके सिंह ने बताया कि यहां पर आम की 237 प्रजातियां अनुसंधान कार्य के लिए उपलब्ध है जिसमें प्रमुख रूप से जी आई टैग से प्रमाणित सुन्दरजा, लंगड़ा, दशहरी, आम्रपाली, चौंसा, इरवीन, मल्लिका, बॉम्बे ग्रीन, तोतापरी, कृष्ण भोग, नीलम फजली इत्यादि है द्य इसके उपरांत डा़ पाटिल और वैज्ञानिकों की टीम ने अमरपाटन के प्रतापगढ़ी गाँव के कृषक पुष्पेन्द्र सिंह के यहां लगे आम और अमरूद के बगीचों का भी भ्रमण किया। कार्यक्रम में वैज्ञानिक डॉ. राजेश सिंह, डॉ अखिलेश कुमार, डॉ के एस बघेल, डॉ सौरव सिंह, संदीप शर्मा, सुधीर सिंह भाग लिए। इस अवसर पर संत सिंह और डॉ दिलीप नामदेव कृषको ने भाग लिया।

इंदौर के औद्योगिक क्षेत्र में बिजली प्रदाय सुधार के लिए गंभीरता से प्रयास

इन्दौर। मप्र पश्चिम क्षेत्र विद्युत वितरण कंपनी इंदौर शहर के औद्योगिक क्षेत्र में बिजली प्रदाय में गुणात्मक सुधार के लिए गंभीरता से प्रयास कर रही हैं। कंपनी के प्रबंध निदेशक अनूप कुमार सिंह के निर्देश पर सुधार कार्य की प्रति सप्ताह समीक्षा भी की जा रही हैं। शहर अधीक्षण यंत्री दिलीप कुमार गाठे ने बताया कि सांवेर रोड, पालदा, उज्जैन रोड, राऊ, धार रोड जीएनटी मार्केट, पोलोग्राउंड इत्यादि क्षेत्र के उद्योग संचालकों, औद्योगिक संगठनों के पदाधिकारियों से बिजली अधिकारियों का सतत संवाद जारी हैं, ताकि उनकी परेशानी खत्म हो, सुझावों पर अमल लाया जा सके।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
मध्य प्रदेश

खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी)- रोकथाम एवं उपचार के उपाय

✍ **डॉ. मारिया खान** जूनियर वेट्नेरी ऑफिसर, संवेदना डेवलपमेंट सोसायटी, बी.एफ.आई.एल. - सी.एस.आर., एस.आर.एल.एम., जिला रायसेन (म.प्र.)

✍ **डॉ. असद खान** पीएच.डी. शोधार्थी, पशु आनुवांशिकी एवं प्रजनन प्रभाग, भा.कृ.अनु.प.- राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान, करनाल (हरियाणा)

खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी) एक गंभीर, अत्यधिक संक्रामक विषाणुजनित रोग है जो मुख्यतः गाय, भैंस, बकरी, भेड़ एवं शूकर जैसे दो खुर वाले पशुओं को प्रभावित करता है। यह एक संक्रामक रोग है, जो केवल रोगग्रस्त पशुओं के संपर्क से ही नहीं, बल्कि चारा, दाना, पानी और हवा के माध्यम से भी फैलता है। यद्यपि इससे मृत्यु दर बहुत कम होती है, परंतु मादा पशुओं में दूध उत्पादन में भारी कमी आती है, उनकी गर्भधारण क्षमता प्रभावित होती है, तथा बैल और भैंस जैसे कार्यशील पशुओं की कार्यक्षमता पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी) रोग के प्रमुख लक्षण

- अचानक तेज बुखार आना, पशु का बेचैन रहना तथा खाना-पीना बंद कर देना।
- दुध उत्पादन में लगभग 80 प्रतिशत तक कमी आनाय गर्भवती मादा पशुओं में गर्भपात होना या मृत बछड़े का जन्म होना।
- मसूड़ों, जीभ और खुरों में फफोले पड़ना, जो फूटने पर घाव का रूप ले लेते हैं।
- मुंह में छाले होने के कारण झागदार लार निकलना, भोजन लेना और जुगाली करना बंद कर देना
- खुरों में छाले होने के कारण पशु लंगड़ाने लगते हैं या चलना बंद कर देते हैं।
- बछड़ों में अत्यधिक बुखार के बाद बिना स्पष्ट लक्षणों के अचानक मृत्यु हो जाना।

खुरपका एवं मूँहपका रोग (एफएमडी) रोग से बचाव के आसान उपाय

रोगग्रस्त पशु को अलग रखें

- उसे साफ, सूखी और हवादार जगह पर रखें। स्वस्थ पशुओं से दूर रखें और इधर-उधर न जाने दें।
- खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी) फैलने पर अथवा फैलने की संभावना होने पर पशुओं को सामूहिक चराई के लिए ना भेजे तथा पशुओ के जलपान के लिए आम स्रोत जैसे तालाब अथवा नदी के समीप न भेजें।
- खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी) प्रभावित छेत्र मे पशुओ की खरीदी ना करें।

सभी स्वस्थ पशुओं का नियमित टीकाकरण कराएं

चार माह से ऊपर के सभी स्वस्थ पशुओं को

पशुचिकित्सक के परामर्श अनुसार एफएमडी का टीका लगवाएं। पहले प्राथमिक टीका लागवाएं उसके 4 सप्ताह बाद बूस्टर टीका फिर हर 6 महीने में नियमित टीकाकरण करवायें।

- प्रत्येक 6 माह में पशु को पशुचिकित्सक के परामर्श अनुसार कृमिनाशक दवा दें।

नए पशु को तुरंत झुंड में न मिलाएं

उन्हें 14 दिवसों तक अलग बांधें एवं उनका चारा-पानी अलग रखें।

पशुओं को पौष्टिक आहार दें

पशुओं के खाने में पशुचिकित्सक के परामर्श अनुसार विटामिन और खनिज (मिनरल्स) की सही मात्रा दें, ताकि उनकी रोगों से लड़ने की ताकत बढ़े।

खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी) रोग का उपचार

- पशु के मुंह एवं खुर में छाले अथवा घाव परिलक्षित होने पर तुरंत नजदीकी पशुचिकित्सक से संपर्क करें।
- लाल दवा (पोटैशियम परमैग्नेट) के हल्के घोल से पशु के मुंह और खुर के छाले एवं घावों को धोएं।
- मुंह के घावों पर पशुचिकित्सक द्वारा बताई गई औषधियाँ लगाएं।
- पशु चिकित्सक द्वारा परामर्शित दवाओं को पशु को नियमित समयान्तराल पर देवें।
- पशु चिकित्सक से तुरंत सलाह लें एवं यदि आवश्यक हो तो पशु का प्रयोगशाला (लैब) में परीक्षण करवाएं।
- यदि गांव अथवा झुंड में खुरपका-मुंहपका रोग फैल गया हो तो रोगी पशु को अलग करें और साफ-सुथरी जगह पर रखें तथा निकटतम सरकारी पशु चिकित्सालय को तुरंत सूचित करें।
- बीमारी फैलने से रोकने के लिए पूरे प्रभावित क्षेत्र को 4% सोडियम कार्बोनेट घोल (400 ग्राम सोडियम कार्बोनेट को 10 लीटर पानी में मिलाकर) या 2% सोडियम हाइड्रॉक्साइड (NaOH) के घोल का दिन में दो बार छिड़काव करें, और यह प्रक्रिया 10 दिन तक दोहराएं।
- रोगी पशु के स्पर्श के बाद स्वयं के कपड़े, चप्पल अथवा जूते को 4% सोडियम कार्बोनेट घोल से साफ करें। यद्यपि खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी) एक पशुजन्य (जुनोटिक) रोग नहीं है किन्तु मानव इस रोग के वाहक का कार्य कर सकते हैं।

यद्यपि खुरपका एवं मुंहपका रोग (एफएमडी) में सामान्यतः मृत्यु दर अन्य संक्रामक रोगों की तुलना में कम होती है फिर भी इसके कारण होने वाली दुग्ध हानि, गर्भपात, और कार्यशील पशुओं की कमजोरी से पशुपालकों को भारी नुकसान उठाना पड़ता है। इस रोग की सही समय पर पहचान, रोगी पशुओं को अलग रखना, पशु चिकित्सक के परामर्श अनुसार उचित दवा और उपचार कराना तथा नियमित टीकाकरण एवं कृमिनाशन जैसी सावधानियाँ अपनाकर इसे प्रभावी रूप से रोका जा सकता है। साथ ही, स्वच्छता, पोषण, और जैव-सुरक्षा उपायों का पालन करके न केवल इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है, बल्कि पशुधन को लंबे समय तक स्वस्थ और उत्पादक बनाए रखा जा सकता है।

दीमक नियंत्रण उपाय

डॉ. सत्यनारायण सोनी (कृषि अर्थशास्त्र विभाग) कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केंद्र, रायगढ़ (छ.ग.)

1.दीमक नियंत्रण के देशी उपाय

दीमक पोलीफेगस कीट होता है, यह सभी फसलों को बर्बाद करता है। देश में फसलों को करीबन 45 प्रतिशत से ज्यादा नुकसान दीमक से होता है। आमतौर पर सभी फसलों में दीमक का प्रकोप होता हैं। फल वृक्षों में दीमक प्रमुख रूप से आम, नींबू, अमरूद, चीकू और अनार का शत्रु है। दीमक पौधों की जडों और भूमि से सटे हुए तने के भाग को खोखला कर देती हैं दीमक का नियंत्रण करने के लिये निम्न उपाय करने चाहिये।

खेत में सफेदे की सूखी लकड़ी गाड़कर

फसलों को दीमक से बचाने के लिए सफेदे की सुखी लकड़ी के दो फुट लम्बे दो इंच मोटे टुकड़ों को फसल के बीच में जगह-जगह रखने से फसल को दीमक नहीं लगती। सफेदे की लकड़ी को दीमक ज्यादा लगती है। इसलिए विभिन्न स्थानों पर रखे इन लकड़ी के टुकड़ों में दीमक लग जाने से फसल बच जाती है और लकड़ी के टुकड़ों को निकाल कर जला दें।

भुट्टे की गिण्डयों से

मक्का के भुट्टे से दाने निकालने के बाद जो गिण्डयां बचती है उन्हें (8-10 गिण्डी) एक मिट्टी के घड़े से एकत्रित कर लें। इस घड़े को खेत में इस प्रकार गाडें की घड़े का मुँह जमीन से एक इंच ऊपर रहे। घंडे के मुँह पर छिद्रदार सूती कपड़ा बांधे। कुछ दिनों में ही आप देखेंगे कि घड़े में दीमक भर गयी है। इसके बाद घड़े को बाहर निकाल कर गर्म करें, ताकि दीमक मर जाये। इस प्रकार के घड़े का खेत में 100-100 मीटर की दूरी पर गाढ़ दे। करीब 3-4 बार गिण्डिया बदलकर यह क्रिया दोहराने से खेत की पूरी दीमक समाप्त हो जायेगी। खेत में लहसुन की खेती करने से दीमक की समस्या खत्म हो सकती है।

नीम पत्ती का घोल

नीम की 10-12 किलो पत्तियाँ, 200 लीटर पानी

में, 4 दिन तक भिगोयें। पानी हरा पीला होने पर इसे छानकर, एक एकड़ की फसल पर छिड़काव करें। नीम की निंबोली 2 किलो लेकर महीन पीस ले. इसमें 2 लीटर ताजा गौमूत्र मिला ले। इसमें 10 किलो छाछ मिलाकर 4 दिन रखें और 200 लीटर पानी मिलाकर खेतों में फसल पर छिड़काव करें।

नीम का तेल

खड़ी फसल में दीमक नियंत्रण के लिए 4 लिटर नीम का तेल प्रति हैक्टयर की दर से सिंचाई के पानी के साथ देवें अथवा 50-60 किलो बजरी में मिलाकर बुरकाव कर सिंचाई करें।

अरण्डी की खली

दीमक प्रभावित क्षेत्रों में 500 किलो अरण्डी की खली प्रति हैक्टयर की दर अन्तिम जुताई के समय भूमि में मिलाएं। अरण्डी की खली खेत में सीधे डालने पर देर से विघटित होती है अतः खेत में डालने से आधा घंटा पूर्व पानी से गीला कर लें और पाउडर बनाकर खेत में डालें

2.दीमक नियंत्रण के जैविक उपाय

मेटाराइजियम एनिसॉपलाई मित्र फफूंद

फसलों में दीमक की रोकथाम के लिए 2.5 से 5 किलो मेटाराइजियम 100 किलोग्राम सड़ी गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट अथवा केंचुआ खाद में मिलाकर 72 घंटे संवर्धन करें जिससे माईसीलियम वृद्धि कर सके। इसे बुवाई से पूर्व अथवा प्रथम निराई-गुड़ाई के बाद अथवा खड़ी फसल में एक हैक्टयर में छिड़काव कर सिंचाई करें। मित्र फफूंद मेटाराइजियम लम्बे समय तक असरदार, लाभकारी, वातावरण और भूमि प्रदूषण रहित, मनुष्यों- पशुओं के लिए सुरक्षित है। निर्माण तिथि से 120 दिन के अन्दर उपयोग करें। मित्र फफूंद के उपचार से पूर्व अथवा बाद में रसायनों का उपयोग नहीं करें।

ब्यूवेरिया बेसियाना मित्र फफूंद

2.5 किलो ब्यूवेरिया को 100 किलोग्राम सड़ी गोबर की खाद अथवा कम्पोस्ट अथवा केंचुआ खाद में मिलाकर 72 घंटे नमी की अवस्था में ढंक कर रखें। ताकि, माईसिलियम वृद्धि कर सके। तैयार संवर्धन का खड़ी फसल में छिड़काव कर सिंचाई करें। फफूंद शरीर में ब्यूवेरिया नामक जहरीला स्त्राव बनाता है जो कीट की प्रतिरोधक क्षमता को नष्ट करता है जिससे कीट मर जाता है। फलदार पौधों में 50-100 ग्राम फफूंद संवर्धन प्रति पौधे को उम्र के हिसाब से देवे।

ट्राइकोडर्मा

यह एक ऐसा जैविक फफूंद नाशक है जो पौधों में मृदा और बीज जनित बीमारियों को नियंत्रित करता है। बीजोपचार में 5-6 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपयोग किया जाता है। मृदा उपचार में एक किलोग्राम ट्राइकोडर्मा को 25 किलोग्राम अच्छी सड़ी हुई गोबर में मिलाकर अंतिम बखरनी के समय प्रयोग करें।

3.दीमक नियंत्रण के रासायनिक उपाय

खरीफ- रबी की फसल की कटाई के बाद खेत की गहरी जुताई करें। खेत में बचे हुये डण्ठल, घास, जड़ें और कचरे को एक जगह इकट्ठा कर जला देवें। अच्छी प्रकार सड़ी हुई खाद का प्रयोग करें। क्योंकि गोबर की कच्ची खाद का प्रयोग करने से दीमक का प्रकोप बढ़ जाता है। खाद में दीमक लगी हो तो क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण मिला दीजिये। नीम की खली का प्रयोग हितकर हैं, क्योंकि इसकी गंध दीमक दूर भागती है। एक किलोग्राम बीज कों 4 मिली. क्लोरोपायरीफेंस से उपचारित करें।

बुवाई करने से पहले खेत में क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हैक्टयर की दर से अंतिम जुताई के समय मिट्टी में अच्छी तरह मिला देवें। खड़ी फसल में दीमक की रोकथाम के लिये चार लीटर क्लोरोपायरीफॉस 20 ई.सी. सिंचाई के साथ प्रति हैक्टयर दें। फलों के वृक्षों के तने के पास जमीन में क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत मिलाकर रख देवें या तरल क्लोरोपायरीफॉस (20 ई.सी.) पानी में मिलाकर सिंचाई करनी चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

✍ **अभिषेक राजपूत** (शिक्षण सहयोगी) पशु चिकित्सा शरीर रचना विभाग, पशु चिकित्सा विज्ञान एवं पशुपालन महाविद्यालय, डीएसवीसीकेवी, दुर्ग (छ.ग.)

वर्षा ऋतु और पशुपालनः सुरक्षा, स्वच्छता और सतर्कता

भारत में वर्षा ऋतु को जीवनदायिनी ऋतु कहा जाता है। यह ऋतु खेतों में हरियाली और तालाबों में पानी लेकर आती है, लेकिन साथ ही लाती है कई चुनौतियाँ– विशेषकर पशुपालन के क्षेत्र में। खेतों की तरह हमारे पशु भी इस मौसम से प्रभावित होते हैं। जहां खेतों में उर्वरता बढ़ती है, वहीं पशुओं को बीमारियाँ, कीचड़, चारा सड़ने, और मक्खी-मच्छरों से जुड़ी समस्याओं का सामना करना पड़ता है।

यदि समय पर सावधानी नहीं बरती गई, तो यह मौसम दूध उत्पादन, पशु स्वास्थ्य और प्रजनन क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। आइए विस्तार से समझते हैं कि वर्षा ऋतु में पशुओं की उचित देखभाल कैसे करें।

1. वर्षा ऋतु में सामान्य जोखिम

वर्षा ऋतु में पशुपालकों को निम्नलिखित समस्याओं का विशेष ध्यान रखना चाहिएः

- आश्रय में नमी और कीचड़
- चर्म रोग (फंगल इंफेक्शन, गलघोटू आदि) संक्रामक रोगों का प्रसार (लंपि, गलघोटू, एफ एमडी)
- मक्खी, मच्छर और कीड़े-मकोड़ों का अत्यधिक प्रकोप
- सड़ा हुआ या फफूंद लगा चारा
- पानी में कीड़े और बैक्टीरिया का बढ़ना
- फिसलन की वजह से चोट लगना

2.पशु आश्रय की देखभाल

a. शेड की सफाई और सूखापनः

- पशुशाला को हमेशा सूखा और साफ़ रखें।
- फर्श को ढलावदार बनाएं ताकि पानी जमा न हो।
- ब्लीचिंग पाउडर या फिनाइल का छिड़काव नियमित करें।

b. छत और दीवारों की मरम्मतः

- लीक वाली छत को ठीक करें।
- दीवारों में दरारें या नमी दिखे तो सफेदी या चूने का छिड़काव करें।

c. वेंटिलेशनः

वर्षा ऋतु में हवा का प्रवाह भी जरूरी है ताकि अंदर नमी जमा न हो।

3.पशुओं की त्वचा और शरीर की देखभाल

a. चर्म रोगों से बचावः

- फंगल संक्रमण, गलघोटू, एक्जिमा जैसी बीमारियाँ इस मौसम में आम हैं।
- सप्ताह में 1-2 बार पौटाश का पानी या नीम की पत्तियों से नहलाना लाभकारी होता है।

b. सूखा रखना जरूरीः

- पशु भीग जाएं तो सूखे कपड़े से पोंछें।
- अगर शरीर में चोट या फोड़ा हो, तो डॉक्टर की सलाह से एंटीसेप्टिक क्रीम लगाएं।

4.आहार और चारा प्रबंधन

a. सड़ा या गीला चारा न देंः

- वर्षा में हरा चारा जल्दी सड़ जाता है, जिससे अमाशय विकार और अफरा हो सकता है।
- चारा को ऊँचाई पर, प्लास्टिक शीट से ढँककर रखें।

b. न्यूट्रिशनल सप्लीमेंटः

- विटामिन A, E और मिनरल मिक्सचर देने से रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है।

c. सूखा चारा और खली का संतुलनः

- हरे चारे की अधिकता के कारण सूखा चारा व खली देना न भूलें। यह पाचन को संतुलित करता है।

5.पानी की स्वच्छता

a. साफ और बायोफिल्टर युक्त पानी देंः

- गंदा पानी दस्त और पेट के संक्रमण का कारण बनता है।
- पानी की टंकियों की सप्ताह में दो बार सफाई करें।

b. ब्लीचिंग पाउडर या फिटकरी का प्रयोगः

- 100 लीटर पानी में 1 ग्राम ब्लीचिंग पाउडर मिलाकर संक्रमण रोका जा सकता है।

6. मक्खी-मच्छर और कीट नियंत्रण

वर्षा ऋतु में इन कीड़ों से पशुओं को बहुत परेशानी होती हैः

a. कीट भगाने वाले उपायः

- शेड में नीम का धुआँ करें।
- पशु पर नीम तेल या हर्बल रिपेलेंट लगाएं।

b. बाड़े के चारों ओर चूने और डीडीटी का छिड़काव करें।

c. गोबर और गंदगी को जल्दी-से-जल्दी हटाएं।

7. रोगों से बचाव एवं टीकाकरण

a. प्रमुख रोगः

- गलघोटू, लंपी, एफएमडी, खुरपका-मुंहपका, कीटजन्य बुखार (Trypanosomiasis)

b. टीकाकरण और दवा प्रोटोकॉलः

- वर्षा ऋतु से पहले या प्रारंभ में ही इन रोगों के लिए टीकाकरण करवा लें।
- कीटनाशक डिप या इंजेक्टेबल एंटीपैरासाइटिक्स डॉक्टर की सलाह से उपयोग करें।

8. बछड़ों और गर्भित पशुओं की देखभाल

- बछड़े वर्षा में जल्दी बीमार होते हैं। इन्हें सूखे, गर्म स्थान में रखें।
- गर्भित पशुओं को फिसलन भरे क्षेत्र में न ले जाएँ, अन्यथा गर्भपात का खतरा हो सकता है।
- गर्भधारण के अंतिम महीनों में पोषक आहार और अतिरिक्त देखभाल आवश्यक है।

9. पैर और खुरों की देखभाल

- कीचड़ और गंदगी से खुर गलन (स्नश्शह्ल ह्स्शह्ल) होने का खतरा रहता है।
- सप्ताह में एक बार 1त्न कॉपर सल्फेट या 5त्न फॉर्मालीन वाले पैर डुबो तालाब में पैर धोएं।
- फटे या फिसलने वाले खुरों की छंटाई करें।

10. घरेलू उपाय और पारंपरिक ज्ञान

- नीम, तुलसी, हल्दी, फिटकरी आदि प्राकृतिक उपचारों से रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाई जा सकती है।
- नीम की पत्तियाँ जलाकर धुआं करने से मच्छर और मक्खी भागते हैं।
- हल्दी और नारियल तेल मिलाकर लगाने से फोड़े-फुंसी में राहत मिलती है।

11.पशुपालकों के लिए विशेष सुझाव

सावधानी	लाभ
सूखी और साफ़ पशुशाला	संक्रमण से बचाव
टीकाकरण और कीटनाशक समय पर	रोगों की रोकथाम
पौष्टिक आहार और स्वच्छ पानी	दुग्ध उत्पादन में वृद्धि
नमी और फिसलन से बचाव	चोट व गर्भपात से बचाव
कीट नियंत्रण	त्वचा रोग और बेचैनी से राहत

निष्कर्ष

वर्षा ऋतु जितनी आवश्यक है, उतनी ही सावधानी की भी मांग करती है। खेतों की उर्वरता तभी फलती-फूलती है जब पशु स्वस्थ हों। पशुओं की छोटी-छोटी जरूरतों का ध्यान रखकर आप दुग्ध उत्पादन बढ़ा सकते हैं, रोगों से बच सकते हैं और अर्थिक नुकसान से सुरक्षित रह सकते हैं। पशुओं को सिर्फ भोजन और पानी नहीं चाहिए, उन्हें संवेदनशील देखभाल, सुरक्षित वातावरण और समय पर स्वास्थ्य सेवाएँ भी चाहिए। वर्षा ऋतु में सतर्क पशुपालक ही सफल पशुपालक होता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

डॉ. दिव्या महिलाने, डॉ. डी.के जोल्हे
डॉ. रजनी फ्लोरो कुजुर, डॉ. प्रीती सिंह
डॉ. पीयूष कुमार, डॉ. योगेश नाग
पशु विकृति विज्ञान विभाग, पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, अंजोरा, दुर्ग (छ.ग.)

मुर्गियों में टीकाकरण–पक्षियों की रोग प्रतिरोधक क्षमता में सुधार करना

उद्देश्य एवं फायदे - पोल्ट्री प्रजातियाँ, विशेष रूप से घरेलू मुर्गियों अपने मांस या अंडो के लिए सबसे व्यापक रूप से पाले जाने वाले प्रजातियों में से एक है। पोल्ट्री प्रजातियाँ खरीदने के लिए बहुत सस्ती है, बड़े हेक्टेयर भूमि की आवश्यकता नही होती है, उच्च उत्पादन दर की विशेषता होती है और साथ ही अधिकांश भौगोलिक क्षेत्रों में अनुकूलन और सम्पन्न होने में सक्षम है। पोल्ट्री उद्योग प्राकृतिक संसाधनो के उपयोग के साथ-साथ वैश्विक मांग को पूरा करने के लिए प्रोटीन प्रदान करने के कारण पशुधन उद्योग में सबसे कुशल उपक्षेत्र के रूप में उभरता है। बढ़ती आबादी में भोजन उपलब्ध कराने और पोल्ट्री प्रोटीन की बढ़ती मांग को पूरा करने के लिए, उच्च अंडा उत्पादन और मांस के लिए आनुवांशिक चयन ने आधुनिक समय के पोल्ट्री की प्रतिरक्षा क्षमता पर कुछ नकारात्मक प्रभाव छोड़े है, जिससे वे बिमारी के प्रति संवेदनशील हो गए है। जलवायु परिवर्तन के परिणाम स्वरूप वैश्विक और पर्यावरणीय परिवर्तनों ने पोल्ट्री रोग के तेजी से उभरने और फैलने की बढ़ा दिया है, जिससे पोल्ट्री प्रजातियों की प्रतिरक्षा प्रणाली संक्रमण और अचानक मृत्यु से बचने में असमर्थ हो गई है।

टीकाकरण की योजना - टीकाकरण पक्षियों की प्रतिरक्षा प्रणाली को एंटीबॉडी उत्पन्न करने के लिए प्रेरित या बढ़ावा देकर विशिष्ट रोगों के प्रतिकूल प्रभावों को रोकने या कम करने का प्रभावी साधन है।

टीकारकण की प्रकिया

1.टीकाकरण की तिथि और नाम किसान को सूचित किया जाना चाहिए ।

2.किसान को वैक्सीन प्राप्ति के दौरान थर्मोकूल बॉक्स के साथ जाने का निर्देश देना चाहिए।

वैक्सीन भंडारण -

1.मुर्गियों में वैक्सीन लगाते तक 2-8°C तापमान बनाए रखना चाहिए।

2.सुनिश्चित करे कि ढक्कन कसकर ढका हुआ हो ।

3.टीके प्राप्ति के दिन के भीतर ही लगाए जाने चाहिए अन्यथा इसे बर्फ के साथ थर्मोकूल बॉक्स में तब तक संग्रहित किया जाना चाहिए जब तक चूजों को टीका न लगा दिया जाए ।

वैक्सीन की तैयारी

1.स्वच्छ सिरिंज/जीवाणुरहित सिरिंज और सुई की मदद से डिल्यूअन्ट बोतल से 3 मिली लीटर डिल्यूअन्ट निकालना चाहिए।

2.सिरिंज से डिल्यूअन्ट को वैक्सीन की शीशी में डाले।

3.वैक्सीन की शीशी को धीरे से घुमा के मिक्स करे ।

4.पक्षियों में वैक्सीन लगाने तक इसका तापमान 8°C से कम रखना चाहिए।

5.बुलबुले बनने से बचें।

वैक्सीन लगाने की विधि

(1) आई ड्रॉप विधि - Live वैक्सीन (Lasota, R2B, IB-H120) इत्यादि वैक्सीन आईड्राप विधि के द्वारा दिया जाता है।

1.वैक्सीन को ड्रापर में ले।

2.वैक्सीन को बूंदो में डाल सकते है।

3.चूजें की आँख की निचली पलक को अंगूठे से फिक्स करे ताकि चूजा टीकाकरण करते समय आँख को बंद न करे।

4.सुनिश्चित करे की बूंद आँख की गुहा में गायब हो जाए।

(2) चमड़े के नीचे (S/C) इंजेक्शन विधि - यह विधि विशेष रूप से किल्ड वैक्सीन और मारेक (Mareks) रोग की टीको के लिए प्रयोग की जाती है ।

(3) इंट्रा मस्कुलर इंजेक्शन विधि - किल्ड वैक्सीन और Fowl pox का इंट्रामस्कुलर इंजेक्शन ब्रेस्ट मसल, और पंख सहित कई स्थानों पर लगाया जा सकता है।

समूहिक टीकाकरण-पेयजल टीकाकरण-पीने के पानी के माध्यम से पक्षियों का मौखिक टीकाकरण बड़े आकार के फ्लाक में टीकाकरण का सबसे व्यावहारिक तरीका है।

पीने के पानी टीकाकरण का उपयोग (ND) न्यूकैसल रोग, IBD (गम्बोरो रोग) और संक्रामक ब्रोंकाइटिस (I.B) के खिलाफ प्रयोग किया जाता है।

क्या करें? -

1. वैक्सीन के लिए कोल्ड चैन, निर्माण के स्थान से लेकर पक्षी तक पहुंचने तक बनाएं रखा जाना चाहिए।
2. वैक्सीन के तापमान को 2°C से 8 °C सेल्सियस बनाए रखना है।
3. टीकों को डिल्यूअन्ट के साथ अच्छी तरह मिलाए ।
4. वैक्सीन को डाइल्यूट करने के बाद, इसे 1 घंटे के अंदर पूरी तरह इस्तेमाल करना होता है, उसके बाद ही ताजा वैक्सीन बनाए।
5. फॉर्म रिकार्ड में निर्माता पर्ची का रिकार्ड सुनिश्चित करे केवल स्वस्थ पक्षियों का टीकाकरण करे और केवल दिन के ठंडे घंटो में टीकाकरण करे।
6. टीकाकरण के दौरान, नियमित रूप से और समय-समय पर टीके के घोल को धीरे-धीरे हिलाएं।
7. टीकाकरण की आँख की बूंद विधि करते समय, पक्षी को तभी छोड़े जब टीका की बूंद पक्षी की आँख की गुहा से गायब हो जाए ।
8. टीकाकरण से पहले और बाद में पक्षियों को इलेक्ट्रोलाइट दे ।
9. उपयोग की गई खाली शीशियों का निपटान तुरंत कर देना चाहिए।

क्या न करें -

1. टीके को सूर्य की रोशनी में न रखें।
2. जब तक आप वैक्सीन का उपयोग करने के लिए तैयार न हो, उसे न खोलें।
3. एक वैक्सीन वॉयल से एक हजार चूजे का टीकाकरण करें।

4.यदि पक्षी बीमार या किसी तनाव में हो तो उन्हें टीका न लगाए।

5.खाली शीशियों को फार्म के पास नहीं फेकना चाहिए।

6.गर्मियों के दौरान पक्षियों को टीका न लगाएँ।

7.पीने के पानी द्वारा टीकाकरण के लिए क्लोरीन युक्त पानी और क्लोरीन युक्त बर्फ का उपयोग न करें।

8.आवश्यक खुराक से अधिक या कम खुराक का उपयोग न करें।

9.निर्माता द्वारा आपूर्ति किये गये डिल्यूअन्ट के अलावा अन्य डिल्यूअन्ट का उपयोग न करे।

10. झाग बनने से बचने के लिए मिक्स करते समय जीवित (स्पअम) वैक्सीन को जोर से न हिलाएं।

11. एक बार में सभी वैक्सीन शीशियो में डिल्यूअन्ट न मिलाएँ

12. टीकाकरण करते समय बीच में ब्रेक न लें।

13. अगले दिन के उपयोग के लिए वैक्सीन को पुनः न रखे।

14. अपने जरूरतो के हिसाब से टीके के तरीको को परिवर्तित न करे।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
छत्तीसगढ़

डॉ. सविता बिसेन (सहायक प्राध्यापक)
पशु चिकित्सा एवं पशुपालन महाविद्यालय, अंजोरा
दाऊ श्री वासुदेव चंद्राकर कामधेनु वि.वि. दुर्ग (छ.ग.)

खाद्य जनित परजीवी जन्य जूनोटिक रोगों की सार्वजनिक स्वास्थ्य में भूमिका

आज के वैज्ञानिक दौर में, जब खाद्य उत्पादन एवं उपभोग की प्रक्रियाएं लगातार बदल रही हैं तो खाद्य जनित रोग, एक बड़ी सार्वजनिक स्वास्थ्य चुनौती बनकर उभर रहे हैं। इन बीमारियों में एक महत्वपूर्ण श्रेणी है "खाद्य जनित परजीवी जन्य जूनोटिक रोग" यानि ऐसे परजीवी रोग जो भोजन के माध्यम से पशुओं से मनुष्यों में फैलते हैं। इन परजीवियों में फीताकृमि, गोलकृमि, चपटा कृमि एवं एक कोषकीय परजीवी शामिल हैं। ये परजीवी अधपके मांस, दूषित सब्जियों, फलों या संक्रमित जल के माध्यम से शरीर में प्रवेश करते हैं। ये संक्रमण न केवल पाचन तंत्र को प्रभावित करते हैं बल्कि गंभीर मामलों में मस्तिष्क, यकृत, हृदय और फेफड़े जैसे अंगों को भी नुकसान पहुंचा सकते हैं।

खाद्य जनित परजीवी रोगों का प्रभाव केवल स्वास्थ्य तक सीमित नहीं है, बल्कि ये आर्थिक, सामाजिक और वैश्विक खाद्य सुरक्षा पर भी गहरा प्रभाव डालते हैं। यह विषय, न केवल सार्वजनिक स्वास्थ्य विशेषज्ञों के लिए महत्वपूर्ण है, बल्कि आम जनता की जागरूकता के लिए भी अत्यंत आवश्यक है। ये रोग, विश्वव्यापी समस्या है जो कि विकासशील देशों में अधिक आम है जहां पर स्वच्छ जल एवं शौचालय की सुविधा नहीं है तथा चिकित्सा सुविधाओं की कमी है।

परजीवी का जीवन-चक्र- अधिकतर परजीवियों का जीवन-चक्र जटिल होता है जिसमें कई मेज़बान शामिल होते हैं।

a) **ध्यवर्ती मेज़बान-** जिनमें परजीवी का विकास होता है परंतु प्रजनन नही करते हैं जैसे सूकर, मछली, गाय आदि।
b) **अंतिम मेज़बान-**जिनमें परजीवी प्रजनन करता है जैसे मनुष्य आदि।

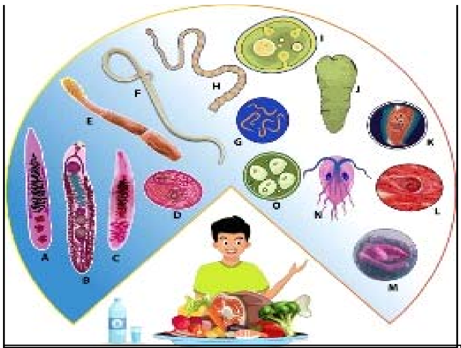

खाद्य जनित परजीवी रोग

उदाहरण हेतु टीनिया सोलियम- जिनमें सूकर मध्यवर्ती मेज़बान है एवं मनुष्य अंतिम मेज़बान।

संचरण के तरीके

a) **अधपका मांस खाना:** जैसे कि सूकर, गाय, मछली।
b) कच्ची/गंदी सब्जियां या फल खाने से, जिनमें परजीवी के अंडे या लार्वा हो सकते हैं।
c) दूषित पानी पीना- खासकर गंदे या खुले स्त्रोतों से।
d) पालतू जानवर जैसे कुत्ते या बिल्लियों के संपर्क में आने से, जो कि परजीवी के वाहक हो सकते हैं।

कुछ प्रमुख परजीवी रोग एवं उनके लक्षण निम्नलिखित दिए गए हैं :-

क्र.	परजीवी का नाम	रोग का नाम	संक्रमण का स्त्रोत	लक्षण
1	*टॉक्सोप्लाज्मा गोंडी*	टॉक्सोप्लाज़्मोसिस	अधपके मांस के सेवन से, बिल्लियों के मल से दूषित खाद्य एवं पानी के सेवन से	बुखार, थकावट, मांसपेशियों में दर्द, गर्भवती महिलाओं में भ्रूण को खतरा (जैसे जन्मजात, विकृति, मस्तिष्क में सूजन)
2	*ट्राइचिनेला स्पाइरैलिस*	ट्राइचिनेलोसिस	अधपका सूकर या जंगली पशु के मांस के सेवन से	मांसपेशियों में दर्द, बुखार, ऑखों में सूजन
3	*टीनिया सोलियम*	सिस्टिसर्कोसिस, टीनियासिस	अधपके सूकर के मांस के सेवन से	पाचन समस्याऐं, मिर्गी, तंत्रिका संबंधी लक्षण जैसे सिरदर्द, दृष्टिदोष, मानसिक भ्रम
4	*टीनिया साजिनेटा*	टीनियासिस	अधपके गोमांस के सेवन से	पेट में मरोड़, दस्त
5	*इकाइनोकोक्स ग्रैन्युलोसस्*	हाइडैटिड रोग	कुत्तों/श्वानों के मल से दूषित भोजन अथवा पानी	जिगर एवं फेफड़ों में सिस्ट, बुखार, एलर्जी
6	*फेसियोला जाइजेन्टिका*	फेसियोलोसिस	फेसियोला के मेटासरकेरिया से दूषित भोजन सामग्री के सेवन द्वारा	जिगर में सूजन, पीलिया, बुखार, चिकित्सा ाकान, दस्त, भूख कम लगना
7	*एनिसाकिस*	एनिसाकायसिस	कच्ची मछली (सुशी) के सेवन से	उल्टी, पेट–दर्द, एलर्जी
8	*क्रिप्टोस्पोरिडियम*	क्रिप्टोस्पोरिडियोसिस	दूषित पानी	तीव्र दस्त, निर्जलीकरण
9	*जिआर्डिया लैंबलिया*	जिआर्डियोसिस	दूषित पानी या सब्जियॉ	दस्त, गैस, थकावट

संक्रमण के लक्षण: खाद्य जनित परजीवी संक्रमण के लक्षण, परजीवी के प्रकार, शरीर में उसके स्थान एवं संक्रमण की गंभीरता पर निर्भर करते हैं। कुछ संक्रमण, बिना किसी लक्षण के हो सकते हैं जबकि अन्य गंभीर एवं जानलेवा भी हो सकते हैं।

सामन्य लक्षणों में शामिल है:- ▪ पाचनतंत्र संबंध समस्याएं जैसे लगातार या तीव्र दस्त, मरोड़ और पेट दर्द, मतली, उल्टी, गैस और अपच ▪ सामान्य थकावट और कमज़ोरी ▪ वज़न कम होना ▪ बुखार और कंपकंपी ▪ एलर्जी जैसे लक्षण ▪ खून की कमी

संक्रमण का निदान

संक्रमण का सटीक निदान, रोग की पहचान, उचित उपचार और संक्रमण की रोकथाम के लिए अत्यंत आवश्यक है। विभिन्न परजीवियों के लिए अलग-अलग जांच विधियां अपनाई जाती हैं।

- **मल परीक्षण-** इसके द्वारा परजीवी के अंडे, लार्वा या सिस्ट की पहचान की जाती है। कई बार, तीन दिन तक अलग-अलग नमूने लेकर परीक्षण करना जरूरी होता है।
- **रक्त परीक्षण-** रक्त में एंटीबॉडी की पहचान हेतु ELISA टेस्ट, IFA टेस्ट प्रयोग में लाए जाते हैं।
- **इमेजिंग तकनीकः:-** a) CT Scan या MRI द्वारा मस्तिष्क या षरीर के अन्य भागों में सिस्ट की पहचान। b) अल्ट्रॉसाउंड द्वारा यकृत या पेट में सिस्ट या परजीवी के अन्य रूप की उपस्थिति।
- **PCR तकनीक:** यह परजीवी के DNA की उपस्थिति का पता लगाने वाली आधुनिक तकनीक है जो कि सटीक परिणाम देती है।
- एंडोस्कोपी द्वारा गैसट्रोइंटेस्टानइल परजीवियों की प्रत्यक्ष पहचान।
- बायोप्सी द्वारा परजीवी की पहचान।

संक्रमण का उपचार

- कृमिनाशक दवाओं के उपयोग द्वारा
  - (b) फीताकृमि एवं गोलकृमि हेतु एलबेंडाज़ोल, मेबेंडाज़ोल।
  - (c) फीताकृमि एवं चपटाकृमि हेतु प्राज़िक्वांटेल।
- **शल्यक्रिया द्वारा-** गंभीर मामलों में जैसे हाइडेटिड सिस्ट को निकालने हेतु।
- **सहायक उपचार-** बुखार, दर्द और सूजन के लिए।

रोकथाम

- मांस को अच्छी तरह पकाएं (75°C या अधिक पर)।
- कच्ची सब्जियों और फलों को साफ पानी से धोएं।
- पानी को उबालकर या फिल्टर करके पानी पिएं।
- पशुओं को नियमित रूप से डीवर्मिंग करें।
- **व्यक्तिगत स्वच्छता रखें-** खाना बनाने और खाने से पहले हाथ धोना चाहिए।
- खाद्य सुरक्षा मानकों का पालन करें।

एक गंभीर सार्वजनिक स्वास्थ्य समस्या है जिससे निपटने के लिए भोजन को सुरक्षित ढंग से बनाना एवं रखना, स्वच्छता का पालन करना एवं जागरूकता बढ़ाना अनिवार्य है। समय पर निदान और इलाज से इन रोगों से बचाव संभव है।

✍ **रोमा वर्मा** महात्मा गांधी उद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय,सांकरा,दुर्ग (छ.ग.)

ताड़–ग्रामीण कुटीर उद्योगों का आधार

प्रकृति ने मानव हित के लिए भिन्न-भिन्न प्रकार का फल बनाया है जिसमें कुछ ऐसे फल हैं जो मनुष्य की लगभग सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। ऐसे वृक्षों को कल्प वृक्ष कहते हैं।

इसी श्रेणी का ताड़ एक महत्वपूर्ण फल है जो भारत, म्यनमार, श्रीलंका, दक्षिण फ्लोरिडा, थाईलैंड, मलेशिया, इन्डोनेशिया, बंगलादेश, वियतनाम में पाया जाता है। यह फल अफ्रीका महाद्वीप का मूल निवासी है। विश्व में ताड़ का क्षेत्र 44 डिग्री दक्षिणी अक्षांश से लेकर 45 डिग्री उत्तरी अक्षांश तक फैला हुआ है। ताड़ के वृक्ष फारस की खाड़ी से कम्बोडिया-वियतनाम की सरहद तक सफलतापूर्वक उगते हैं। हवाईद्वीप समूह में भी ताड़ के वृक्षों की अधिकता है।

ताड़ का इतिहास

ताड़ का इतिहास बहुत पुरान है। ताड़ परिवार के सदस्यों के मिले जीवाश्म् से पता चलता है कि ये 1200 लाख वर्ष पुराना है। इसका मतलब यह है कि ताड़ के वृक्ष लाखों वर्ष में प्राकृतिक चयन विधि द्वारा विकसित हुए हैं। ताड़ का वर्णन मनुनिधि शास्त्र में चार हजार वर्ष पहले अंकित किया गया था। यूनानी यात्री मेगस्थनीज अपने यात्रा वर्णन में लिखा है कि ताड़ के वृक्ष से पाटलिपुत्र के लोग रस निकालते हैं, जिसे ताड़ी कहते हैं। इस ताड़ी से ताड़ का गुड़ तथा ताड़ की मिश्री यहां के लोग बनाते हैं। यूनान लौटने के समय मेगस्थनीज अपने साथ ताड़ के गुड़ तथा मिश्री ले गया था।

ताड़ के वृक्षों की वायु-रोधक पट्टी-बागों के किनारे

ताड़ का वितरण

एक आकड़े के आधार पर 8.59 करोड़ ताड़ के वृक्ष वर्तमान में भारत में विभिन्न राज्यों में फैले हुए हैं जिनमें केवल तमिलनाडु में 5.02 करोड़ तथा आन्ध्र प्रदेश में 3.57 करोड़ तथा शेष बिहार, बंगाल, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, उत्तर प्रदेश एवं अन्य राज्यों में फैले हुए हैं। भारत में 3.16 करोड़ ऐसे वृक्ष हैं जिनसे ताड़ी चुआया जा सकता है परन्तु इनमें से केवल 1.16 करोड़ वृक्षों से ही ताड़ी चुआने का काम प्रतिवर्ष चल रहा है। तमिलनाडु के ताड़ वृक्षों के बागों के अंतर्गत कुल क्षेत्रफल 22500 हेक्टर है। श्रीलंका में 24 हजार हेक्टर भूमि में ताड़ की बागवानी होती है। वहां ताड़ के वृक्षों की कुल संख्या 106 लाख है जिनमें से 30 लाख वृक्ष प्रतिवर्ष फल देते हैं।

भारत में बिहार एक ऐसा राज्य है जहां ताड़ के लगभग 22 लाख वृक्ष हैं। यहां ताड़ी उत्पादन तथा वितरण में लाखों परिवार लगे हुए हैं। यही इनके जीवकोपार्जन का मुख्य साधन है।

ताड़ का ताड़ी निकाल कर बेचता हुआ एक ग्रामीण युवक

वानस्पतिक विवरण

ताड़, जिसे लैटिन भाषा में बोरैसस फ्लैबेल्फिर कहते हैं, पाल्मी पौध-कुल का एक महत्वपूर्ण सदस्य हैं। यह पौध परिवार फूलदार पौधों का सबसे पुराना पौध परिवार है।

ताड़ के नर वृक्ष तथा मादा वृक्ष अलग-अलग होते हैं। नर वृक्षों पर नर फूल तथा मादा वृक्षों पर मादा फूल लगते हैं परन्तु ताड़ी उत्पादन दोनों प्रकार के वृक्षों से होती है। ताड़ के वृक्षों पर 12-15 वर्षों के बाद फूल आते हैं। ताड़ के वृक्षों की लंबाई 60-80 फीट तथा तनों की चौड़ाई 12-18 इंच होती है। एक पेड़ पर 25-40 पंखों के आकार की पत्तियां होती हैं जिनकी लंबाई 1-3 मीटर तक होती हैं तथा चौड़ाई 1-1.2 मीटर होती है। पत्तियों की मध्य शिरायें भीतर की तरफ मुड़ी होती हैं तथा पत्तियों का किनारा कांटेदार होते हैं। एक पूर्ण विकसित मादा वृक्ष पर फलों के 10-12 घौंद लगती हैं, जिनमें 60-80 फल प्रति वृक्ष होते हैं। परंतु श्रीलंका में ताड़ के एक वृक्ष पर 300-350 फल लगते हैं। फल जितने अधिक संख्या में होंगे उनका आकार उतना ही छोटा होगा।

ताड़ के वृक्ष से ताड़ी चुआने का कारोबार विश्व के अनेक देशों में प्रचलित है। ताड़ में उन पुष्पदंडों से ताड़ी चुआते हैं जिस पर फूल खिलें न हों। भारत में एक पुष्पवृन्त से प्रतिदिन लगभग 3-3.35 लीटर ताड़ी प्राप्त होती है। यह सिलसिला एक महीना तक चलाता है। ऐसे वृक्ष जिसपर अधिक फल लगते हैं औसतन एक वृक्ष से एक दिन में कुल 3-3.5 लीटर ताड़ी प्राप्त होती है, जिसमें सुक्रोज की मात्रा की भरमार होती है। इसमें विटामिन सी भी पाया जाता है। ताड़ी से गुड़ बनाने की प्रथा भारत श्रीलंका एवं इंडोनेशिया में बड़े पैमाने पर गांवों में प्रचलित है। 100 किलो ताड़ी से औसतन 10-12 किलो गुड़ तैयार होता है। गन्ना के गुड़ से ताड़ का गुड़ अत्यधिक फायदेमंद होता है तथा इसमें औषधीय गुण भी पाया जाता है। ताड़ का गुड़ गन्ना के गुड़ से अधिक साफ तथा सुगंधित भी होता है।

ताड़ एक बहुआयामी फल वृक्ष है, जिससे आधारित ताड़ी, ताड़ का गुड़ तथा ताड़ की मिश्री का ग्रामीण कुटीर उद्योगों को बढ़ावा देकर ग्रामीण रोजगार तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सरकार सुदृढ़ कर सकती है। आवश्यकता राष्ट्रीय स्तर पर ताड़ विकास परियोजना शुरू करने की है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

अमरूद से जेली बनाने की विधि और बाजार में बिक्री का मार्गदर्शन

✍ **अंशू यादव** (शोध छात्रा) जनता कॉलेज बकेवर, इटावा, (उ.प्र.)
✍ **सचिन जायसवाल** (शोध छात्र), जनता कॉलेज बकेवर,इटावा

परिचय

भारत कृषि प्रधान देश है और यहाँ फलों की विविधता बहुत अधिक है। इन फलों में अमरूद (Guava) एक ऐसा फल है जो वर्ष भर सुलभ होता है, स्वादिष्ट होने के साथ-साथ स्वास्थ्यवर्धक भी होता है। यह न केवल ताजे फल के रूप में खाया जाता है, बल्कि इससे कई तरह के प्रसंस्कृत उत्पाद भी बनाए जाते हैं।÷अमरूद की जेली÷ एक ऐसा ही प्रसंस्कृत उत्पाद है जिसे घर पर आसानी से तैयार किया जा सकता है और बाजार में बेचा भी जा सकता है। यह न केवल उपभोक्ताओं के लिए स्वादिष्ट विकल्प है बल्कि उद्यमियों और किसानों के लिए आय का साधन भी बन सकता है।

1. अमरूद से जेली बनाने की विस्तृत विधि

आवश्यक सामग्री

सामग्री	मात्रा
पके अमरूद	1 किलो
पानी	3 कप
चीनी	750 ग्रा. (या स्वादानुसार)
नींबू का रस	2 चम्मच
पेक्टिन (ऐच्छिक)	1 चम्मच
फूड कलर / एसेंस	थोड़ा सा (जरूरत अनुसार)

बनाने की चरणबद्ध विधि

(i) अमरूद की तैयारी • अच्छे पके हुए अमरूदों को चुनें। • उन्हें साफ पानी से धोकर छोटे टुकड़ों में काट लें।

(ii) उबालकर गूदा बनाना • कटे अमरूदों को एक भगोने में 3 कप पानी के साथ डालें। • मध्यम आंच पर उबालें जब तक अमरूद पूरी तरह नरम न हो जाए। • इसके बाद मिक्सी में पीसकर बारीक छलनी से छान लें।

(iii) जेली पकाना • छाने हुए रस में नींबू का रस और चीनी डालें। • धीमी आंच पर पकाना शुरू करें। • जब मिश्रण गाढ़ा होने लगे, तो पेक्टिन और फूड कलर डाल सकते हैं। • जमने की जांच के लिए एक बूंद थाली में डालें, अगर वह जम जाए तो जेली तैयार है।

(iv) पैकिंग और संग्रहण

• गर्म जेली को तुरंत साफ, सूखे और स्टरलाइज़ किए हुए ग्लास जार में भरें। • ढक्कन कसकर बंद करें।

• ठंडा होने के बाद ठंडी और सूखी जगह पर रखें।

2. अमरूद जेली व्यवसाय की शुरुआत कैसे करें?

(i) घरेलू स्तर पर शुरुआत

• शुरुआत में 5-10 किलो अमरूद से जेली बनाकर प्रयोग करें।

• आसपास के बाजार, रिश्तेदारों, स्कूल/कॉलेज कैंटीन, किराना दुकानों में नमूना वितरित करें।

• लोकल मंडी और हाट-बाजार में स्टॉल लगाएं।

जरूरी लाइसेंस व रजिस्ट्रेशन

• **FSSAI लाइसेंस:** खाद्य सुरक्षा एवं मानक प्राधिकरण से पंजीकरण करवाएं।

• **Udyam रजिस्ट्रेशन:** MSME के तहत व्यवसाय को सरकारी लाभ दिलाने में मदद करेगा।

• GST रजिस्ट्रेशन: अगर वार्षिक बिक्री 20 लाख से ऊपर है।

3. अमरूद जेली की ब्रांडिंग और मार्केटिंग रणनीति

(i) आकर्षक पैकेजिंग

• प्लास्टिक या कांच की जार में हाइजेनिक पैकिंग करें।

• लेबल पर ब्रांड नाम, वजन, निर्माण/समाप्ति तिथि, सामग्री और FSSAI नंबर जरूर दें।

• छोटे बच्चों, स्कूलों और हेल्थ कॉन्शियस ग्राहकों के लिए अलग-अलग साइज के पैक रखें।

(ii) बिक्री के प्रमुख माध्यम

1. ऑफलाइन बिक्री

• लोकल किराना स्टोर्स, सुपरमार्केट्स • हाट-बाजार, कृषि मेले, स्कूल फेस्ट • बेकरी और होटल को थोक में सप्लाई

2. ऑनलाइन बिक्री

• Flipkart, Amazon, BigBasket जैसी साइट पर रजिस्ट्रेशन करके उत्पाद बेचें।

• Social media मार्केटिंग करें (Facebook, Instagram, WhatsApp)

• खुद की वेबसाइट बनाकर डायरेक्ट ऑर्डर लें।

4. व्यवसाय में लाभ और चुनौतियाँ

लाभ

• कम लागत में शुरू होने वाला व्यवसाय
• फलों की बर्बादी को रोका जा सकता है
• गांव व महिलाओं के लिए स्वरोजगार का अच्छा अवसर
• उपभोक्ताओं की घरेलू उत्पादों में बढ़ती रुचि

चुनौतियां

• शुरुआती ग्राहक बनाना कठिन
• बाजार प्रतिस्पर्धा
• उत्पाद की गुणवत्ता और शेल्फ लाइफ बनाए रखना

समाधान

• गुणवत्तायुक्त उत्पाद बनाएं
• ग्राहकों से फीडबैक लेकर सुधार करें
• नए स्वाद और वैरायटी (जैसे अमरूद+आंवला जेली) लाएं
• प्रचार के लिए फूड ब्लॉगर, यूट्यूबर से संपर्क करें

5. सरकारी सहायता और प्रशिक्षण

सरकार और कई गैर-सरकारी संस्थान खाद्य प्रसंस्करण में प्रशिक्षण व सब्सिडी प्रदान करते हैं- • **PM-FME योजना:** 'Vocal for Local' को बढ़ावा देने वाली योजना • NABARD: लघु खाद्य उद्योग के लिए ऋण और मार्गदर्शन • KVIC/NSIC/DIC: पैकेजिंग, ब्रांडिंग व प्रशिक्षण का प्रावधान

01/2023-24

बायोचार का उपयोग मृदा उर्वरता में सुधार

✍ **हरि शंकर सिंह** रिसर्च स्कालर (मृदा विज्ञान विभाग), चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौ. वि.वि, कानपुर (उ.प्र.)

✍ **अनिल कुमार** प्रोफेसर (चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगीकी विश्वविद्यालय, कानपुर, मृदा विज्ञान विभाग)

आज की कृषि प्रणाली अनेक समस्याओं से जूझ रही है ‒ जैसे मृदा की उर्वरता में गिरावट, भूमि क्षरण, जलवायु परिवर्तन, और रासायनिक उर्वरकों पर निर्भरता। मिट्टी की गुणवत्ता और पोषक संतुलन को बनाए रखना सतत कृषि की प्राथमिक शर्त है। ऐसे में, बायोचार (Biochar) एक प्रभावी और टिकाऊ उपाय के रूप में सामने आया है। यह न केवल मृदा की भौतिक, रासायनिक और जैविक विशेषताओं को सुधारता है, बल्कि कार्बन पृथक्करण (carbon sequestration) के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण में भी योगदान देता है।

बायोचार क्या है?: बायोचार एक काला, ठोस, कार्बन युक्त पदार्थ होता है जो पौधों पर आधारित जैविक अपशिष्टों (जैसे कि फसल अवशेष, लकड़ी, बांस, गोबर आदि) को कम ऑक्सीजन या बिना ऑक्सीजन के जलाने की प्रक्रिया जिसे पायरोलिस कहते हैं, द्वारा प्राप्त किया जाता है। यह प्रक्रिया ऊष्मा उत्पन्न करती है और साथ ही पर्यावरण को नुकसान पहुँचाए बिना कार्बन को मिट्टी में स्थायी रूप से संग्रहीत करती है।

बायोचार की विशेषताएं: • अत्यधिक रंध्रयुक्त संरचना • उच्च कार्बन सामग्री (70-90%) • दीर्घकालिक स्थायित्व (सैकड़ों वर्षों तक मिट्टी में बना रहता है) • p H सामान्यतः क्षारीय (7.5 से 9 के बीच) • जल और पोषक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता

बायोचार कैसे बनता है?

स्रोत सामग्री: • धान की पराली • लकड़ी का चूरा • बगास (गन्ने का अवशेष) • गोबर • बांस, मूंगफली की भूसी आदि

पायरोलिसिस प्रक्रिया:

- **तापमान:** 350°C – 700°C
- कम या बिना ऑक्सीजन के वातावरण

उत्पाद: बायोचार (ठोस), बायोऑयल (तरल), और बायोगैस (गैस)

बायोचार उत्पादन के लिए किसानों को स्थानीय स्तर पर सरल तकनीकों (जैसे कि ड्रम चूल्हा, कुडली भट्ठी) के माध्यम से इसे स्वयं बनाने के लिए प्रशिक्षित किया जा सकता है।

मृदा उर्वरता में बायोचार की भूमिका: बायोचार का उपयोग मृदा की उर्वरता को तीन स्तरों पर प्रभावित करता है: भौतिक, रासायनिक, और जैविक।

(i) भौतिक गुणों में सुधार: • मिट्टी की जल धारण क्षमता में वृद्धि करता है। • रंध्रयुक्त संरचना के कारण हवा और पानी का प्रवाह बेहतर होता है। • मिट्टी की संरचना (structure) को मजबूत बनाता है, जिससे कटाव और सख्त परतें नहीं बनतीं।

(ii) रासायनिक गुणों में सुधार: • क्षारीय pH के कारण अम्लीय मिट्टी को संतुलित करता है। • Cation Exchange Capacity (CEC) बढ़ाता है, जिससे पोषक तत्वों को पौधों की जड़ों तक पहुँचाने में मदद मिलती है।

- पोषक तत्वों का लीचिंग (बहाव) कम करता है।

(iii) जैविक गुणों में सुधार

- लाभकारी सूक्ष्मजीवों (bacteria, fungi, actino-

mycetes) के लिए अनुकूल आवास प्रदान करता है।
- जैविक कार्बन के स्तर को बढ़ाता है। • मिट्टी में जैव विविधता और जैविक क्रियाशीलता को बढ़ावा देता है।

फसलों पर बायोचार का प्रभाव

बायोचार के प्रयोग से विभिन्न फसलों में उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है। जैसे:

फसल बायोचार का प्रभाव

धान: जलधारण बढ़ा, पनीरी की जड़ें बेहतर विकसित हुई

गेहूं: नाइट्रोजन की उपलब्धता बढ़ी, उत्पादन में 15-20% वृद्धि

मक्का: मृदा का श्वा सुधरा, फसल की बढ़वार बेहतर

सब्जियाँ मिट्टी में रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ी

उदाहरण:ICAR-IISS, भोपाल के एक अध्ययन में पाया गया कि धान की उपज में 22% तक वृद्धि हुई जब बायोचार को जैविक खाद के साथ मिलाकर प्रयोग किया गया।

पर्यावरणीय लाभ

(i) जलवायु परिवर्तन से लड़ाई: बायोचार कार्बन को स्थायी रूप से मिट्टी में संग्रहीत करता है, जिससे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम होता है।

(ii) जल संरक्षण: जलधारण क्षमता बढ़ने से सिंचाई की आवश्यकता घटती है।

(iii) अपशिष्ट प्रबंधन:कृषि और जैविक कचरे को उपयोगी बायोचार में बदलना एक पर्यावरणीय समाधान है।

(iv) मृदा क्षरण में कमी:मिट्टी की संरचना मजबूत होने से भू-क्षरण (erosion) की संभावना कम हो जाती है।

चुनौतियाँ और सीमाएँ

उत्पादन की लागत: विशेषकर बड़े पैमाने पर।

प्रौद्योगिकी की सीमित पहुँच: ग्रामीण क्षेत्रों में पायरोलिसिस तकनीक का अभाव।

फसल-विशेष प्रतिक्रिया: सभी फसलों पर एक जैसा प्रभाव नहीं होता।

मिट्टी के प्रकार पर निर्भरता: रेतीली और दोमट मिट्टियों पर इसका प्रभाव अलग-अलग हो सकता है।

भारत में अनुसंधान एवं नीति पहल

- ICAR, IISS भोपाल, TNAU, CIMMYT, और अन्य संस्थान बायोचार पर शोध कर रहे हैं।
- राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (RKVY) के तहत बायोचार को प्रोत्साहित किया जा रहा है।
- मृदा स्वास्थ्य कार्ड योजनाओं में बायोचार को जैविक सुधारक के रूप में शामिल करने के सुझाव।

किसान स्तर पर उपयोग की रणनीति

- स्थानीय कृषि अपशिष्ट से बायोचार तैयार करना।
- बायोचार को वर्मी कम्पोस्ट, FYM या जैव उर्वरक के साथ मिलाकर प्रयोग करना।
- मृदा परीक्षण के आधार पर मात्रा निर्धारित करना (5-10 टन/हेक्टेयर)।
- प्रशिक्षण और जागरूकता अभियान चलाना।

निष्कर्ष: बायोचार एक बहुउपयोगी और पर्यावरण-अनुकूल संसाधन है जो मृदा उर्वरता को सुधारने के साथ-साथ जलवायु परिवर्तन को भी संबोधित करता है। यह टिकाऊ कृषि की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। यदि इसकी उत्पादन लागत कम की जाए और किसानों को इसकी महत्ता समझाई जाए, तो यह भारतीय कृषि की संरचना को एक नई दिशा दे सकता है।

12/2022-23

सोरघम बाइकलर पर IBA (Indole butyric acid) के ऐलीलोपैथिक प्रभाव

शची तिवारी शोध छात्रा, वनस्पति विज्ञान विभाग, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ. प्र.)

संगीता दयाल प्राध्यापक वनस्पति विज्ञान विभाग एवं बायोटेक्नोलॉजी, स्वामी विवेकानन्द सुभारती विश्वविद्यालय, मेरठ (उ. प्र.)

परिचय

ऐलीलोपैथिक का तात्पर्य एक पौधे की प्रजाति द्वारा दूसरे पौधे की प्रजाति के रासायनिक अवरोध से है, जहाँ द्वितीयक मेटाबोलाइट्स (ऐलीलोकेमिकल्स) पर्यावरण (मिट्टी, हवा या पानी) में छोड़े जाते हैं, जो पड़ोसी पौधों की वृद्धि, अंकुरण या विकास को प्रभावित करते हैं।

बीज अंकुरण और प्रारंभिक वृद्धि पर ऐलीलोपैथिक प्रभाव

1. अंकुरण दर का अवरोध

- एलेलोकेमिकल्स जल अवशोषण और हार्मोनल संतुलन में बाधा डालते हैं।
- गिबरेलिन और एब्सिसिक एसिड सिग्नलिंग में व्यवधान के कारण अंकुरण में देरी या पूर्ण अवरोध होता है। उदाहरणः पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस से फेनोलिक यौगिक गेहूं (ट्रिटिकम एस्टिवम) में अंकुरण प्रतिशत को काफी कम कर देते हैं।

2. अंकुर की शक्ति में कमी

- प्रारंभिक जड़ और अंकुर की वृद्धि दब जाती है।
- कोशिका विभाजन और बढ़ाव के अवरोध के कारण मूलांकुर और प्लम्यूल की लंबाई कम हो जाती है।
- अंकुर की स्थापना और समग्र पौधे की शक्ति को प्रभावित करता है।

3. झिल्ली अखंडता में परिवर्तन

- एलेलोकेमिकल्स झिल्ली को नुकसान पहुंचाते हैं, जिससे इलेक्ट्रोलाइट रिसाव बढ़ जाता है और कोशिका की कठोरता कम हो जाती है।
- अंकुर की व्यवहार्यता और चयापचय कार्य को प्रभावित करता है।

4. ऑक्सीडेटिव तनाव प्रेरण

- कई एलीलोकेमिकल्स (जैसे, क्विनोन, फ्लेवोनोइड्स) ROS (रिएक्टिव ऑक्सीजन स्पीशीज) उत्पादन को बढ़ाते हैं।
- ROS संचय लिपिड पेरोक्सीडेशन, प्रोटीन क्षरण और डीएनए क्षति का कारण बनता है।
- एंटीऑक्सीडेंट एंजाइम (जैसे, SOD, CAT) को रक्षा प्रतिक्रिया के रूप में बदल दिया जाता है।

5. एंजाइमेटिक गतिविधि का दमन

- a-amylase जैसे एंजाइम, जो अंकुरण के दौरान स्टार्च के टूटने के लिए महत्वपूर्ण हैं, बाधित होते हैं।
- खराब ऊर्जा संचलन और कम अंकुरण दक्षता की ओर जाता है।

6. हार्मोनल संतुलन का विघटन

- एलीलोकेमिकल्स ऑक्सिन, साइटोकाइनिन, जिबरेलिन और एब्सिसिक एसिड जैसे पौधे हार्मोन की गतिविधि की नकल, अवरोध या परिवर्तन कर सकते हैं।
- देरी से अंकुरण या असामान्य अंकुर आकृति विज्ञान का कारण बनता है।

कुछ पौधे ऐलीलोपैथी की तरह व्यवहार करते हैं जैसेः

1.सोरघम बाइकलर (सोरगम)

- ऐलीलोकेमिकलः सोरगोलियोन (एक हाइड्रोफोबिक बेंजोक्विनोन)
- प्रभावः फोटोसिस्टम II, जड़ विस्तार और माइक्रोबियल वृद्धि को रोकता है।
- इसके विरुद्ध उपयोगः विभिन्न खरपतवार, ज़िया मेस, ट्रिटिकम एस्टिवम, ओरिज़ा सैटिवा
- नोटः व्यापक रूप से अध्ययन किया गया; प्राकृतिक खरपतवार दमन के लिए अक्सर फसल रोटेशन प्रणालियों में शामिल किया जाता है।

2.पार्थेनियम हिस्टेरोफ़ोरस

- एलीलोकेमिकल्सः पार्थेनिन, फेनोलिक एसिड
- प्रभावः माइटोसिस, एंजाइम गतिविधि और झिल्ली पारगम्यता को प्रभावित करता है।
- इसके विरुद्ध उपयोगः ट्रिटिकम एस्टिवम, सिसर एरियेटिनम, विग्ना रेडिएटा
- **नोटः** एक हानिकारक आक्रामक खरपतवार; अत्यधिक फाइटोटॉक्सिक और बायोहर्बिसाइडल क्षमता के लिए अध्ययन किया गया।

3.युकेलिप्टस एसपीपी.

- **प्रमुख एलीलोकेमिकल्सः** सिनेओल, फेनोलिक्स, टेरपेन्स
- **प्रभावः** वाष्पशील तेल और पानी में घुलनशील यौगिक अंकुरण और जड़ के विस्तार को प्रभावित करते हैं।
- इसके विरुद्ध उपयोगः अनाज और फलीदार फसलें (विग्ना, पिसम, ट्रिटिकम)
- नोटः पत्ती कूड़े का उपयोग अक्सर अपघटन/मिट्टी के परीक्षण में किया जाता है।

4.कैसिया एसपीपी. (उदाहरण के लिए, कैसिया ऑक्सीडेंटलिस)

- एलीलोकेमिकल्सः एंथ्राक्विनोन, फ्लेवोनोइड्स
- **प्रभावः** बीज श्वसन और माइटोटिक विभाजन में हस्तक्षेप करते हैं।
- इसके विरुद्ध उपयोगः फेजोलस, सिसर, ओरिजा
- **नोटः** पत्ती, तना और बीज के अर्क सभी का उपयोग अध्ययनों में किया जाता है।

5.एज़ाडिरेक्टा इंडिका (नीम)

- एलीलोकेमिकल्सः एज़ाडिरेक्टिन, लिमोनोइड्स
- प्रभावः हार्मोनल संतुलन और एंजाइम फंक्शन को बाधित करता है।
- इसके विरुद्ध उपयोगः मोनोकोट और डाइकोट फसलों की विस्तृत श्रृंखला
- **नोटः** कीटनाशक गुणों के लिए अधिक जाना जाता है, लेकिन पत्ती और बीज के अर्क ने एलीलोपैथिक प्रभाव दिखाए हैं।

6.ओरिज़ा सैटिवा (चावल)

- **एलीलोकेमिकल्सः** मोमिलैक्टोन बी, फेनोलिक एसिड
- **प्रभावः** खरपतवार के अंकुरण को रोकता है (जैसे, बार्नयार्डग्रास)
- **इसके विरुद्ध उपयोग किया जाता हैः** इचिनोक्लोआ क्रूस-गैली, लेपिडियम सैटिवम
- **नोटः** चावल की एलोपैथी टिकाऊ धान की खेती में एक बढ़ता हुआ क्षेत्र है।

7.ज़ाइगोफ़िलम सिम्प्लेक्स

- **एलीलोकेमिकल्सः** फेनोलिक एसिड, फ्लेवोनोइड्स
- **प्रभावः** बीज के अंकुरण को रोकता है और अंकुर की शक्ति को कम करता है
- **इसके विरुद्ध उपयोग किया जाता हैः** विसिया फ़ेबा, ट्रिटिकम एस्टिवम, और अन्य
- **नोटः** शुष्क क्षेत्र के खरपतवारों में मजबूत अवरोधक क्षमता वाली देशी रेगिस्तानी प्रजातियाँ।

8. ब्रैसिका एसपीपी. (सरसों परिवार)

- **एलीलोकेमिकल्सः** ग्लूकोसाइनोलेट्स, आइसोथियोसाइनेट्स
- **प्रभावः** खरपतवार के बीजों और मिट्टी के रोगजनकों के लिए विषैला
- **इसके विरुद्ध उपयोगः** एवेना फतुआ, अमरंथस एसपीपी सहित विस्तृत श्रृंखला।
- **नोटः** अक्सर हरी खाद और बायोफ्यूमिगेशन के लिए कवर क्रॉपिंग में उपयोग किया जाता है।

निष्कर्ष

एलीलोपैथिक अध्ययनों में, सोरघम बाइकलर, पार्थेनियम हिस्टेरोफोरस और यूकेलिप्टस एसपीपी जैसे दाता पौधों को अक्सर उनके शक्तिशाली द्वितीयक मेटाबोलाइट्स जैसे कि सोर्गोलियोन, पार्थेनिन और सिनेओल के कारण नियोजित किया जाता है। ये यौगिक विभिन्न लक्ष्य प्रजातियों के बीज अंकुरण और अंकुर विकास पर मजबूत फाइटोटॉक्सिक प्रभाव डालते हैं।

वानिकी का महत्व

आंचल दुबे वानिकी विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

धन्य कुमार अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ. आस्था गुप्ता (सहायक प्राध्यापक) वानिकी विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड वि.वि. झांसी

उद्देश्य - वानिकी का मुख्य उद्देश्य विभिन्न मानवीय और पर्यावरणीय लाभों के लिए वनों और वुडलैंड्स का स्थायी प्रबंधन करता है, जिससे लकडी उत्पादन, जैव विविधता का संरक्षण , जलवायु परिवर्तन शमन, मनोरंजन और पर्यटन, ग्रामीण आजीविका, गैर-लकड़ी वन उत्पाद , मृदा एवं जल संरक्षण , वनरोपण, वन संरक्षण और पारिस्थितिक संतुलन इत्यादि शामिल हैं। इसमें विभिन्न संसाधनों के लिए वनो और वुडलैंड्स को लगाना, बनाना, उपयोग करना और उनकी मरम्मत करना शामिल है।

वन प्रबंधन वन के निम्नलिखित पहलुओं में से कम से कम एक को बेहतर बनाने पर आधारित हैं: ईंधन मॉडल, जैव विविधता, लकड़ी की गुणवत्ता और वन स्थिरता आदि।

महत्व

वन वातावरण में ऑक्सीजन और तापमान के स्तर को बनाए रखने में सहायक होते हैं।वह मिट्टी के कटाव और बाढ़ को रोकने में सहायता प्रदान करते हैं।वनों में औषधीय गुणों वाले विशेष रूप से दुर्लभ पौधे होते हैं जो बीमारियों से लड़ने में मदद करते हैं। वे हानिकारक गैसों को अवशोषित करते हैं, जिससे ग्लोबल वार्मिंग से लड़ने में सहायता मिलती है।

वन कई जानवरों के लिए प्राकृतिक आवास हैं। पेड़ वातावरण में ऑक्सीजन की आपूर्ति करते हैं। वे किसी विशेष क्षेत्र में वर्षा को प्रभावित करते हैं। कार्बन भण्डारण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका के अलावा, वन तूफान और बाढ़ जैसी चरम मौसम परिस्थितियों के खिलाफ महत्वपूर्ण ढाल के रूप में काम करते हैं। वे दुनिया के लगभग आधे सबसे बड़े शहरों में पीने के पानी की आपूर्ति करने में आवश्यक हैं, जो हमारे दैनिक जीवन में उनके महत्व को उजागर करता है। वन स्वस्थ ग्रह और मानव कल्याण के लिए महत्वपूर्ण हैं, जो अनेक परिस्थिक, आर्थिक और सामाजिक लाभ प्रदान करते हैं। वे जलवायु को नियंत्रित करते हैं, स्वच्छ हवा और पानी प्रदान करते हैं, जैव विविधता का समर्थन करते हैं और संसाधन एवं आजीविका प्रादन करते हैं।

वानिकी के महत्व पर वर्गीकरण के रूप में अधिक विस्तृत रूप से जानकारी निम्न प्रकार से है-

पारिस्थितिक रूप से महत्व

जलवायु विनियमन: वन वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड(गैस) को अवशोषित करते हैं, जिससे जलवायु परिवर्तन को कम करने में मदद मिलती है।

प्राकृतिक आपदा न्यूनीकरण : वन भूस्खलन, बाढ़ और अन्य प्राकृतिक आपदाओं से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

वायु एवं जल गुणवत्ता : वे हवा और पानी को साफ करते हैं, प्रदूषकों को छानते हैं और पानी कीगुणवत्ता में सुधार करते हैं।

जल विनियम : वे जल चक्र को नियंत्रित करते हैं, मृदा क्षरण को रोकते हैं, तथा भू जल आपूर्ति को पुनः भरने में सहायता करते हैं।

जैव विविधता: वन विभिन्न प्रकार के पौधों और जानवरों की प्रजातियों का घर है, जो जैव विविधता और पारिस्थिकी तंत्र के स्वास्थ्य को बनाए रखते हैं।

मिट्टी संरक्षण: पेड़ मिट्टी के कटाव को रोकते हैं, कृषि भूमि की रक्षा करते हैं तथा भूस्खलन और बाढ़ को रोकते हैं।

आर्थिक रूप से महत्व

नवीकरणीय संसाधन: वन लकड़ी, कागज,लुगदी और अन्य मूल्यवान संसाधन प्रदान करते हैं।

जैव ऊर्जा : वन जैव ऊर्जा का स्रोत हो सकते हैं तथा नवीकरणीय ईंधन उपलब्ध करा सकते हैं।

अजीवी: वानिकी उद्योग लाखों लोगों को रोजगार और आय प्रदान करता है, विशेष रूप से ग्रामीण क्षेत्रों में।

पर्यटन और मनोरंजन : वन मनोरंजन के अवसर प्रदान करते हैं, पर्यटकों को आकर्षित करते हैं और संबंधित उद्योगों को सहायता प्रदान करते हैं।

रोजगार सृजन: वानिकी उद्योग लाखों लोगों को रोजगारऔर आजीविका प्रदान करता है, विशेष कर ग्रामीण क्षेत्रों में।

खाद्य एवं गैर-लकड़ी वन उत्पाद: वन अनेक प्रकार के खाद्य एवं गैर-लकड़ी उत्पाद प्रदान करते हैं, जैसे - फल, मेवे,औषधीय पौधे आदि।

निष्कर्ष

साधरणतया किसी को भी वनों के महत्व को कम नहीं आंकना चाहिये। हम जिस पर्यवरण में सांस लेते हैं, उससे लेकर हम जिस लकड़ी का प्रयोग करते हैं, पूर्णतः मनुष्य अपने अस्तित्व के लिए सम्पूर्ण रूप से वनों पर ही निर्भर हैं। वह को भूमि का वहक्षेत्र कहा जाता है जो पूरी तरह से पेड़ों और अन्य वनस्पतियों से ढका होता है। जड़ी बूटियां, पौधे और औषधीय गुणों वाले पेड़ वनों में प्रचुर मात्रा में पाए जाते हैं। इन पौधों और पेड़ों से निकाले गए पदार्थ, साथ ही बीज, पत्ते और छाल का उपयोग मानव शरीर के लिए गैर विषाक्त होते हुए भी कई तरह की बीमारियों को ठीक करने के लिए किया जाता है। मनुष्यों के लिए आजीविका के स्त्रोत प्रदान करना जानवरों के लिए आवासीय रूप से महत्वपूर्ण होने के अलावा, वन जलग्रहण क्षेत्रों को संरक्षित करते हैं, मिट्टी के कटाव को कमध् रोकते हैं एवं पर्यावरण पर ग्लोबल वार्मिंग के प्रभाव को कम करने में अपना पूरा योगदान देते हैं।

नन्दिनी इन्टरप्राइजेज खाद बीज एवं कीटनाशक

प्रो. रामदीन कुशवाह
84610-11860

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती हैं

पता : चीनोर रोड, छीमक, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

04/2023-24

मेंथा की खेती : एक लाभकारी औषधीय एवं सुगंधित फसल

✍ शिवम् श्रीवास्तव (शोध छात्र)
जेनेटिक्स एंड प्लांट ब्रीडिंग विभाग
✍ अंकुर वर्मा (शोध छात्र) मृदा विज्ञान विभाग
डॉ.राम मनोहर लोहिया अवध वि.वि. अयोध्या (उ. प्र.)
✍ दीपचंद निषाद (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग
✍ संदीप कुमार (शोध छात्र) सस्य विज्ञान विभाग
✍ कार्तिकेय श्रीवास्तव (शोध छात्र) जेनेटिक्स एंड प्लांट ब्रीडिंग विभाग, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर (उ. प्र.)

भारत में औषधीय और सुगंधित फसलों का विशेष महत्व है। मेंथा (Mentha) या पुदीना एक ऐसी ही सुगंधित फसल है जो किसानों को कम समय में अधिक लाभ देने की क्षमता रखती है। उत्तर प्रदेश, पंजाब, हरियाणा और बिहार जैसे राज्यों में इसकी खेती बड़े पैमाने पर होती है। विशेष रूप से उत्तर प्रदेश में यह नकदी फसल के रूप में उभरी है। बाराबंकी जिले के किसान मेंथा की खेती बड़े पैमाने पर रहे है जिससे वो अधिक आमदनी कमा रहे है, ये किसान एक वर्ष में काम से काम तीन फैसले ले रहे है

मेंथा क्या है?: मेंथा एक सुगंधित पौधा है जिससे मेंथॉल नामक तेल प्राप्त होता है। इसका उपयोग औषधि, सौंदर्य प्रसाधन, चाय, टूथपेस्ट, खाद्य पदार्थों और पान मसाला उद्योग में होता है। यह फसल मुख्यतः गर्मी के मौसम में बोई जाती है और 4 से 5 महीने में तैयार हो जाती है। कम समय में अधिक मुनाफे की फसल है मेंथा और पशु पक्षियों से इसको कोई नुकसान भी नहीं होता है क्युकी इसको जानवर नहीं कहते है।

मेंथा की प्रमुख किस्में * CIM- UNNATI * Kosi * Kukrail * Saksham * Himalaya * Shivalik

इन किस्मों को CIMAP (Central Institute of Medicinal and Aromatic Plants) द्वारा विकसित किया गया है।

जलवायु एवं मृदा: * मेंथा की खेती के लिए समशीतोष्ण जलवायु उपयुक्त होती है। * अच्छी जल निकासी वाली दोमट या बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। * pH मान 6.5 से 8.0 के बीच होना चाहिए।

खेत की तैयारी: खेत को अच्छी तरह से जोतकर भुरभुरा बना लिया जाता है। 2-3 जुताई के बाद खेत में पाटा चलाकर समतल कर दिया जाता है। खेत में जल निकासी की व्यवस्था होनी चाहिए क्योंकि मेंथा की जड़ों को जल जमाव से नुकसान होता है।

पौधरोपण की नई विधि: पौध रोपण की नई विधि में रोपाई समतल के स्थान पर आलू की तरह बनाई गई मेड़ो पर की जाती है, फरवरी के प्रथम सप्ताह में मेड़ो के बिच (ऊपर)में तथा फरवरी के बाद मेड़ो के दोनों तरफ रोपाई करते है। यह विधि CIMAP (Central Institute of Medicinal and Aromatic Plants) द्वारा दी गयी है

रोपाई का समय * मेंथा की रोपाई फरवरी से मार्च तक की जाती है। * रोपण हेतु "राइजोम" (जड़ों के टुकड़े) का उपयोग किया जाता है। * 60×30 सेंमी की दूरी पर रोपण किया जाता है।

उर्वरक प्रबंधन

* **गोबर की खाद:** 15-20 टन प्रति हेक्टेयर
* **नाइट्रोजन:** 100-120 किग्रा/हेक्टेयर
* **फॉस्फोरस:** 40-50 किग्रा/हेक्टेयर
* **पोटाश:** 40 किग्रा/हेक्टेयर

नाइट्रोजन को दो या तीन हिस्सों में दिया जाता है- एक हिस्सा रोपाई के समय, शेष एक-एक महीने के अंतराल पर।

सिंचाई व्यवस्था: * पहली सिंचाई रोपाई के तुरंत बाद की जाती है। * इसके बाद प्रत्येक 10-12 दिन में सिंचाई करनी चाहिए। * गर्मियों में सिंचाई की आवश्यकता अधिक होती है।

खरपतवार नियंत्रण: * शुरुआती 40-50 दिन में 2-3 निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। * रसायनों का प्रयोग भी किया जा सकता है जैसे- पेंडीमिथालिन (Pendimethalin) 1 लीटर प्रति हेक्टेयर।

रोग एवं कीट नियंत्रण

* **झुलसा रोग:** कार्बेन्डाजिम का छिड़काव करें।
* **जड़ सड़न:** ट्राइकोडर्मा के प्रयोग से नियंत्रित किया जा सकता है।
* **थ्रिप्स या माहू:** इमिडाक्लोप्रिड या डाइमेथोएट का छिड़काव करें।

कटाई और तेल निष्कर्षण * मेंथा की कटाई रोपाई के 90-120 दिन बाद की जाती है। * स्पियर मिंट में फूल आने के पर तथा अन्य प्रजातियों में जब ऊपर वाली पत्तियाँ छोटी तथा नीचे की पत्तियाँ पिली पड़ने लगे तब जमीन की सतह से कटाई करनी चाहिए । * कटाई के बाद पौधों को सुखाकर डिस्टिलेशन यूनिट में तेल निकाला जाता है।

उत्पादन एवं आय: * एक हेक्टेयर क्षेत्र से लगभग 150-200 किग्रा मेंथा तेल प्राप्त किया जा सकता है। * बाजार में मेंथा तेल की कीमत Rs.900- Rs.1500 प्रति किग्रा के बीच होती है। * इस तरह किसान एक हेक्टेयर से Rs.1.5 से Rs.3 लाख तक की आय कर सकते हैं।

मेंथा की खेती के लाभ: * नकदी फसल होने के कारण जल्दी आमदनी मिलती है। * अन्य फसलों के साथ अंतःफसली के रूप में उगाया जा सकता है।* इसमें रोग और कीट का प्रभाव तुलनात्मक रूप से कम होता है। * कम समय में तैयार होने वाली फसल है।

निष्कर्ष: मेंथा की खेती किसानों के लिए एक वरदान साबित हो सकती है यदि इसे वैज्ञानिक तरीके से किया जाए। उपयुक्त किस्मों का चयन, समुचित उर्वरक प्रबंधन, समय पर सिंचाई एवं कटाई, और डिस्टिलेशन की उचित व्यवस्था से किसान अधिक लाभ कमा सकते हैं। सरकार द्वारा समय-समय पर मेंथा उत्पादकों को प्रशिक्षण, अनुदान एवं मार्केटिंग सहायता भी दी जाती है। पूर्वी उत्तर प्रदेश जैसे क्षेत्रों में मेंथा की खेती आजीविका सुधार का एक सशक्त साधन बन सकती है।

शीतला कृषि सेवा केन्द्र
बंटी सिंह गुर्जर (बामौर वाले)
99267-31867, 83055-69923
खाद, बीज एवं कीटनाशक दवाओं के थोक एवं खेरिज विक्रेता

हमारे यहां धान, गेहूँ, सोयाबीन, सरसों, तिली एवं सब्जियों के बीज, खाद एवं उच्चकोटि की कीटनाशक दवाईयां उचित मूल्य पर मिलती है।
पता : पशु अस्पताल के सामने, भितरवार रोड, डबरा ग्वालियर (म.प्र.)
01/203-24

बुन्देलखण्ड के पारम्परिक व्यंजन

डॉ. दीक्षा गौतम
डॉ. दीप्ती भार्गव, डॉ. सौरभ
(सहायक प्राध्यापक) सामुदायिक विज्ञान
महाविद्यालय, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक
विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

भारत के मानचित्र में बुन्देलखण्ड एक विशिष्ट पहचान लिये हुए है। उत्तर प्रदेश के दक्षिणी भू-भाग के छह जिले इस क्षेत्र में आते है। बुन्देलखण्ड उत्तर प्रदेश का ऐतिहासिक क्षेत्र है जो कि कई सारी पारम्परिक व सांस्कृतिक थातीयों को संजोए हुए है।

बुन्देलखण्ड में खानपान, लोक सांस्कृति, भाषा, रहन-सहन, लोक गीत, लोक कथाएं भिन्न-भिन्न है। इस लेख में मुख्यतः बुन्देलखण्ड की पारम्परिक व्यजनों को संकलित किया गया हे। बुन्देलखण्ड के पारम्परिक व्यंजनों की खास बात है कि बहुत ही सादे व पोषण से युक्त होते है। बुन्देलखण्ड के व्यंजन अन्य व्यंजनों से काफी अलग और स्वादिष्ट भी होते है। यहॉं मुख्यतः श्री अन्न, गेंहू, मूंग दाल, बेसन, मठ्ठा, गुड़ आदि का प्रयोग करके व्यंजन बनाये जाते है। इन व्यंजनों को अवसरों के अनुसार भी बनाया जाता है इस लेख में कुछ खास व्यंजनों को संजोया गया जो आज भी बुन्देलखण्ड के घरों में पारम्परिक रूप से बनाया जा रहा है।

1.पूड़ी के लड्डू

ये लड्डू निर्धन परिवारों में बूंदी के लड्ओं के स्थानापत्र कहे जा सकते हैं, पर स्वाद में उनसे भिन्न होते हैं। ये त्यौहारों पर या बुलावा (बुलउआ) के लिए बनाये जाते हैं। बेसन की बड़ी एवं मोटी पूड़ियां तेल में सेंककर हाथों से बारीक मीड़ी (मींजी) जाती है। फिर उन्हें चलनी से छानकर थोड़े से घी में भूना जाता है। उसके बाद शक्कर या गुड और इलायची या काली मिर्च भी डाल कर हाथों से बांधा जाता है।

2.आँवरिया

इसे आंवले की कढ़ी भी लोग कहते हैं। सूखे आंवलों की कलियों को घी या तेल में भूनकर सिल पर पीसा जाता है। बेसन को पानी में घोलकर किसी बर्तन में चूल्हे पर चढ़ा देते हैं और उसी में आंवलों का यह चूर्ण डाल देते हैं। मिट्टी के बर्तन अर्थात हण्डी में अधिक स्वादिष्ट बनता है। लाल मिर्च, जीरा, प्याज एवं लहसुन आदि सामान्य मसाले पीसकर डाले जाते हैं। मसाले पीसकर डाले जाते हैं। मसाले के इस मिश्रण को तेल या धी में भूनकर बेसन को घोल छौंका जाये तो और अच्छा है। नमक अवश्य डाला जाता है।

3.हिंगोरा/मीड़ा

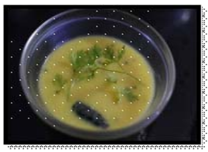

यह हींग से व्युत्पन्न हुआ है। मटटे के अभाव में बेसन का घोल थोड़ी सी हींग छौंककर पका लेते हैं। साधारण नमक डाल देते है। यह एक प्रकार की मठ्ठाविहीन कढ़ी है। यह भी स्वादिष्ट पर भारी होता है।

4.थोपा

यह शब्द 'थोपने, से बना है। बेसन को पानी में घोलकर कड़ाही में हलुवे की तरह पकाते हैं। उसमें नमक, मिर्च, लहसुन, जीरा एवं प्याज काटकर मिला देते है। जब हलुवा की तरह पककर कुछ गाढ़ा हो जाता है, तब जरा-सा तेल छोड़ देते है। पक जाने पर किसी थाली या हुर से पर तेल लगाकर हाथ से थोप देते हैं। बर्फी या हलुवे की तरह थोप दिये जाने पर छोटी-छोटी कतरी बना दी जाती है। इन्हें ऐसा ही खाया जाता है और मट्ठे में भी। मट्ठे में डालकर रोटी से भी शाक (साग) की तरह खाते हैं। निर्धन परिवारों का यह नाश्ता भी है।

5.महेरी या महेड़

ज्वार का दलिया या चावल (पत्थर की चक्की से पिसा हुआ) छाछ, दही या मट्ठे में चुराया (पकाया) जाता है। जरा-सा नमक डाल देते है। यह मिट्टी के बर्तन में अधिक स्वादिष्ट बनती है। इसे भी सादा या मीठे के साथ खाया जाता है। जाड़े की रातों में यह अधिक बनायी जाती है और सुबह खायी जाती है।

6.मांडे

ये मैदा से बनाये जाते हैं। इनके बनाने की विधि रोटी वाली ही है। अन्तर यह है कि रोटी लोहे के तवे पर सेंकी जाती है, जबकि मांड़े मिट्टी के तवों पर, जिन्हें कल्हे कहते हैं, बनाये जाते हैं। तवे कुम्भकार के यहां से बने हुए आते है। मांडे रोटी से आकार में बड़े होते है। इन्हें घी में डुबोया जाता है। चीनी या गुड से खाया जाता है। मांड़े शादी ब्याह के अवसर पर बनाया जाता है।

7.एरसे

एरसे या अनरसे बुन्देलखण्ड में त्यौहारों विशेषकर होली या दीपावली, पर बनाये जाते है। चावल भिगोंकर पीसकर या मूसल से कूटे गए चावलों के आटे से बनाये जाते है। आटे में गुड़ या चीनी मिला देते हैं और फिर पूड़ियों की तरह घी में पकाते हैं। घी के एरसे ही अधिक स्वादिष्ट होते है।

8.करार

मूंग की दाल भिगोकर, उसके छिलके हटाकर एवं उसे पीसकर दही या मट्ठे में घोलकर कड़ी की तरह बनाते है। इसके बाद इस घोल को मसालों सहित बेसन की कढ़ी की तरह पकाते है। इसी प्रकार हरे चनों (छोले या निघोना) की कढ़ी बनायी जाती है। करार में दाल की पकौड़ी भी डाली जाती है।

9.अद्रैनी

आधा गेहूं का आटा एवं आधा या आधे से कम बेसन मिलाकर जो नमकीन पूड़ी बनायी जाती है, उसे अद्रैनी कहते है। यह तेल या घी में बनती है। इसमें अजवायन का जीरा डाला जाता है। बड़ी स्वादिष्ट होती है।

10.बेसन के आलू

सूखे हुए आंवलों को घी या तेल में भून कर और पत्थर पर पीसकर बेसन में मिलाते है। और उस मिश्रण से आलू के समान छोटे-छोटे लड्डू बना लेते है। इन्हें खौलते पानी में पकाते है। फिर चाकू से छोटे-छोटे काटकर तेल या घी में भूनते हैं। इसके बाद मसालों के साथ छौंक कर कड़ाही या पतीली में बनाते हैं। ये मांस से भी अधिक स्वादिष्ट बनते है।

11.मुंगौड़े

मुंगौड़े बुंदेलखंड के लोकप्रिय व्यंजनों में से एक है जो मूंग दाल से बनाया जाता है। यह रक्षा बंधन, मकर संक्रांति, जन्माष्टमी, दशहरा हाथ सभी खास मौकों पर बनाई जाती है। मूंग की दाल रात भर भिगोकर पीस ली जाती है ूि उसमें प्याज मिर्च धनिआ, नमक काटकर छोटी-छोटी पकौड़ी की तरह तेल में तल ली जाती है चटनी के साथ स्वादिष्ट लगते है।

12.बुन्देली कढ़ी

कढ़ी बुन्देलखण्ड की सबसे प्रचलित व्यंजन है जो हर महत्वपूर्ण अवसर पर बनाई जाती है। शादी, त्योहार, पूजा, दावत व पितृपक्ष आदि के अवसर पर कढ़ी बनायी जाती है बेसन को मठ्ठे में घोलकर तेल में राई लाल मिर्च व हिंग डालकर छौंक देते है, पकने के बाद उसमें बेसन की पकौड़ी डाल दी जाती है। बाद में हींग करी पत्तें का छौंक लगा दिया जाता है।

13.फरा

गेहूँ से बनाया जाता है इसमें आटे को गूँथकर छोट लोई बनाकर दोनो हाथों के गादी के बीच रखकर लम्बा करके अंगूठे से दबाकर सेप दिया जाता है गर्म पानी में डालकर उबाल लेते है। उसके बाद घी या शक्कर, गुड के साथ खाया जाता हे, पोष्टिक होते है क्योंकि उबाल कर बनाया जाता है। लम्बा गोल किसी भी सेप का बनाया जा सकता है।

14.बरा

उरद दाल रात भर पानी में भीगो कर पीस कर उसमें हींग व मिर्च डाल कर फेट कर पेस्ट बना लेते है। सूती कपड़े की मदद से फरे कों गोल सेप देते है गर्म तेल में तलकर मठ्ठे में छौक कर डाल दें। 1-2 घण्टे में गलकर मुलायम हो जाने के बाद चीनी के बूरे के साथ या सादा खाये जाते है। होली व दीपावली के मौके पर खास बनाये जाते है करवा चौथ शादी ब्याह पर बनाये जाते है।

15.रसखीर

गन्ने के रस में पके हुए चावलों को 'रसखीर' कहते हैं। इस भोजन के लिए दूसरों को निमन्त्रित भी किया जाता है।

सस्टेनेबल डेयरी फार्मिंग एक स्थायी डेयरी प्रणाली की ओर

इं. विशाल कुमार असिस्टेंट प्रोफेसर (डेयरी टेक्नोलॉजी), कॉलेज ऑफ पोस्ट हार्वेस्ट टेक्नोलॉजी एंड फूड प्रोसेसिंग, सरदार वल्लभभाई पटेल यूनिवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चर एंड टेक्नोलॉजी, मेरठ

आकांक्षा रिसर्च स्कॉलर, सेंटर ऑफ फूड टेक्नोलॉजी इंस्टीट्यूट ऑफ प्रोफेशनल स्टडीज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रस्तावना

भारत दुनिया का सबसे बड़ा दुग्ध उत्पादक देश है जहाँ ग्रामीण अर्थव्यवस्था का एक बड़ा हिस्सा डेयरी उद्योग पर आधारित है। परंतु बढ़ते पर्यावरणीय संकट संसाधनों की सीमित उपलब्धता और जलवायु परिवर्तन को देखते हुए पारंपरिक डेयरी पद्धतियाँ अब चुनौतीपूर्ण होती जा रही हैं। ऐसे में सस्टेनेबल डेयरी फार्मिंग यानी स्थायी डेयरी प्रणाली को अपनाना समय की माँग बन चुकी है।

सस्टेनेबल डेयरी फार्मिंग का अर्थ और आवश्यकता

सस्टेनेबल डेयरी फार्मिंग एक ऐसी प्रणाली है जिसमें दुग्ध उत्पादन करते समय पर्यावरण की रक्षा पशु कल्याण संसाधनों की दक्षता और किसानों की सामाजिक व आर्थिक स्थिरता का ध्यान रखा जाता है। इसकी आवश्यकता इसलिए है क्योंकि

* परंपरागत प्रणालियाँ प्राकृतिक संसाधनों पर अधिक दबाव डालती हैं
* मीथेन जैसी गैसों के उत्सर्जन से जलवायु परिवर्तन में योगदान
* पशुओं के स्वास्थ्य और उत्पादन क्षमता में गिरावट
* किसानों की बढ़ती लागत और घटती आय

प्रमुख घटक

पर्यावरणीय प्रबंधन

* ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने हेतु बायोगैस संयंत्र
* वर्षा जल संचयन सौर ऊर्जा का उपयोग
* गोबर मूत्र और कृषि अपशिष्ट का जैविक खाद में रूपांतरण

पशु कल्याण

* स्वच्छ, हवादार और आरामदायक शेड
* संतुलित आहार और साफ पीने का पानी
* नियमित टीकाकरण और स्वास्थ्य परीक्षण

संसाधन प्रबंधन

* जल का कुशल उपयोग (रीसायक्लिंग ड्रिप सिस्टम
* ऊर्जा संरक्षण (सौर चालित मशीनें
* कम लागत वाले चारा उत्पादन के उपाय

चारा और पोषण प्रबंधन

* स्थानीय व मौसमी चारे जैसे नेपियर घास बरसीम आदि का प्रयोग
* चारे में पोषक तत्वों की संतुलित मात्रा
* खनिज मिश्रण और सप्लीमेंट का समुचित उपयोग

आधुनिक तकनीक का समावेश

डिजिटल डेयरी प्रबंधन

* मोबाइल ऐप्स और सेंसर से पशु स्वास्थ्य पर नजर
* स्वचालित मिल्किंग मशीनें
* पशु ट्रैकिंग और फर्टिलिटी डेटा संग्रहण

डेटा एनालिटिक्स और आईश्टी

* उत्पादन लागत और लाभ का विश्लेषण
* गुणवत्ता नियंत्रण और बाजार पूर्वानुमान

किसान सशक्तिकरण और प्रशिक्षण

* कृषि विज्ञान केंद्र और डेयरी बोर्ड के माध्यम से प्रशिक्षण
* महिला डेयरी समूहों को बढ़ावा
* स्वयं सहायता समूह के माध्यम से वित्तीय मदद

सामाजिक और आर्थिक प्रभाव

* ग्रामीण रोजगार के नए अवसर
* आय में वृद्धि और जीवन स्तर में सुधार
* महिलाओं की भागीदारी और सशक्तिकरण

सरकारी योजनाएं और नीतियां

योजना का नाम	उद्देश्य
राष्ट्रीय डेयरी योजना	उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि
गोवर्धन योजना	गोबर से ऊर्जा और खाद का उत्पादन
ई–गोपाला ऐप	पशु प्रबंधन और स्वास्थ्य सेवाएँ

चुनौतियाँ और समाधान

चुनौतियाँ

* सीमित जागरूकता
* तकनीकी ज्ञान की कमी
* प्रारंभिक लागत

समाधान

* प्रशिक्षण और प्रचार-प्रसार
* सहकारी समितियों द्वारा सामूहिक संसाधन
* सब्सिडी और लोन सुविधाएँ

निष्कर्ष

सस्टेनेबल डेयरी फार्मिंग केवल एक कृषि तकनीक नहीं बल्कि एक दीर्घकालिक सोच है जो पर्यावरण समाज और अर्थव्यवस्था के संतुलन को बनाए रखने की दिशा में कार्य करती है। यदि इसे व्यापक स्तर पर अपनाया जाए तो यह भारत को पोषण सुरक्षा ग्रामीण समृद्धि और पर्यावरणीय संरक्षण की राह पर आगे बढ़ा सकती है।

दिनेश शिवहरे
Mob. : 98263-55396
मध्य प्रदेश का पहला
श्री दयाल बन्धु केन्द्र
(हिनौतिया वालों की दुकान)
सभी प्रकार की कीटनाशक दवाईयां, जिन्क एवं बीज आदि के थोक एवं खेरीज विक्रेता
गायत्री मंदिर के पास, जवाहर गंज, डबरा जिला ग्वालियर (म.प्र.)
E-mail : shridayalbandhu@gmail.com, dineshshivhare66yahoo.com
08/2023-24

सोयाबीन की वैज्ञानिक खेती

धन्य कुमार (शोध छात्र) आनुवंशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग, कृषि संस्थान, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

आरती (शोध छात्रा) आनुवंशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग, कृषि संस्थान, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झांसी

डॉ. अनुराग दुबे (सहायक प्राध्यापक) आनुवंशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग, कृषि संस्थान, बुंदेलखंड वि.वि. झांसी

परिचय: सोयाबीन एक तिलहन फसल है इसमें प्रोटीन 40% एवं वसा 20% होने के कारण यह प्रोटीन का एक प्रभावी माध्यम है मध्य प्रदेश की जलवायु सोयाबीन के लिए काफी अनुकूल है भारत में 2014-15 में लगभग 102 लाख टन उत्पादन हुआ मध्य प्रदेश में इस दौरान लगभग 60 लाख टन का उत्पादन हुआ। आधुनिक जमाने में सोयाबीन का इस्तेमाल सिर्फ तेल के लिए ही नहीं हो रहा बल्कि इससे कई अन्य उत्पाद जैसे सोया दूध सोया पनीर इत्यादि बनाए जा रहे और इस्तेमाल किया जा रहे। जो स्वास्थ्य के लिए काफी फायदेमंद माने जाते हैं।

सोयाबीन की वैज्ञानिक खेती पद्धति: सोयाबीन फसल के लिए बुवाई का समय खेत का चयन एवं तैयारी बी का चयन बुवाई का तरीका खाद्य सच्चाई खरपतवार रोग बीमारियों की पहचान एवं नियंत्रण तथा कटाई ट्रेकिंग ग्रेडिंग एवं संग्रह आदि की आधुनिक कृषि पद्धति से उचित समय पर पूर्ण करके फसल की गुणवत्ता एवं अधिक उत्पादन प्राप्त करना वैज्ञानिक खेती पद्धति है।

बुवाई: सोयाबीन की बुवाई जून के अंतिम सप्ताह में सर्वोत्तम होती है तथा बुवाई के समय यह ध्यान रखना चाहिए की जमीन में पर्याप्त मात्रा में नमी हो मानसून आने पर लगभग 4 से 5 इंच वर्षा होने के बाद अंकुरण बाद में फसल विकास के लिए जमीन में पर्याप्त नमी हो जाती है तथा वायुमंडल एवं मृदा का तापमान 28 से 30 डिग्री सेल्सियस होने से फसल का विकास अच्छा होता है 15 जुलाई के बाद सोयाबीन की बुवाई लाभदायक नहीं होती है।

खेत की तैयारी: खेत की तैयारी करते समय यह ध्यान रखना चाहिए की गहरी काली मिट्टी वाले खेत में जल निकास की उचित व्यवस्था हो एवं गर्मी की जुताई हर तीसरे वर्ष 9 से 12 इंच गहराई तक करना चाहिए इससे गॉड्स बीटल के पा तथा अन्य कीट एवं फफूंद गर्मी में खुले खेत में नष्ट हो जाएंगे।

बीच का चयन: बेहतर उत्पादन के लिए उन्नत प्रजातियों के अच्छे बीच का उपयोग बहुत जरूरी है जैसेय अहिल्या तीन माह 90-99 दिन में जाती है तथा उत्पादन 12-44 कुंतल एकड़ होता है तथा यह जल्दी पकने वाली बीमारियों एवं पर्णवाक्षी कीटों की प्रतिरूप किस्म है

बीज दर: सोयाबीन की बुवाई के लिए दोनों के अनुसार के तीन से 40 किलो बीज दर एवं 15 से 20 किलो बीच की प्रतिबद्ध की दर से उपयोग करें

बीज के साथ किसी भी रासायनिक उर्वरक का प्रयोग ना करें

बीज उपचार: सोयाबीन फसल में बीज उपचार करने के लिए विधि होती हैं जिनका नाम एफ आई सी है सर्वप्रथम फबुद्दीन नाशक में बिठाफिक्स पावर अल्ट्रा कार्बोनियम प्लस थायराम 2 ग्राम या दो ग्राम कार्बोडियम प्रति किलोग्राम बीच के मन से भी उपयोग किया जा सकता है इसके बाद राइजोबियम कल्चर पीएस कलर एवं ट्राइकोडर्मा 5 ग्राम प्रत्येक से 1 क बीज उपचार किया जाता है इन कवच नेशन से उपचारित बीज को छाया में सुखाकर ही बनी करनी चाहिए

फसल अंतरण: कतार से कतर की दूरी 30 से 45 सेंटीमीटर एवं पौधों से पौधे की बीच की दूरी 4 से 5 सेंटीमीटर रखें तथा गहराई 3 से 5 सेंटीमीटर के अनुसार बुवाई करना या सिलेंडर से करें सोयाबीन फसल में बीज दर एवं पौधों संख्या का अत्यधिक महत्व होता है एक हेक्टेयर में चार से साढे चार लाख तक पौधे अच्छे उत्पादन के लिए उपयोग है

फसल के साथ अंतर भारतीय फैसलें: सोयाबीन+ अरहर (4:2)

सोयाबीन +मक्का (4:2), सोयाबीन+ ज्वार (4:2) =सोयाबीन को अंतरवर्तीय फसल अथवा मिश्रित फसल के साथ में उगना अधिक लाभ पिए है

जल संरक्षण: 6 से 8 करो के बाद एक कुंड एक कुंड खाली छोड़ते खाली कुंड को दूर चलते वक्त गहरा कर देते हैं इससे अधिक वर्षा की स्थिति में जल निकासी एवं अल्प वर्षा की स्थिति में जल संरक्षण होग। सीड ड्रिल के साथ फवउदी का प्रयोग करें जिससे जल संरक्षण एवं अधिक पौधों की संख्या प्राप्त की जा सकती है।

खरपतवार नियंत्रण: सोयाबीन की अच्छी पैदावार के लिए बनी के बाद कम से कम 6 सप्ताह तक समय-समय पर निंदाई गोदाई या डोरा कला चलकर अनुसंसित खरपतवार नाशक की छिड़काव किया जाता है

रासायनिक नाम: बेसलीन लॉरैलिन का उपयोग 900 मल एकड़ बनी के पूर्व उपयोग करते हैं

ड्यूल मेटा क्लोर का 800 उस का उपयोग बनी के तुरंत बाद करते हैं

कीटों से बचाव: फसल सुरक्षा हेतु एकीकृत कीट नियंत्रण के उपाय जैसे नेम सेल एवं लाइट ट्रैप्स प्रॉमिनेंट एप्स बर्ड बंपर एवं अन्य जैविक कम लागत की तकनीक द्वारा नियंत्रित करें संपूर्ण कीटों के लिए ड्राइवर क्लोरोपीद 17.8 एस एम एल 100 मल प्रति एकड़ का छिड़काव करें

रोग प्रतिबंधन: गेरुआ रोग यात्रा को होने पर प्रॉपर्टी को नोजोल यार्ड हेक्सा केनोजोल 300 मिली एकड़ इस्तेमाल करें

पीला मैजिक रूप की रोकथाम हेतु थीम एक्शन 25 वर्ग 40 ग्राम एकड़ छिड़काव करें

खाद एवं उर्वरक: समुचित उत्पादन के लिए पोषण तत्वों के अनुशंसित की गई मात्रा 20 के नाइट्रोजन 60 से 80 कैलोरी सपोर्ट 50 किलोग्राम पोटाश एवं 20 किलोग्राम गंधक है इसका उपयोग किया जाता है इसको प्रदान करने के लिए 43 किलोग्राम यूरिया 3 किलो 75 ग्राम 400 किलोग्राम सुपर फास्फेट एवं डेढ़ सौ से 200 किलोग्राम और रेट ऑफ पोटाश एवं 150 से 200 किलोग्राम ऐसी जिप्सम डालना चाहिए रासायनिक करो का संतुलन उपयोग के साथ वर्मी कंपोस्ट नाइट्रेट खाद गोबर खाद का अधिक उपयोग करें

फसल की कटाई एवं हार्वेस्टिंग: पूर्ण रूप से पाक जाने पर सोयाबीन की कलियों का रोग बुरा हो जाता है यह समय फसल की कटाई के लिए उपयुक्त है और इस समय कटाई कर लेने से चटकने पर दाने बिखरते से होने वाली नानी से समुचित कमी लाई जा सकती है फलियों के पकाने की उचित अवस्था पर कलयुग का रंग बदलने या हरापन पूर्णता समाप्त होने पर कटाई करनी चाहिए। कटी हुई फसल को धूप में दूसरे दिन सुखाकर हरवेस्टिंग से धीमी गैर 300 से 400 आरपीएम पर ट्रेकिंग करनी चाहिए थ्रेसर की गति में कमी लाने हेतु बड़ी पुलिया उपयोग कर सकते हैं इस बात का ध्यान रखें हार्वेस्टिंग के समय बीच का छिलका न उतरे एवं बी में दरार ना पड़े

भंडारण: हार्वेस्टिंग के पश्चात बी को तीन से चार दिन धूप में अच्छा सुखाकर जब सोयाबीन की दोनों में 10: नामी हो मुंह में डालकर चबाने पर आसानी से टुकड़े हो जाए तब झूठ की बोरी में भंडारण करना चाहिए

भंडारण गृह ठंडा हवादार वी कट रहे तो होना चाहिए बीच की बोरियों से भरकर अन्य बोरियों में अधिक एवं ऊपर तक नहीं रखना चाहिए ।

सोयाबीन के बीज के बोरों को भंडारण गृह में ले जाते समय ऊंचाई सी लटके इनमें बीच की अंकुरण क्षमता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

सुरेश हरितवाल (अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन) कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड वि. वि. झांसी (उ.प्र.)

मुकेश हरितवाल पीएचडी (मृदा विज्ञान) स्कूल ऑफ एग्रीकल्चर साइंस, नागालैंड विश्वविद्यालय

युवराज कुमावत (अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन) कृषि एवं प्राकृतिक विज्ञान संस्थान, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

बाजरा के प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

परिचय

बाजरा जिसे वैज्ञानिक रूप से पेनीसेटम ग्लूकम के नाम से जाना जाता है जो कि गैमिनी और पोएसी परिवार से संबंधित है बाजरा वर्षा पर आधारित असिंचित एवं सिंचित क्षेत्रों में खरीफ ऋतु में उगाया जाता है यह अधिकतर अफ्रीका और एशिया के शुष्क क्षेत्रों में उगाया जाता है बाजरा उत्पादन में भारत सबसे आगे हैं जो दुनिया भर के 131 देशों में कुल उत्पादन का 20ः योगदान देता है प्रति 100 ग्राम बाजरा में बहुत अधिक कैलोरी (378 किलो कैलोरी), कार्बोहाइड्रेट (65-75%), वसा (2-5%) , और प्रोटीन (10-12%), होते हैं। बाजरा विशेष रूप से मैग्नीशियम, फॉस्फोरस, आयरन, जिंक, और बी- विटामिन ख् नियासिन, थायमिन और राइबोफ्लेविन, का एक अच्छा स्रोत है इस गरीब मनुष्य का भोजन भी कहते हैं आमतौर पर विभिन्न कीट बाजरा की फसल को पूरी वानस्पतिक वृद्धि अवस्था में उसे नुकसान पहुंचा सकते है और उपर को गंभीर नुकसान पहुंचा सकते हैं भारत में बाजरा पर कीटों की 150 से अधिक प्रजातियों का हमला होता है जिनमें सबसे महत्वपूर्ण है शूट फ्लाई , स्टेम बोरर , सफेद लट , कातरा।

1.शूट फ्लाई जिसे एथेरिगोना एप्रोविसमेटा कहा जाता है इसका आक्रमण नर्सरी व बूट लीफ अवस्था दोनों पर ही होता है यह कीट पतियों के नीचे अंडे देता है और अंडे से निकलने वाला मेगट (लार्वा) पौधों के बढ़ते हिस्सों को खाते हैं जिसे ''डेड हार्ट '' (मृत तना) की समस्या हो जाती है इससे पौधौ का विकास रुक जाता है व क्षतिग्रस्त पौधौ की पैदावार कम हो जाती है।

2.सफेद लट विभिन्न धान्य फसलें सफेद लट (होलोट्रिकिया कोन्सेन्गुनिया) से संक्रमित होती है सफेद लट , जिसे अंग्रेजी में व्हाइट ग्रब) कहा जाता है जो सी आकार की होती है और इसका रंग मटमैला सफेद होता है सफेद लट की दूसरी और तीसरी अवस्था , जिसे ''लट'' या ''ग्रब'' कहा जाता है सबसे ज्यादा नुकसान पहुंचाती है ये लटे बाजरे की जड़ों को खा जाती है जिससे पौधे कमजोर व पीले होकर सूखने लगते है।

3.कातरा बाजरा की फसल में कातरा (हेलिकोवर्पा आर्मिजेरा) एक प्रमुख कीट है जो फसल को काफी नुकसान पहुंचाता है इसकी लार्वा (लट) अवस्था पौधों के तने व पत्तियों को काटकर नुकसान पहुंचता है कातरा कीट लाल - भूरे रंग के बालों से ढका होता है कातरा कीट बाजरा की पतियों को खाता है जिससे प्रकाश संश्लेषण की प्रक्रिया बाधित होती है और पौधों की वृद्धि रुक जाती है जिससे उपज पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

4.तना छेदक बाजरा में तना छेदक (चिलो पार्टेलस) की लार्वा अवस्था पौधे के तने में छेद करके अंदर ही अंदर खोखला

कर देती है तने पर छोटे-छोटे छेद दिखाई देते हैं जो बाद में गहरे रंग के निशान में बदल जाते हैं तने में छेद होने के कारण पौधों को प्राप्त नमी व पोषण नहीं मिल पाता जिससे पतिया सूख जाती है और पौधौ की पैदावार कम हो जाती है।

5.टिड्डी (सिस्टोसरका ग्रिगेरिया) जिसे ग्रासहॉपर भी कहा जाता है बाजरे की फसल में अगस्त महीने में टिड्डियों का हमला देखने को मिलता है बाजरे को टिड्डी की निम्फ और वयस्क दोनों अवस्थाओं में नुकसान पहुंचता है लेकिन निम्फ अवस्था अधिक नुकसानदायक होती है जो पौधों की हरी पत्तियों को खा जाती है जिससे पौधे की प्रकाश संश्लेषण क्रिया प्रभावित होती है और पौधौ का विकास रुक जाता है।

प्रबंधन

बाजरा में लगने वाले कीटों के जैविक प्रबंधन के लिए आप नीम के तेल या अर्क का उपयोग कर सकते हैं जो कीटो को नष्ट करने के साथ-साथ फफूंद और बैक्टीरिया से भी बचाता है! रुबाजार में तना छेदक के नियंत्रण हेतु परजीवी के रूप में अपान्टेलस फ्लेक्स का प्रयोग किया जाता है अण्ड परजीवी ट्राइकोग्रामा किलोनिस 2,50,000/ हेक्टेयर की दर से प्रति सप्ताह व कोटेसिया फ्लेविस 50000/हेक्टेयर का प्रयोग भी कर सकते हैं। बाजार में दीमक के नियंत्रण हेतु क्लोरोपायरीफॉस 4 ml/kg बीज , बीजोपचार हेतु उपयोग लिया जा सकता है! रुसफेद लट के नियंत्रण के लिए बाजार की खड़ी फसल में इमिडाक्लोप्रिड 17.8% SL 500 मिलीलीटर या क्यूनालफॉस 25 EC 4 लीटर दवाई प्रति हेक्टेयर की दर से 80 से 100 किलोग्राम सूखी मिट्टी मे मिलकर भुरकाव करें। अंडे और लार्वा को फसल से एकत्रित करके नष्ट करें रुकट प्रतिरोधी किस्म का चयन करें। रुबाजार की खेती हर साल एक ही जगह पर बार-बार न करें फसल चक्र अपनाएं .कीट के धोसले को नष्ट करने के लिए ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई करें। रुहर सप्ताह समय-समय पर फसल का निरीक्षण करें। खेत के चारों ओर उगे खरपतवारों को नष्ट करें। रुनर पतंगो को पकड़ने के लिए खेत में सम्मान दूरी पर 12 हेक्टेयर की दर से फेरोमोन ल्यूर लगाएं! रुकीटों के प्राकृतिक शत्रुओं की पहचान कर उनका संरक्षण करें और उनकी सक्रियता को बढ़ाएं।

सारांश

बाजरा फसल में कीट प्रबंधन के लिए, कीटों की पहचान करना, जैविक और रासायनिक तरीकों का उपयोग करना और फसल चक्रण जैसी एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) रणनीतियों को अपनाना महत्वपूर्ण है।

01/2023-24

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

कालानमक किरण चावल का अग्रणी उत्पादन

युवराज कुमावत (अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन) कृषि एवं प्राकृतिक विज्ञान संस्थान, दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)

मुकेश कुमार मीणा पीएचडी (अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन) स्कूल ऑफ एग्रीकल्चर साइंस, नागालैंड वि.वि.

सुरेश हरितवाल (अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन) कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड वि. वि. झांसी

परिचय

कालानमक चावल की किस्म उत्तर प्रदेश के उत्तर-पूर्वी भाग में उगाई और खाई जाने वाली सबसे अच्छी सुगंधित चावल का प्रतीक है। स्थानीय स्तर पर, इस विरासत चावल को भारतीय रहस्यमय चावल बासमती से भी बेहतर माना जाता है। हालांकि, सदियों से खेती और किसानों के बीज को संभालने के तरीके, अनुसंधान संस्थानों की उपेक्षा और उच्च उपज देने वाली किस्मों (HYV) द्वारा आर्थिक मोर्चे पर दोहरे हमले के कारण इसका क्षेत्रफल 50,000 हेक्टेयर से घटकर 2,000 हेक्टेयर से भी कम हो गया। ''अनाज की गुणवत्ता'' में गिरावट और सुगंध का नुकसान सहज उत्परिवर्तन और आउट-क्रॉसिंग, गैर-वैज्ञानिक बीज उत्पादन और खेती, बदले हुए वातावरण और प्रसंस्करण प्रथाओं के कारण हुआ। हालांकि, 1998 से 2021 के दौरान सहभागी ग्रामीण विकास फाउंडेशन (PRDF) में किए गए निरंतर शोधों के माध्यम से कालानमक को बचाने और पुराने गौरव को वापस लाने के लिए किस्मों और प्रौद्योगिकियों का विकास किया गया। इसकी खेती का सटीक इतिहास दर्ज नहीं है, लेकिन ऐसा माना जाता है कि कालानमक को उत्तर प्रदेश के सिद्धार्थनगर जिले के बजहा जंगल के किसानों को लगभग 3,000 साल पहले भगवान बुद्ध द्वारा दिया गया था।

कालानमक चावल

कालानमक चावल की एक भूसी जिसे अक्सर 'बुद्ध का चावल' कहा जाता है, भारत के सांस्कृतिक और कृषि इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यह गैर-बासमती सुगंधित, छोटे और मध्यम आकार के दाने वाला चावल है जिसमें मजबूत और सुखद सुगंध वाला चावल की किस्म है, ऐसा माना जाता है कि इसे गौतम बुद्ध ने स्वयं सिद्धार्थ नगर जिले के किसानों को उपहार में दिया था। कालानमक नाम इसलिए पड़ा क्योंकि इसकी भूसी काली (काला) होती है और नमक का मतलब है कि इसे नमकीन मिट्टी पर उगाया जा सकता है। लगभग 3,000 साल पहले भगवान बुद्ध से एक आशीर्वाद, और अब उत्तर प्रदेश, भारत का एक विरासत चावल इसकी सुगंध, स्वाद और पौष्टिक गुणवत्ता के लिए मूल्यवान है। कालानमक चावल को 2013 में जीआई टैग से सम्मानित किया गया है, जिसने सिद्धार्थ नगर और उत्तर प्रदेश के आसपास के कृषि जलवायु क्षेत्र को मान्यता दी ये 11 जिले तीन मंडलों में स्थित हैं जिनमें पहला गोरखपुर (देवरिया, गोरखपुर, महाराजगंज, कुशीनगर जिले), दूसरा बस्ती, मंडल कवर (बस्ती, संत कबीर नगर, सिद्धार्थ नगर जिले) और अंतिम मंडल देवीपाटन (बेहराइच, बलरामपुर, गोंडा, श्रावस्ती जिले)। उत्तर प्रदेश सरकार ने जनवरी 2018 में ODOP(one district one product) योजना शुरू की थी। उस दौरान 75 जिलों के लिए 75 उत्पादों की पहचान की गई थी जो स्वदेशी थे। किसी योजना के तहत कालानमक चावल को वैश्विक मंच पर बढ़ावा दिया जाना चाहिए। सरकारी पहल के बाद कालानमक की खेती का रकबा 2950 हेक्टेयर से बढ़कर 13500 हेक्टेयर हो गया है। राज्य सरकार ने सिद्धार्थ नगर के किसानों को अपने उत्पाद बेचने के लिए एक डिजिटल प्लेटफॉर्म भी उपलब्ध कराया है।

कालानमक किरण का विकास और विमोचन

कालानमक KN3 और स्वर्णा सब1 के क्रॉस से चयनित, इसका कृषि विभाग के RATDS में PRDF-2-14-10 (कालानमक किरण) के रूप में परीक्षण किया गया, इसका परीक्षण 2013-2016 के दौरान RATDS में किया गया। यह 32.95 क्विंटल/हेक्टेयर की औसत उपज के साथ पहले स्थान पर रहा। इसने चेक किस्म कालानमक KN3 से 26.58% अधिक उपज दी। इसकी सुगंध सामग्री की पुष्टि भारतीय रासायनिक प्रौद्योगिकी संस्थान (IICT), हैदराबाद ने की, जिसने इसकी सुगंध KN3 के बराबर होने की पुष्टि की। यह अर्ध-बौना है, गिरने के प्रतिरोधी है और कंबाइन हार्वेस्टर द्वारा कटाई के लिए उपयुक्त है। कालानमक इसे भारत सरकार द्वारा भारत के राजपत्र संख्या 3220 भाग 2 (3) दिनांक 06.08.2019 के तहत अधिसूचित किया गया था।

आकारिक गुण एवं विशेषताए

लगभग 95 सेमी चाई तथा 35 सेमी लम्बी बालियों वाली यह प्रजाति प्रकाश अवध की संवेदी है. अर्थात् इसकी बाली 20 अक्टूबर के आस-पास ही निकलती है. भारत सरकार के केन्द्रिय प्रजाति विमोचन की 82 मीटिंग में इसको अगस्त 2019 में अधिसूचनांकित की गई थी. इसके 1000 दाने का वनज 15 ग्राम तथा दाना मध्यम पतला होता है. छोटे दाने वाली धान की यह प्रजाति अत्यधिक सुगन्धित तथा अत्यधिक साबुत चावल देती है. इसकी कुछ खास बाते है जो अन्य प्रजातियों मे इसको सर्वोत्तम बनाती है वो है इसका लोहा और जस्ता की मात्रा, प्रोटीन का प्रतिशत (10.4) और निम्न ग्लाईसिमीक इंडेक्स (53.1). ग्लाईसिमीक इंडेक्स कम होने के कारण इसको मधुमेह रोगी भी इसको खा सकते है. इसमें एमाइलोज कम (20 प्रतिशत) होता है अतः पकने पर इसका भात हमेशा मुलायम और स्वादिष्ट रहता है. फसल अवधि-135-145 दिन, बीज दर-10-12 किग्रा/एकड़ ,पौधे की ऊंचाई-90- 100 सेमी ,टिलर की संख्या 15-20 ,बुवाई का मौसम-खरीफ ,बुवाई विधि-रोपाई ,बुवाई की दूरी-20 सेंमी -15 सेमी ,उपज-20-24 क्विंटल/एकड़(अन्य पारंपरिक किस्मों की तुलना में 10-15% अधिक उपज) ,अनाज का प्रकार- अतिरिक्त लंबा पतला अनाज (बासमती प्रकार) ,सहनशील-प्रमुख रोग और कीट।

एम.एस.पी. (न्यूनतम समर्थन मूल्य)

2025-26 खरीफ विपणन सीजन के लिए नियमित धान (सामान्य किस्म) के लिए एमएसपी (न्यूनतम समर्थन मूल्य) 2,369 रुपये प्रति क्विंटल है। हालांकि कालानमक चावल के लिए कोई विशिष्ट एमएसपी नहीं है, यह एक प्रीमियम किस्म है जो अक्सर सामान्य धान के एमएसपी से अधिक कीमत प्राप्त करती है। पूर्वी उत्तर प्रदेश में कालानमक चावल 4,500 रुपये प्रति क्विंटल या उससे भी अधिक कीमत पर बिकने के लिए जाना जाता है, और चावल इससे भी अधिक कीमत पर बिक सकता है। कालानमक का उच्च बाजार मूल्यः पूर्वी उत्तर प्रदेश में कालानमक चावल रु. 4,500 प्रति क्विंटल के हिसाब से बिकता है, और चावल की कीमत रु. 35,000 प्रति क्विंटल तक भी हो सकती है जोकि सामान्य धान से 3 से 4 गुना है. इससे शुद्ध लाभ रूपया 101250 प्रति हैक्टेयर पाया गया है. इसकी जैविक खेती से उत्पादन में शुद्ध लाभ 127500 होता है जोकि सामान्य धान से 3 गुना से भी अधिक है।

निष्कर्ष

कालानमक चावल की किस्म एक ऐतिहासिक प्राकृतिक सुगंधित किस्म है जिसकी खेती भगवान बुद्ध काल से की जाती रही है और अब कालानमक चावल की किस्म भारत की विरासत में से एक है और इसे जीआई टैग मिला है जो इस किस्म के संरक्षण में बहुत मददगार होगा और वर्तमान में सरकारी भागीदारी ग्रामीण विकास फाउंडेशन गोरखपुर की मदद से विलुप्त होने से इसकी पुरानी महिमा और सुगंध को वापस लाने में मदद करेगा। यह कालानमक किस्म की खेती करने वाले किसानों के लिए बहुत फायदेमंद होगा और अंततः कृषि अर्थव्यवस्था में योगदान देगा।

12/2022-23

हाईटेक बागवानी तकनीकी अपनाकर करें क्रांतिकारी बदलाव

✍ **शिवम दीक्षित** शोध छात्र(उद्यान), सी.एस.जे.एम. यूनिवर्सिटी, कानपुर (उ.प्र.)

✍ **प्रो. अशोक कुमार पाण्डेय** विभागाध्यक्ष (उद्यान), जनता कॉलेज बकेवर, इटावा (उ.प्र.)

✍ **डॉ. अंकित सिंह भदौरिया** सहायक प्राध्यापक (उद्यान), सी. एस. जे. एम. यूनिवर्सिटी, कानपुर

परिचय: बागवानी फल और सब्जियाँ, साथ ही फूल और सजावटी पौधे उगाने का विज्ञान और कला हैं। इसे किसी बाग, बगीचे या नर्सरी की छोटी या बड़ी खेती के रूप में भी परिभाषित किया जाता हैं। हाई-टेक बागवानी तकनीक को "उन्नत प्रणालियों के रूप में वर्णित करती है जो विकास और उपयोग के सभी चरणों में फसलों पर जानकारी का प्रबंधन, नियंत्रण, संचार, समझ और रिपोर्ट करती हैं"। बागवानी एक कृषि घटक हैं, जिसमें हम फल, सब्जियाँ, फूल, जड़ी-बूटियाँ और सजावटी या सजावटी पौधे उगाते/उत्पादित करते हैं और बेचते हैं। यह कृषि जी.एन.वी. का 30% हिस्सा हैं। भारत दुनिया का दूसरा सबसे बड़ा बागवानी उत्पाद उत्पादक हैं जो दुनिया भर में फलों और सब्जियों के उत्पादन का लगभग 12% हिस्सा हैं। बागवानी फ़सलें सिर्फ़ 17% कृषि भूमि 27.2 मिलियन एकड़ पर उगाई जाती हैं।

जनसंख्या वृद्धि और जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप खाद्य असुरक्षा दिन-प्रतिदिन खराब होती जा रही हैं। आहार, पोषण और आर्थिक स्थिरता स्थापित करना महत्वपूर्ण हैं। परिणामस्वरूप, खाद्य सुरक्षा एक बहुआयामी मुद्दा हैं, जिसमें आपूर्ति उपलब्धता के अलावा मानव पोषण सुरक्षा और किसान आय सुरक्षा दोनों शामिल हैं। वर्तमान परिदृश्य में जलवायु परिवर्तन के कारण घटती भूमि और जल आपूर्ति के साथ बढ़ती आबादी को खिलाना शामिल हैं।

हाई-टेक बागवानी का महत्व और क्षेत्र

1. **उच्च गुणवत्ता वाले उत्पाद का उत्पादन:** उच्च तकनीक वाली बागवानी का महत्व और मुख्य कार्य उच्च गुणवत्ता वाले फलों का उत्पादन हैं। उपभोक्ता या बाजार की मांग के अनुरूप, उच्च तकनीक वाली बागवानी तकनीकों का उपयोग उच्च गुणवत्ता वाले फल, सब्जियां, फूल और मूल्यवर्धित वस्तुओं का उत्पादन करने के लिए किया जा सकता हैं।

उदाहरण - फलों की फसलों में बैगिंग तकनीक, कटाई के बाद फलों की बेहतर गुणवत्ता हेतु प्रशिक्षण और छंटाई, उगाने वाले कमरा में CO_2 जोड़ने से फूलों का उत्पादन और गुणवत्ता बढ़ सकती हैं।

2. **प्रति इकाई क्षेत्र में उत्पादन में वृद्धि :** उच्च तकनीक वाली बागवानी तकनीकों को अपनाकर प्रति इकाई क्षेत्र में फलों, सब्जियों, फूलों, औषधीय फसलों, वृक्षारोपण और मसालों की उत्पादकता में वृद्धि संभव हैं।

उदाहरण - आम्रपाली (2.5×2.5 मी.) में उच्च घनत्व रोपण, आम के साथ अनानास की अंतरफसल, ड्रैगन फल के साथ पपीता की अंतरफसल ।

3. **जैव प्रौद्योगिकी का उपयोग करके फसल की शेल्फ-लाइफ बढ़ाई जाती हैं :** टमाटर और मिर्च जैसी फसलों पर आनुवंशिक रूप से संशोधित (जी. एम.) तकनीक के उपयोग से उनकी शेल्फ लाइफ में काफी वृद्धि हुई हैं। टमाटर, लेट्यूस और मिर्च जैसी फसलों के साथ-साथ एग्रेटम और गुलदाउदी जैसे सजावटी पौधों में देखे गए विल्टिंग वायरस हेतु न्यूक्लियोकैप्सिड प्रोटीन प्रतिरोध के लिए एक जीन का उपयोग शुरू किया गया हैं। आलू वायरस एक्स और पपीता रिंग स्पॉट वायरस हेतु प्रतिरोधी ट्रांसजेनिक पौधे भी विकसित किए गए हैं।

4. **सूक्ष्मप्रवर्धन हेतु ऊतक संवर्धन तकनीक का उपयोग :** सूक्ष्मप्रवर्धन, व्यावसायिक पौध प्रसार में पादप ऊतक संवर्धन के महत्वपूर्ण योगदानों में से एक है तथा इसका बहुत महत्व है। यह तकनीक आनुवंशिक रूप से एक समान रोग-मुक्त पौधों की बड़ी संख्या के उत्पादन के लिए एक तेज़ विश्वसनीय प्रणाली प्रदान करती है। पादप ऊतक संवर्धन की उत्पत्ति पादप कोशिकाओं की टोटिपोटेंसी की क्रांतिकारी अवधारणा से हुई है, जिसे प्रसिद्ध जर्मन पादप शरीर-क्रिया विज्ञान हैबरलैंड ने 1902 में प्रतिपादित किया था। इस तकनीक ने सूक्ष्मप्रवर्धन के माध्यम से फलों और बागानों की फसलों में सुधार, आनुवंशिक विविधता, जर्मप्लाज्म संरक्षण, वायरस उन्मूलन, दैहिक संकरों के विकास और जीन स्थानांतरण हेतु एक बहुत बड़ा क्षेत्र हैं।

फलों और बागानों की फसलों में, जिन्हें सूक्ष्म रूप से प्रचारित करना तुलनात्मक रूप से कठिन हैं, नींबू, सेब, केला, पपीता, अनानास, अंगूर, आडू, बेर, बादाम, अखरोट, स्ट्रॉबेरी, ऑयलपाम और खजूर के लिए नवाचार विकसित किए गए हैं।

5. **पोषक तत्वों का कुशलतापूर्वक उपयोग :** बागवानी फसलों में अधिक उत्पादन के लिए पोषक तत्व प्रबंधन का प्रभावी उपयोग फर्टिगेशन तकनीक द्वारा संभव बनाया गया हैं। उदाहरण के लिए, केले में, उच्च घनत्व रोपण और फर्टिगेशन के संयोजन से अधिक उपज प्राप्त हुई।

हाईटेक बागवानी के लाभ : प्रति इकाई क्षेत्र में उत्पादन में 5-8 गुना तक वृद्धि और उच्च उत्पादकता ।

* पानी (50% तक), उर्वरक (25% तक) और कीटनाशकों सहित आवश्यक इनपुट पर काफी लागत बचत । * पानी (50% तक), उर्वरक (25त्न तक) और कीटनाशकों सहित आवश्यक इनपुट की लागत में महत्वपूर्ण कमी। * उपज वर्ष भर उपलब्ध रहती हैं। * वर्ष भर लाभ होगा। * किसान की आय बढ़ाएँ। * ऊर्जा की खपत में कमी। * प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्र पर प्रभाव कम होगा ।

हाईटेक बागवानी के नुकसान * प्रारंभिक व्यय बहुत अधिक हैं। अर्थात उच्च पूंजी की आवश्यकता। * संचालन के लिए कुशल श्रमिकों की आवश्यकता हैं। * अनुसंधान एवं विकास की आवश्यकता * समय और प्रतिबद्धता की आवश्यकता हैं। * अनुभव और तकनीकी ज्ञान बहुत आवश्यक हैं।

हाई-टेक बागवानी के दृष्टिकोण

एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन (आई. एन. एम.)

आज की हाई-टेक बागवानी में, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन (आई.एन.एम.) भी एक व्यापक रूप से इस्तेमाल की जाने वाली तकनीक हैं। वांछित फसल उत्पादन को संरक्षित करने हेतु, एकीकृत पोषक तत्व प्रबंधन (आई. एन. एम.) मिट्टी की उर्वरता और पौधों के पोषक तत्वों की वितरण को सर्वोत्तम स्तर पर बनाए रखने को संदर्भित करता हैं।

एकीकृत रोग प्रबंधन (आई. डी. एम.): उच्च तकनीक वाली बागवानी में एकीकृत रोग प्रबंधन (आई. डी. एम.) का चलन वर्तमान में बहुत आम हैं। टिकाऊ कृषि और ग्रामीण विकास को प्रोत्साहित करने के लिए आवश्यक तत्वों में से एक बागवानी उत्पादन में एकीकृत कीट प्रबंधन है। एकीकृत कीट प्रबंधन का लक्ष्य सांस्कृतिक, जैविक और रासायनिक तरीकों के उपयोग के माध्यम से कीटों और बीमारियों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करना हैं।

संरक्षित/ग्रीनहाउस खेती : प्रगतिशील बागवानी उत्पादक ग्रीनहाउस या संरक्षित खेती के तरीकों का तेजी से उपयोग कर रहे पारंपरिक उत्पादन विधियों की तुलना में, इस उच्च तकनीक वाली बागवानी तकनीक के कई फायदे हैं, उदाहरण के लिए, फलों, सब्जियों और फूलों सहित बागवानी की वस्तुओं को उनके ऑफ सीजन के दौरान भी संरक्षित खेती के तहत उगाया जा सकता हैं।

ग्रीनहाउस से लाभ * सब्जी फसलों का उत्पादन ग्रीनहाउस के लाभों में से एक हैं। * बेमौसमी सब्जियों और फूलों का उत्पादन। कटे हुए फूलों, गुलाब और कारनेशन आदि का उत्पादन । * पौधों का प्रजनन और पौध देखभाल, ऊतक संवर्धित पौधों की प्राथमिक और द्वितीयक सख्त नर्सरी, औषधीय पौधों, ऑर्किड और असामान्य पौधों की खेती और उत्पादन । भारतीय रिमोट सेंसिंग (आई. आर. एस.) भारतीय रिमोट सेंसिंग उपग्रह डेटा का उपयोग करके आम के बागों के क्षेत्रफल और उत्पादन का अनुमान लगाने के लिए एक अध्ययन शुरू किया गया था। क्षेत्रफल और उत्पादन का अनुमान आई. आर. एस. डेटा का उपयोग करके लगाया गया था। डेटा ने विश्लेषण समय और लागत में लगभग 6-8 गुना बचत करके आम के क्षेत्रफल और बागों की स्थिति का बहुत सटीक अनुमान दिया। यह निष्कर्ष निकाला जा सकता गर्मी के मौसम का उपग्रह डेटा आम के बागों के क्षेत्रफल के बारे में जानकारी प्रदान करता हैं।

ऊर्ध्वाधर बागवानी : ऊर्ध्वाधर बागवानी वह होती हैं जिसमे पौधों को उगाने के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले एक लंबवत लटकने वाले पैनल का उपयोग किया जाता हैं, वह ऊर्ध्वाधर बागवानी कहा जाता हैं। यह शहरी बागवानी के लिए अच्छी तकनीक मानी जाती हैं। इसके के लिए बहुत कम क्षेत्रफल की आवश्यकता होती तथा दीवारों, छतों, पिलर, बालकनी की रेलिंग पर पौधे उगाने जाते एंव ये असामान्य संरचनाएं, जिन्हें लिविंग ग्रीन वॉल, प्लांट वॉल और मॉस वॉल के नाम से भी जाना जाता हैं। ये वर्टिकल प्लांट कंस्ट्रक्शन एक तस्वीर के फ्रेम से लेकर दीवार के आकार की संरचना के आकार में होते हैं। इस तकनीक का मशरूम, पोल्ट्री, हाइड्रोपोनिक चारा, स्ट्रॉबेरी, पत्तेदार सब्जियाँ विशेष रूप से सलाद, जड़ी-बूटियाँ, सजावटी बागवानी और अन्य फसल उत्पादन में क्रमशः अभ्यास किया जा रहा हैं।

फर्टिगेशन : फर्टिगेशन का मतलब होता हैं कि सिचाई जल के साथ उर्वरक का देना, पौधों के बीच अंतराल मिलान करके पानी का उपयोग किया जाता हैं, ताकि पानी का रिसाव न हो। पानी और पोषक तत्वों का सही संयोजन उच्च उपज और उत्पादन की गुणवत्ता की कुंजी है। उर्वरकों के उपयोग में बचत और उपज में वृद्धि का विवरण प्रदान करता हैं। चूंकि फर्टिगेशन के माध्यम से सभी फसलों को समान रूप से पानी और उर्वरक की आपूर्ति की जाती हैं, इसलिए 25-50 प्रतिशत अधिक उपज प्राप्त करने की संभावना इस विधि में, तरल उर्वरकों के साथ-साथ पानी में घुलनशील उर्वरकों का उपयोग किया जाता हैं। इस विधि से उर्वरक उपयोग दक्षता 80-90 प्रतिशत तक बढ़ जाती इस तरह पानी की कम मात्रा और उर्वरक की बचत के साथ-साथ समय, श्रम और ऊर्जा का उपयोग भी काफी कम हो जाता हैं।

सरकारी हस्तक्षेप और नीति ढांचा * उच्च मूल्य वाली कृषि उत्पादन प्रौद्योगिकियों को अपनाने के लिए सब्सिडी सहायता, विशेष रूप से राष्ट्रीय बागवानी मिशन और राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड के अन्य कार्यक्रमों के तहत। * कृषि एवं प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एपीडा)/ समुद्री उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण (एमपीडा) के निर्यात सुविधाकरण और संवर्धनात्मक हस्तक्षेप।

पूर्वी उत्तर प्रदेश में धान की फसल में लगने वाली बीमारियां और कीट: एक विस्तृत अध्यय

दुर्गेश्वर सिंह (परास्नातक छात्र) पादप रोग विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)
डॉ. सौरभ गोविन्द राव (सह-प्राध्यापक) पादप रोग विभाग दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर
डॉ. खुशबू दुबे (सह-प्राध्यापक) पादप रोग विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)
डॉ. रितेश कुमार (सह-प्राध्यापक) कीट विज्ञान विभाग
दीनदयाल उपाध्याय गोरखपुर विश्वविद्यालय, गोरखपुर (उ.प्र.)
डॉ. संजय कुमार (सह-प्राध्यापक) गुरु काशी वि.वि. बठिंडा, (पंजाब)

भूमिका

पूर्वी उत्तर प्रदेश, विशेष रूप से गोरखपुर, वाराणसी, प्रयागराज, और आजमगढ़ जिलों में धान की फसल एक महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र है। यहाँ की जलवायु और मृदा परिस्थितियाँ धान की उन्नति के लिए उपयुक्त हैं, लेकिन इस क्षेत्र में धान की फसल पर कई प्रकार के कीट और बीमारियाँ भी हमला करती हैं, जो फसल की गुणवत्ता और उत्पादन को प्रभावित करती हैं।

इस पत्रिका में हम पूर्वी उत्तर प्रदेश में धान की फसल में लगने वाली प्रमुख बीमारियों और कीटों पर विस्तार से चर्चा करेंगे, साथ ही उनके लक्षण और नियंत्रण उपायों को भी जानेंगे।

ध्यान में रखने योग्य प्रमुख कीट और उनकी पहचान

1. **तना छेदक** (Stem Borer)
विज्ञान नाम: Scirpophaga excerptalis और Scirpophaga excerptalis
लक्षण
* तना छेदक कीट धान के तने में घुसकर अंडे देती है।
* अंडे के बाद नन्हा कीट तने के अंदर विकास करता है, जिससे तना टूटने और फसल का झुकाव हो जाता है।
* पौधा पीला होकर मुरझा जाता है।
नियंत्रण:
* फेरोमोन ट्रैप का प्रयोग करें।
* समय-समय पर कीटनाशकों जैसे - क्लोरोपायरीफॉस या कर्टेप हाइड्रोक्लोराइड का छिड़काव करें।
* अधिक प्रभावित पौधों को उखाड़कर नष्ट करें।

2. **भूरा तेला (Brown Planthopper)**
* **विज्ञान नाम:** Nilaparvata lugens
लक्षण:
* यह कीट धान के पत्तों से रस चूसता है, जिससे पत्तियाँ पीली होकर मुरझा जाती हैं।
* इनकी उपस्थिति से "हॉटी सीन" (हार्वेस्टेड सीन) जैसी स्थिति उत्पन्न हो सकती है, जिसमें पूरे खेत की फसल अचानक सूख जाती है।
नियंत्रण:
* नीम आधारित जैविक कीटनाशक जैसे नीम ऑयल का प्रयोग करें।
* इमिडाक्लोप्रिड या साइपरमेथ्रिन जैसे रासायनिक कीटनाशकों का छिड़काव करें।

3. **पत्ता लपेटक (Leaf Folder)**
विज्ञान नाम: Cnaphalocrocis medinalis
लक्षण:
* यह कीट धान की पत्तियों को लपेटता है और पत्तियों के अंदर से उनका रस चूसता है।
* प्रभावित पत्तियाँ मुरझा जाती हैं और प्रकाश संश्लेषण कम हो जाता है।
नियंत्रण: * कीट प्रभावित पत्तियों को काटकर नष्ट करें।
* ट्राईजोफॉस 40% EC का छिड़काव करें।

4. **गंधक कीट (Stink Bug)**
विज्ञान नाम: Leptoglossus gonagra
लक्षण:
* इस कीट द्वारा प्रभावित दाने काले और सड़े हुए होते हैं। * यह कीट खेत में आने के बाद दानों को चूसता है जिससे उनका आकार और गुणवत्ता प्रभावित होती है।
नियंत्रण: * प्रकाश ट्रैप का उपयोग करें। * क्लोरोपायरीफॉस या मलेथियॉन का छिड़काव करें।

धान की फसल में लगने वाली प्रमुख बीमारियाँ और उनका उपचार

1. **ब्लास्ट रोग** (Blast Disease)
विज्ञान नाम: Pyricularia oryzae
लक्षण:
* पत्तियों पर छोटे, सफेद और भूरे रंग के धब्बे उत्पन्न होते हैं, जो बाद में बढ़कर बड़े हो जाते हैं।
* बाली में भी यह रोग फैलता है और दाने पीले या काले हो जाते हैं।
नियंत्रण: * रोगरोधी किस्मों जैसे पुसा बासमती का प्रयोग करें। * ट्राईसाइक्लाजोल, कार्बेन्डाजिम का छिड़काव करें। * खेतों में जल निकासी व्यवस्था को सही रखें।

2. **भूरी चिट (Brown Spot)**
* **विज्ञान नाम:** Bipolaris oryzae
* **लक्षण:**
* पत्तियों पर भूरे रंग के गोल धब्बे दिखते हैं।
* धब्बे बढ़कर पूरे पत्ते को कवर कर लेते हैं।
नियंत्रण:
* बीजों को थायरम से उपचारित करें।
* कार्बेन्डाजिम या डाइथेन-एम-45 का छिड़काव करें।
* खेत में संतुलित उर्वरक का प्रयोग करें।

3. **शीथ ब्लाइट (Sheath Blight)**
विज्ञान नाम: Rhizoctonia solani
लक्षण: * पत्तियों के नीचे का हिस्सा सफेद या हल्के भूरे रंग का हो जाता है। * प्रभावित पत्तियाँ मुरझा जाती हैं और तने की तरफ फैलती हैं।
नियंत्रण: * बायोफंगस जैसे ट्राइकोडर्मा का प्रयोग करें।
* हेक्साकोनाजोल या वॉलिडामायसिन का छिड़काव करें।

4. **बैक्टीरियल लीफ ब्लाइट (BLB)**
* विज्ञान नाम: Xanthomonas oryzae
लक्षण: * पत्तियों के किनारे से सूखना शुरू होता है, जो बाद में पूरे पत्ते को प्रभावित करता है।
नियंत्रण: * रोगरोधी किस्मों का चयन करें। * कॉपर सल्फेट या ब्लाइटॉक्स का उपयोग करें।

समेकित कीट एवं रोग प्रबंधन

1.रोगरोधी किस्में का चयन: क्षेत्रीय परिस्थितियों के अनुसार रोगरोधी और कीट प्रतिरोधी किस्मों का चयन करें जैसे पुसा बासमती, पुसा 1121, आदि।

2.संवेदनशीलता का निरीक्षण: खेतों में समय-समय पर कीटों और बीमारियों का निरीक्षण करें। जिससे समय रहते उचित उपाय किए जा सकें।

3.जल निकासी: जल जमाव न होने दें। फसल में उचित जल निकासी की व्यवस्था करें ताकि जलजनित रोगों से बचाव हो सके।

4.संतुलित उर्वरक का प्रयोग: उर्वरकों का सही अनुपात में प्रयोग करें। अधिक नाइट्रोजन का प्रयोग बीमारी के प्रकोप को बढ़ा सकता है।

5.जैविक नियंत्रण: जैविक कीटनाशकों और फफूंदनाशकों का प्रयोग करें। उदाहरण के लिए, नीम के तेल, बैसिलस थुरिंजियेंसिस आदि।

निष्कर्ष: पूर्वी उत्तर प्रदेश में धान की फसल की समृद्धि के लिए कीटों और बीमारियों का नियंत्रण महत्वपूर्ण है। यदि किसानों को इनके लक्षण और नियंत्रण उपायों का सही ज्ञान हो, तो वे अपनी फसल को अधिक सुरक्षित और लाभकारी बना सकते हैं। समेकित कीट और रोग प्रबंधन (IPM) के माध्यम से किसान अपने उत्पादन को बढ़ा सकते हैं, और पर्यावरण के प्रति भी संवेदनशील रह सकते हैं।

इस पत्रिका का उद्देश्य किसानों को स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप उपयुक्त जानकारी प्रदान करना है, ताकि वे अपने खेतों में धान की सही देखभाल कर सकें।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

लागत कम मुनाफा अधिक, मक्के की बुवाई कर किसान कमा सकते हैं अच्छा मुनाफा

अंकित शर्मा (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखण्ड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

अरुन झा (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी (उ.प्र.)

कुलदीप कुमार विश्वकर्मा (जे.आर.एफ.) फसल अनुसंधान केन्द्र, मसौधा अयोध्या (उ.प्र.)

परिचय

मक्का एक प्रमुख खाद्य फसल है जो मोटे अनाजों की श्रेणी में आते हैं इसे भुट्टे की शक्ल में भी खाया जाता है इसे सभी प्रकार की मिट्टी में उगाया जाता है मक्का खरीफ ऋतु की फसल है परंतु जहां सिंचाई के साधन हैं वहां रवि और खरीफ की अगेती फसल के रूप में ली जा सकती है मक्का लगभग 65 प्रतिशत उपयोग मुर्गी एवं पशु आहार के रूप में किया जाता है साथ ही साथ इस पौष्टिक के रुचिकर चारा प्राप्त होता है भुट्टे काटने के बाद भी बची हुई फसल पशुओं को चारे के रूप में खिलाते हैं

जलवायु एवं भूमि

मक्का उष्ण एवं आद्र जलवायु की फसल है इसके लिए ऐसी भूमि जहां पानी का अच्छा निकास हो

खेत की तैयारी

खेत की तैयारी के लिए खेत को अच्छे से जुताई कर देनी चाहिए तथा खेत को समतल कर देने के बाद गोबर की खाद का प्रयोग कर रहे हैं तो पूर्ण रूप से सड़ी हुई खाद का ही प्रयोग करें जुताई के समय इस पूर्ण रूप से खाद को जमीन में मिला दें जिससे कीड़े लगने की संभावना कम रहती है

बुवाई का समय

जून से जुलाई

मक्के की प्रमुख किस्म

गंगा 5 यह 100 से 105 दिन में तैयार हो जाती

है इसकी उत्पादन 50 से 80 क्विंटल प्रति हेक्टेयर पैदावार होती है।

गंगा सफेद 2 यह 105 से 110 दिन में तैयार तैयार हो जाती है इसका उत्पादन 50 से 55 कुंतल प्रति हेक्टेयर होता है।

गंगा 11 यह 100 105 दिन में पक कर तैयार हो जाती है इसका उत्पादन 60 से 70 कुंतल प्रति हेक्टेयर होता है

बीज की मात्रा

- संकर जातियों के लिए 12 से 15 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर
- चारे के लिए 40 से 45 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर बीज की आवश्यकता होती हैं

बीज उपचार

बीज बोने से पूर्व किसी फफूंद नाशक दवा जैसे थायरम या एग्रोसेन, जीएन 2.5 ग्राम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करके बोना चाहिए

पौध अंतरण

शीघ्र पकने वाली फसल कतार से कतार की दूरी 60 सेमी और पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी होनी चाहिए। हरे चारे के लिए कतार से कतार की दूरी 40 सेमी और पौधे से पौधे की दूरी 25 सेमी होना आवश्यक है

बुवाई का तरीका

वर्षा प्रारंभ होने पर मक्के की बुवाई कर दें अगर सिंचाई का साधन हो तो 10 से 15 दिन पूर्व ही बुवाई कर देनी चाहिए इससे पैदावार में वृद्धि होती है और मक्के की फसल पैदा होने पर अच्छा मुनाफा देती है

खाद एवं उर्वरक की मात्रा

शीघ्र पकने वाली फसल में
80:50:30 एनपीके की उचित मात्रा दी जाती है

10,सिंचाई

मक्के को पूरे फसल की अवधि में लगभग 400 से 600 मिमी पानी की आवश्यकता होती है इसमें महत्वपूर्ण सिंचाई पुष्पन एवं दान भरते समय करते हैं

कीट एवं उपचार

दीमक

इनका प्रकोप बहुत ही लगता है सिंचाई के पानी के साथ-साथ क्लोरपाइरीफास 20 फीसदी ईसी2.5 लीटर प्रति हेक्टेयर कि दर से प्रयोग करें

सूत्रकृमि

रासायनिक नियंत्रण के लिए बुवाई से एक सप्ताह पूर्व खेत में 10 किलोग्राम फोलेट 10 ग्राम फैला कर मिला दें।

कटाई

संकर एवं संकुल जातियां बोने से 90 से 115 दिन पूर्ण होने पर तथा दाने में लगभग 25 प्रतिशत तक नमी होने पर कटाई कर देनी चाहिए

कृषि विश्वविद्यालयों की सूची में सीएसए को देश में चौथा और प्रदेश में पहला स्थान

कानपुर। राज्यों के आधार पर जारी आईआईआरएफ रैंकिंग 2025 में चंद्रशेखर आजाद कृषि एवं प्रौद्योगिकी विवि (सीएसए) को कृषि विश्वविद्यालयों की सूची में देश में चौथा और प्रदेश में पहला स्थान मिला है। रैंकिंग में देश के सभी राज्य विश्वविद्यालय को शामिल किया गया है। प्रदेश के कृषि विवि की सूची में सीएसए विवि 929.44 स्कोर के साथ टॉप पर हैं। वहीं, प्रदेश के अन्य कृषि विवि में सरदार वल्लभ भाई पटेल कृषि एवं प्रौद्योगिकी विवि मेरठ को देश में 22वां, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय अयोध्या को 38वां स्थान मिला है। कुलपति डॉ. आनंद कुमार सिंह ने इसे बड़ी उपलब्धि बताते हुए सबके प्रयास का फल बताया। उन्होंने कहा कि सीएसए के वैज्ञानिक जलवायु परिवर्तन को देखते हुए अधिक उत्पादन के लिए अनुसंधान कर रहे हैं। वैज्ञानिकों ने गेहूं, तिलहन की कई नई प्रजातियां भी विकसित की हैं, जो जलवायु परिवर्तन और विभिन्न कीट व बीमारियों से भी सुरक्षित रहती है।

खरीफ के मौसम की सबसे उपयोगी फसल मूंगफली

आशुतोष (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

अरुन झा (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ. मनीष कुमार (सहायक प्राध्यापक) बीज प्रौद्योगिकी विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

मूंगफली भारत की एक प्रमुख तिलहन फसल है जो की तेल एवं निर्यात के लिए सर्वाधिक उगाई जाती है एवं यह गरीब लोगों का बादाम भी कही जाती है।

मूंगफली की खेती

भूमि का चयन

मूंगफली के लिए हल्की रेतीली मिट्टी सबसे उपयुक्त मानी जाती है भूमि का पीएच 6 से लेकर 7.5 के बीच होना चाहिए और जल निकासी की अच्छी व्यवस्था आवश्यक है और लाल रेतीली मिट्टी में न बोया जाए।

मूंगफली की कुछ उच्चतम किस्में

- **बीएयू 13**–यह किस्में सूखा सहनशील एवं अच्छी उपज देने वाली किस्म है और यह 100 से 110 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है यह आसमान बारिश वाले क्षेत्र हेतु अति उत्तम किस्म है।
- **जीजी 2**– यह किसी कम समय में पकने वाली तथा बीमारियों के लिए प्रतिरोधी किस्म है यह किस्म 90 से 100 दिनों मैं ही पककर तैयार हो जाती है।
- **आईसीजीएस 44** – सूखा प्रभावित क्षेत्र अथवा जहां बारिश कम होती है उन क्षेत्रों के लिए बहुत उत्तम किस्म है इसके दाने की गुणवत्ता बहुत अच्छी होती है तथा यह 100 से 115 दिनों में पककर तैयार हो जाती है।
- **कृष्णा** – यह किस्म बहुत अच्छी किस्म है इसके दानों में तेल प्रतिशत बहुत अधिक होता है तथा यह स्वस्थ क्षेत्र के लिए बहुत उपयोगी किस्म है इसमें 110 से लेकर 120 दिनों में तैयार हो जाती है तथा मध्य भारत के क्षेत्र के लिए बहुत उत्तम किस्म है।
- **बीज की मात्रा**– 1 हेक्टेयर में हमें 80 से 100 किलोग्राम बीज की आवश्यकता होती है इसमें हम कतार से कतार की दूरी 30 से 45 सेंटीमीटर तथा पौधे से पौधे की दूरी 10 से 15 सेंटीमीटर तक रख सकते हैं।

मूंगफली के रोग एवं उनकी रोकथाम

- ***लीफ स्पॉट***– इस रोग में पत्तों पर भूरे काले गोल धब्बे आ जाते हैं किस कारण से पत्तियां समय से पहले गिर जाती है।

इसके रोकथाम के लिए हमें स्वस्थ बीज का उपयोग करना चाहिए तथा एक किलोग्राम बीज को टायरों प्लस कार्बन डाइऑक्साइड दो अनुपात एक मिश्रण से उपचारित कर के ही से खेत में लगाना चाहिए

- **एंथ्रेक्नोज**–इस रोग के कारण मूंगफली के पौधे पर तनो एवं सिखों पर काले धब्बे बन जाते हैं वह दिखाई देने लगते हैं जिससे पौधा सूखकर गिर जाता है इस रोग की रोकथाम के लिए हमें स्वस्थ बीज का उपयोग करना चाहिए एवं रोग देखने पर कार्बेडाजिम 0.1 प्रतिशत का उपयोग करना चाहिए।
- **शिराओं का मोजैक वायरस** – इस रोग के होने से मूंगफली के पौधों की पत्तियां में पीली धारियां दिखने लगती हैं तथा नई पत्तियां मुड़ने लगती हैं इस रोग के होने पर रोग ग्रस्त पौधों को तुरंत उखाड़ कर नष्ट कर देना चाहिए

खरीफ मौसम में मूंगफली की खेती के फायदे

- **वर्षा आधारित खेती** – खरीफ मौसम में सामान्यतः पर्याप्त वर्षा होती है जिस वजह से हमें सिंचाई की आवश्यकता बहुत कम होती है क्योंकि इस फसल को नमी की जरूरत बारिश से पूरी हो जाती है इसलिए खरीफ सीजन इसके लिए सबसे उपयुक्त है।
- **भूमि की उर्वरता में वृद्धि** – मूंगफली एक दलहनी फसल है इसकी जड़ों में राईजोवियम के जीवाणु नाइट्रोजन स्थिरीकरण करते हैं जिससे मिट्टी की उर्वरता बढ़ती है इससे अगली फसल को भी लाभ होता है।
- **कम लागत एवं बेहतर लाभ** – खरीफ मूंगफली में सिंचाई उर्वरक और अन्य लागत कम होती है साथ ही खरीफ के मौसम में तेल निकालने तथा इसकी पत्तियों को चारे के रूप में बेचकर किसानों को दोगुना लाभ मिल सकता है।
- **अनुकूल तापमान एवं जलवायु** – खरीफ मौसम का तापमान 25 से 30 डिग्री सेल्सियस होता है जो मूंगफली के अंकुरण एवं बढ़वार के लिए आदर्श होता है नमी और गर्मी का संतुलन अच्छे दोनों का निर्माण करता है इसलिए खरीफ का मौसम मूंगफली के लिए सर्वोत्तम होता है।
- **तेल उत्पादन और पशु चारे का स्त्रोत** – मूंगफली के बीज से तेल निकाला जाता है जो उसकी आय का बड़ा साधन है साथ ही इसकी पत्तियां भूसी और बचे हुए उत्पादन से पशुओं के लिए उत्तम चारा बनाया जा सकता है जो कि जानवरों के लिए उत्तम होता है।

मूंगफली के उपयोग

- मूंगफली एक ऐसी फसल है जो की मंडी में एक अच्छे दाम पर बेची जाती है।
- मूंगफली से तेल निकाला जाता है जो की खाने के लिए उपयोग में लाया जाता है।
- इसके बीज और दाने सीधे खाने योग्य होते हैं जो भूनकर या सेक कर खा जाते हैं।
- मूंगफली के दानों से कई खाद्य पदार्थ बनाए जाते हैं जैसे की चिक्की गजक इत्यादि।
- मूंगफली के खली का उपयोग करके हम मवेशियों के आहार में बढ़ोतरी कर सकते हैं तथा यह उनके लिए बहुत अच्छा साधन होता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
उत्तर प्रदेश

कम वर्षा वाले क्षेत्रों में बाजरे की फसल किसानों के लिए अधिक उपयोगी

अरुन झा (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

इल्मा इस्लाम (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ. अनुराग दुबे (सहायक प्राध्यापक) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

बाजरा, जिसे पर्ल बाजरा भी कहा जाता है, एक महत्वपूर्ण अनाज है जो भारत और अफ्रीका में पाया जाता है। यह एक पौष्टिक अनाज है, जो प्रोटीन, फाइबर, और खनिजों से भरपूर होता है। बाजरा ग्लूटेन-मुक्त होता है और इसका ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है, जिससे यह मधुमेह और सीलिएक रोग वाले लोगों के लिए एक अच्छा विकल्प है। बाजरा, छोटे बीज वाले अनाजों का एक समूह है जो उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। यह एक सूखा-सहिष्णु फसल है, जो कम पानी और कम उर्वरक के साथ उगाई जा सकती है। भारत में, बाजरा खरीफ (मानसून) के मौसम में उगाया जाता है, और यह राजस्थान, गुजरात, उत्तर प्रदेश, और महाराष्ट्र जैसे राज्यों में एक महत्वपूर्ण फसल है। बाजरा कई तरह से खाया जाता है, जैसे कि रोटी, दलिया, खिचड़ी, और लड्डू। यह जानवरों के चारे के रूप में भी इस्तेमाल होता है।

बाजरा में पाए जाने वाले पोषक तत्व: बाजरा एक पोषक तत्वों से भरपूर अनाज है जिसमें उच्च मात्रा में फाइबर, प्रोटीन, और एंटीऑक्सीडेंट होते हैं। यह आयरन, फास्फोरस, विटामिन ए और बी, और पोटेशियम का भी एक अच्छा स्रोत है।

बाजरे की खेती के मुख्य फायदे

कम लागत: बाजरे की खेती में पानी और उर्वरकों की कम आवश्यकता होती है, जिससे लागत कम होती है।

अधिक पैदावार: बाजरा कम समय में अच्छी पैदावार देने वाली फसल है।

सूखा प्रतिरोधी: बाजरा सूखे को सहन कर सकता है, जिससे यह सूखाग्रस्त क्षेत्रों के लिए एक उपयुक्त फसल है।

पशुधन के लिए चारा: बाजरे का चारा पौष्टिक होता है और पशुधन के लिए एक अच्छा विकल्प है।

दोहरा लाभ: बाजरे की खेती से अनाज और चारा दोनों प्राप्त होते हैं।

बाजार में मांग: बाजरे की बाजार में अच्छी मांग है, जिससे किसानों को अच्छी आय प्राप्त होती है।

स्वास्थ्य लाभ: बाजरा पोषक तत्वों से भरपूर होता है और स्वास्थ्य के लिए भी फायदेमंद है।

पर्यावरण के अनुकूल: बाजरे की खेती में कम पानी और उर्वरकों का उपयोग होता है, जिससे पर्यावरण पर कम प्रभाव पड़ता है।

बाजरा के कुछ मुख्य स्वास्थ्य लाभ हैं:

पाचन में सुधार: बाजरा में फाइबर की मात्रा अधिक होती है, जो पाचन क्रिया को बेहतर बनाने में मदद करती है।

मधुमेह को नियंत्रित करने में मदद: बाजरा का ग्लाइसेमिक इंडेक्स कम होता है, जिससे यह मधुमेह रोगियों के लिए एक अच्छा विकल्प है।

वजन घटाने में सहायक: बाजरा में फाइबर और प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है, जो आपको पेट भरा हुआ महसूस कराता है और वजन घटाने में मदद करता है।

हृदय स्वास्थ्य के लिए अच्छा: बाजरा में मौजूद पोषक तत्व हृदय स्वास्थ्य को बेहतर बनाने में मदद करते हैं।

कैंसर से बचाव: कुछ अध्ययनों से पता चलता है कि बाजरा में मौजूद एंटीऑक्सिडेंट कैंसर से बचाव में मदद कर सकते हैं।

बाजरा की खेती के लिए प्रमुख उन्नत तकनीके

उपयुक्त मिट्टी और जलवायु: बाजरा हल्की या दोमट बलुई मिट्टी में अच्छी तरह उगता है, जिसमें जल निकास उत्तम हो। यह फसल गर्म जलवायु के लिए उपयुक्त है और 40-75 सेंमी वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में उगाई जा सकती है। बाजरा सूखा सहने की अद्भुत क्षमता रखता है

खेत की तैयारी: गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए. बुवाई से पहले 20-25 टन सड़ी हुई गोबर की खाद प्रति हे. खेत में डालें. 2-3 बार हैरो चलाकर खेत को समतल करें.

बुवाई: पंक्तियों में 25 सेंटीमीटर की दूरी रखें और बीज को डेढ़ से 2 सेंटीमीटर की गहराई पर बोएं। प्रति हेक्टेयर 6 से 8 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है। बीज को थायराम से तीन ग्राम प्रति किलोग्राम बीज से उपचारित करे

उपयुक्त समय: खरीफ मौसम (जून-अक्टूबर) में, खासकर जुलाई के पहले पखवाड़े में बाजरे की बुवाई करना उपयुक्त होता है.

सिंचाई: बाजरे की फसल को 3-4 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है, खासकर दाना बनते समय खेत में नमी होनी चाहिए. परंतु मानसून सीजन में बाजरे की फसल को सिंचाई की कोई आवश्यकता नहीं होती है

उर्वरक: बाजरे की फसल हेतु 80-90 किलो नाइट्रोजन, 50 किलो फास्फोरस और 50 किलो पोटाश की आवश्यकता होती है। आधी नाइट्रोजन और पूरी फास्फोरस और पोटाश की मात्रा बुवाई के समय 3-4 सेमी की गहराई पर डालें। बची हुई नाइट्रोजन को अंकुरण के 4-5 सप्ताह बाद खेत में बिखेरकर मिट्टी में मिलाए

खरपतवार नियंत्रण: बाजरा की खेती में खरपतवार नियंत्रण के लिए, बुवाई के तुरंत बाद एट्राजिन 50 डब्ल्यूपी / 400-800 ग्राम प्रति एकड़ 200-250 लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करना चाहिए। इसके अलावा, निराई-गुड़ाई करके भी खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है

बाजरा की खेती के लिए उन्नत किस्म

राज 171: यह किस्म 85 दिनों में पक जाती है, पौधों की ऊंचाई 170 से 200 सेंटीमीटर होती है, और दानों का रंग हल्का पीला होता है. प्रति एकड़ 8 से 10 क्विंटल दाने और 18-19 क्विंटल चारा पैदावार होती है.

पूसा 322: यह किस्म 75 से 80 दिनों में पक जाती है, पौधों की ऊंचाई 150 से 210 सेंटीमीटर होती है. प्रति एकड़ 10 से 12 क्विं. दाने और 16 से 20 क्विं. चारा पैदावार होती है.

जीएचबी 732: यह किस्म 81 दिनों में पक जाती है, और इसके दाने मोटे होते हैं. प्रति एकड़ 12 क्विंटल दाने और 31 क्विंटल चारा पैदावार होती है.

पूसा 23 (एम. एच 169): यह किस्म 80 से 85 दिनों में पक जाती है, और इसकी ऊंचाई लगभग 165 सेंटीमीटर होती है. प्रति एकड़ 8 से 12 क्विंटल दाने पैदावार होती है.

बाजरे के खेत में लगने वाले प्रमुख रोग एवं कीट

रोग:

हरित बाल रोग (ग्रीन ईयर या जोगिया): इस रोग में बालियां हरी और विकृत हो जाती हैं, जिससे दाने नहीं बनते।, यह रोग बाजरा की उपज को बहुत प्रभावित करता है।

ब्लास्ट: पत्तियों और तनों पर भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं, जो बाद में बढ़कर बड़े धब्बे बन जाते हैं।

कंडुआ: इस रोग में बीज का आकार बड़ा और अंडाकार हो जाता है।

एर्गोट: इस रोग में बालियों पर शहद जैसी बूंदें निकलती हैं, जो बाद में भूरे रंग के चिपचिपे पदार्थ में बदल जाती हैं। ।बबवतकपदह जव ॅपापचमकपं, यह रोग दानों की गुणवत्ता को भी कम करता है।

कीट:

सफेद लट: यह कीट जड़ों को खाकर पौधों को नष्ट कर देता है, जिससे फसल सूख जाती है।, यह बाजरा की फसल को काफी नुकसान पहुंचाता है।

प्रोह मक्खी: यह मक्खी पौधों के तने में छेद करके उन्हें नुकसान पहुंचाती है।

तना छेदक: यह कीट भी तने में छेद करके पौधों को नुकसान पहुंचाता है।

रोकथाम: रोगरोधी किस्मों का प्रयोग करें। फसल चक्र का पालन करें। खेतों में साफ-सफाई रखें। कीटनाशकों और कवकनाशकों का उपयोग करें। रोगग्रस्त पौधों को नष्ट कर दें। समय-समय पर खेतों का निरीक्षण करें और यदि कोई समस्या दिखाई दे तो तुरंत उपाय करें।

कटाई: जब पौधों की पत्तियां पीली हो जाएं और दाने गहरे काले रंग के हो जाएं, तो फसल पक जाती है. भूटों में दानों की नमी 20 प्रतिशत रह जाने पर कटाई करें

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

कद्दूवर्गीय फसलों मे फल मक्खी का जीवनचक्र एवं नियंत्रण हेतु ट्रैप एंड किल पद्धति और विकर्षक आधारित सतत रणनीतियां

अंकित सिंह पीएचडी (शोध छात्र),कीट विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा (उ.प्र.)

डॉ. प्रदीप कुमार कीट विज्ञान विभाग, बुंदेलखंड विश्वविद्यालय, झांसी-284001, (उ.प्र.)

राजू कुमार पीएचडी (शोध छात्र)-कीट विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक वि.वि. बांदा

बलवंत यादव पीएचडी (शोध छात्र)- कीट विज्ञान विभाग, बांदा कृषि एवं प्रौद्योगिक विश्वविद्यालय, बांदा-210001, उ.प्र. (भारत)

संक्षेप परिचय पर एक नजर: भारत मे फल मक्खी की 200 प्रजातियाँ पाई जाती हैं लेकिन उनमें से कुकुरबिटेसी कुल की सब्जियों को मिलोन फल मक्खी की कुछ ही प्रजातियाँ क्षति पहुचाती हैं। भारत में कुल सब्जी उत्पादन का लगभग 5.6ब क्षेत्रफल पर खेती उपरांत उत्पादकता केवल 10 टन/ हेक्टेयर के आसपास है। ये कीट फलों में अंडे देकर लार्वा उत्पन्न करती है, जिससे फल सड़ने लगते हैं और बाजार मूल्य घट जाता है। परंपरागत रासायनिक कीटनाशकों से इस कीट का अस्थायी नियंत्रण तो संभव है, परंतु इसके अधिक प्रयोग से प्रतिरोधकता, पर्यावरण प्रदूषण और अवशेष समस्या उत्पन्न हो जाती है। आजकल अंधाधुंध रासायनिक कीटनाशकों के छिड़काव के साथ ही अविवेकपूर्ण और अतार्किक उपयोग के परिणामस्वरूप पर्यावरण समेत स्वास्थ्य का भी खतरा दिन ब दिन बढ़ता ही जा रहा है। इस अमूल्य और नाजुक पर्यावरण की रक्षा करने की आवश्यकता सभी किसानजनों को हैं और इन्हे जागरूक होने की आवश्यकता है, इसके लिए चाहिए की शोध संस्थानों के वैज्ञानिकों द्वारा निरंतर प्रशिक्षण की पहल होती रहे।

कद्दू वर्गीय नाशीकीट फल मक्खियों की प्रजातियां: कद्दू वर्गीय सब्जियों मे तीन प्रमुख प्रजातियाँ जो डिप्टेरा गण के कुल टेफरटिडी के अंतर्गत आती है , जिनके नाम निम्नवत हैं- बैक्टरोसेरा/जुगोडेकस (कोकीलेट) जीनस के अंतर्गत जूगोडेक्स कुकुरबिटी, डोरसॉलिस, जोनाटा । जिनमें से कद्दू वर्गीय सब्जियों मे जूगोडेक्स कुकुरबिटी से सबसे अधिक नुकसान होता है।

पोषक पौधे- कद्दू वर्गीय सब्जियों के अलावा गोभी, टमाटर, मिर्च, अमरूद, नींबू, नाशपाती, अंजीर इसके द्वितीयक पौधे हैं।

मिलोन मक्खी

पहचान- इसका वयस्क लालिमायुक्त भूरा (रेडिश ब्राउन) रंग का दिखता है। जिसके वक्ष हिस्से पर नींबू रूपी पीलापन लिए हुए पंखों पर कामा जैसा जिन्ह प्रदर्शित होता है, इसकी मादाओं का पश्च भाग नुकीला होता है जबकि नर में ऐसा नहीं होता है। इसके लार्वा को मैगट के नाम से जाना जाता है, जो कि पल्प भाग मे स्पष्ट रूप से सिर-पैर विहीन (अपोडस) मटमैले स्वेत रंग का एवं 9 से 10 मिमी. लंबा और मध्य से 2 मिमी. चौड़ा गोचर/परिलक्षित होता है। यह मिट्टी मे लगभग 2.5 से 5 सेंमी. के गहराई मे प्युपेट करते हैं।

क्षति का प्रकार-

फल मक्खी या मिलोन मक्खी का प्रकोप वर्ष भर रहता है। मादा फल मक्खी कद्दू वर्गीय फसलों के मुलायम फलों के मध्य फल भित्ति में शाम के समय अपने अंडरोप से बारीक गुहा बनाकर फलो के अंदर अकाल या गुच्छों में अंडे देकर चिपचिपे तरल सीमेंट अवयव से ढक देती है। अंडों का आकार सिगार की तरह एवं रंग स्वेत (सफेद) होता है। नवजात मैगट फलों के गूदे में छेद कर प्रवेश करते हैं व टेड़ी-मेड़ी गॅलरी बनाकर फल के गूदे को अंदर से खा जाते हैं और उन्हे अपने कीटमल से प्रदूषित कर देते हैं तथा मृतोपजीवी कवक और जीवाणुवो के अंदर प्रवेश करने हेतु रास्ता बना देतीं हैं। जिस कारणवश फल सड़ जातें हैं व खोखले होकर परिपक्व होने से पहले ही गिर जाते हैं।

यह एक गंभीर कीट है जिसके कारण फसल मे 80ब तक का नुकसान देखा गया है। अधिकतम नुकसान जुलाई - अगस्त के दौरान होता है।

जीवन चक्र

अंडा अवस्था * मादा मक्खी फल की ऊपरी सतह के ठीक नीचे अंडे देती है। * एक मादा लगभग 100-200 अंडे अपने जीवनकाल में देती है। * अंडे सफेद व बेलनाकार होते हैं। * अंडों से 1-2 दिन में लार्वा निकल आता है।

लार्वा अवस्था * अंडे से निकला लार्वा (मैगॉट) फलों के अंदर घुसकर गूदा खाता है। * इससे फल सड़ने लगता है और समय से पहले गिर जाता है। * यह अवस्था लगभग 5-9 दिन तक चलती है। *लार्वा सफेद, पैर रहित होता है।

प्यूपा अवस्था * इनका परिपक्व लार्वा फल से बाहर निकल करके मिट्टी में जाकर प्यूपा के रूप मे बदल जाता है।
* प्यूपा का रंग लगभग मृदु भहोरे रंग का होता है ।
* फल मक्खी प्यूपा अवस्था में लगभग 7-10 दिन रहती है।
* इसके उपरांत प्यूपा से व्यस्क मक्खी निकलती है।

प्रौढ़ अवस्था * वयस्क मक्खी का रंग पीला-भूरा होता है, आँखें लाल होती हैं, और पंखों पर भूरी धारियाँ होती हैं। * नर मक्खियाँ फेरेमोन ट्रैप से आकर्षित होती हैं। * मादा व्यस्क 1 हफ्ते में प्रजनन योग्य हो जाती है। * व्यस्क मक्खी का जीवनकाल 1-2 माह तक हो सकता है।

नियंत्रण के उपाय

परंपरागत उपाय * फलों की बैगिंग करना। * मिट्टी का सोलेनाईजेशन करना। * कुकुरबिट्स फलों की तुड़ाई के पश्चात गहरी जुताई कर देनी चाहिए जिससे की सारे प्यूपा नष्ट हो जाए । *फल मक्खी के प्यूपा व परजीवियों को धूप मे लाने हेतु मिट्टी को समतल कर देना चाहिए । * संक्रमित फलों को नियमित रूप से तोड़कर हटा देना चाहिए ।

भौतिक अथवा यांत्रिक उपाय

ट्रैप एंड किल तकनीक- इस तकनीकी में फल मक्खियों को अपनी तरफ आकर्षित करने के लिए एक विशेष प्रकार का जाल बनाया जाता है, जिसमे एक आकर्षक पदार्थ जैसे की फेरोमोन या खाद्य पदार्थ मिलाया जाता है । जैसे ही फल मक्खी जाल के संपर्क मे आती है, तो वह वह कीटनाशक या चिपचिपे पदार्थ के संपर्क मे आने के कारणवश मर जाती है ।

ट्रैप एंड किल तकनीक के लिए आवश्यक सामग्री- * फल मक्खी के लिए आकर्षक पदार्थ (फेरोमोन या खाद्य पदार्थ) * जाल या ट्रैप * कीटनाशक या चिपचिपे पदार्थ * एक पात्र या बर्तन जिसमें जाल रखा जा सके

ट्रैप एंड किल तकनीक हेतु चरण-दर-चरण निर्देश

* **जाल बनाना:** एक पात्र या बर्तन में आकर्षक पदार्थ और कीटनाशक या चिपचिपे पदार्थ मिलाते हैं।
* **जाल रखना:** जाल को खेत में रख देते हैं , जहां फल मक्खी अधिक सक्रिय होती है ।
* **जाल की देखभाल:** जाल की नियमित रूप से देखभाल करें और आवश्यकतानुसार आकर्षक पदार्थ और कीटनाशक या चिपचिपे पदार्थ को बदलते रहते हैं ।
* **फल मक्खी की निगरानी:** निरंतर फल मक्खी की निगरानी करते रहना चाहिए और जाल की प्रभावशीलता का मूल्यांकन करते रहना चाहिए ।

प्रमुख ट्रैप्स:

1.क्यूल्यूर ट्रैप: * यह केवल नर मक्खियों को आकर्षित करता है। * यह फेरोमोन आधारित होता है। * ट्रैप में कीटनाशक (जैसे डाइक्लोरवॉस) मिलाकर मक्खियों को मारा जाता है। * प्रति एकड़ 10-12 ट्रैप लगाना उचित रहता है।

2.मैग्नेट ट्रैप/मिथाइल यूजेनॉल ट्रैप: * मिथाइल यूजेनॉल एक आकर्षक पदार्थ है, नर मक्खियों को आकर्षित करता है।

3.गुर ट्रैप (Sticky Trap): * फलों के पास पीले रंग की चिपचिपी सतह पर फल मक्खियाँ आकर्षित होकर फँस जाती हैं।

जैविक उपाय-

* ट्राइकोडर्मा के सुक्षम स्ट्रेन से 10 ग्राम प्रति किलोग्राम कि दर से बीजोपचार करना चाहिए । * सूत्रकृमि प्रबंधन के लिए नीम खली का 250 ग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। * 5% नीम अर्क या 1500 ppm नीम तेल का छिड़काव करना चाहिए ।

विकर्षक आधारित अन्य सतत रणनीतियां-

फल मक्खियों को फसल से दूर रखने हेतु कुछ प्राकृतिक और टिकाऊ उपाय:

काला प्लास्टिक मल्चिंग * मादा मक्खी अंडे जमीन के करीब देती है, काला मल्च ताप बढ़ाकर प्यूपा को नष्ट कर देता है।

किसान मित्र फसलें (Trap Crops): * जैसे कि तोरई को मुख्य फसल के किनारे उगाते हैं, जिससे कि फल मक्खियाँ आकर्षित होकर वहीं रुक जाती हैं ।

मशरूम/गोबर/गुड़ में फेरोमोन मिलाकर उपयोग: * इसके साथ विकर्षक पदार्थ मिलाकर उपयोग करने से फँसाने का असर बढ़ता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

वृक्ष बागवानी का अतीत, वर्तमान और भविष्य में किसानों हेतु हितकारी प्रभाव: एक वृक्षायुर्वेदीय अध्ययन

खेताराम सहायक आचार्य (वृक्षायुर्वेद) वृक्षायुर्वेद विभाग राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर (राजस्थान) मानद विश्वविद्यालय (डी नोवो) आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

डॉ. तरुण शर्मा सहायक आचार्य वृक्षायुर्वेद विभाग राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर मानद विश्वविद्यालय (डी नोवो) आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

डॉ. सुमित कुमार नथानी सह आचार्य एवं विभागाध्यक्ष वृक्षायुर्वेद विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर मानद विश्वविद्यालय (डी नोवो) आयुष मंत्रालय, भारत सरकार

सारांश (Abstract)

वृक्ष बागवानी भारतीय कृषि परंपरा का अभिन्न अंग रही है। वर्तमान में जब आधुनिक कृषि प्रणाली पर्यावरणीय असंतुलन, मृदा ह्रास एवं आर्थिक संकट को जन्म दे रही है, तब वृक्षायुर्वेदीय आधारित वृक्ष बागवानी एक स्थायी समाधान के रूप में उभर रही है। यह अध्ययन वृक्ष बागवानी के ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, वर्तमान प्रभाव और भविष्य की संभावनाओं का मूल्यांकन वृक्षायुर्वेदीय दृष्टिकोण से करता है। निष्कर्षतः यह पद्धति पर्यावरणीय संतुलन, किसानों की आय में वृद्धि और औषधीय पौधों की उपलब्धता में सहायक सिद्ध हो सकती है।

1. भूमिका (Introduction)

भारत की कृषि परंपरा में वृक्षों का स्थान केवल जैविक उत्पादकता तक सीमित नहीं, अपितु सांस्कृतिक, आयुर्वेदिक और पारिस्थितिकीय दृष्टि से भी महत्वपूर्ण रहा है। वृक्षायुर्वेद, जिसे आयुर्वेद का एक विशिष्ट उपविभाग माना जाता है, वृक्षों के संरक्षण, पोषण और रोगनिवारण पर विस्तृत मार्गदर्शन देता है। आज जब आधुनिक कृषि पद्धतियाँ अनेक संकट उत्पन्न कर रही हैं, तब वृक्ष बागवानी किसानों के लिए एक पारंपरिक, किंतु प्रभावी समाधान के रूप में पुनः महत्वपूर्ण हो गई है।

2. अतीत में वृक्ष बागवानी और वृक्षायुर्वेद

प्राचीन ग्रंथों में वृक्षों की रोग पहचान, पोषण प्रणाली, छाया, वायुमंडलीय लाभ एवं औषधीय उपयोग का विस्तार से वर्णन मिलता है। वृक्षायुर्वेद के अनुसार वृक्ष भी सप्तधातु एवं दोषों से युक्त होते हैं, जिनकी संतुलित स्थिति उनके स्वस्थ विकास हेतु आवश्यक है। किसान पारंपरिक रूप से खेतों की मेड़ों पर वृक्ष लगाकर बहुआयामी लाभ प्राप्त करते थे–फल, लकड़ी, चारा, औषधि और छाया।

3. वर्तमान में वृक्ष बागवानी की प्रासंगिकता

आज जलवायु परिवर्तन, भूमि क्षरण, जल संकट और कृषि लागत वृद्धि जैसी समस्याओं से जूझते किसानों के लिए वृक्ष बागवानी एक लाभकारी विकल्प बन रही है।

आर्थिक लाभ: औषधीय, फलदार और बहुउपयोगी वृक्षों से दीर्घकालिक आय।

पारिस्थितिक लाभ: जैव विविधता, जल संतुलन, वायु शुद्धि और मृदा स्वास्थ्य में योगदान।

आयुर्वेदिक उपयोग: औषधीय वृक्षों की वैज्ञानिक खेती से गुणवत्तापूर्ण औषधियाँ उपलब्ध होती हैं।

4. भविष्य की संभावनाएं

सतत कृषि विकास: वृक्षों के साथ मिश्रित खेती पर्यावरणीय एवं आर्थिक स्थायित्व प्रदान करती है।

शोध और नवाचार: वृक्षायुर्वेद के सिद्धांतों पर आधारित वैज्ञानिक अनुसंधान से नई तकनीकें विकसित की जा सकती हैं।

नीतिगत सहयोग: सरकारें वृक्षारोपण और औषधीय बागवानी को प्रोत्साहन हेतु अनुदान एवं प्रशिक्षण कार्यक्रम चला रही हैं।

कार्बन क्रेडिट एवं वैश्विक बाज़ार: पर्यावरणीय सेवाओं के लिए वृक्ष बागवानी को आर्थिक रूप से मान्यता मिल रही है।

5. निष्कर्ष (Conclusion)

वृक्ष बागवानी, विशेषतः वृक्षायुर्वेद आधारित पद्धति, भारत की पारंपरिक कृषि प्रणाली को पुनर्जीवित कर सकती है। यह न केवल किसानों की आय में वृद्धि में सहायक है, बल्कि पर्यावरणीय सुधार, औषधीय पौधों की आपूर्ति, और सतत कृषि विकास का भी आधार बन सकती है। आवश्यक है कि शास्त्रीय ज्ञान और आधुनिक विज्ञान के समन्वय से इस दिशा में ठोस कदम उठाए जाएँ।

12/2022-23

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

गोपीचंद सिंह, हरि राम चौधरी कृषि विज्ञान केंद्र, नागौर-I कृषि विश्वविद्यालय जोधपुर (राजस्थान)

मृदा स्वास्थ्य कार्ड द्वारा पोषक तत्व प्रबंधन

मृदा स्वास्थ्य, कार्ड एक मृदा परिक्षण रिपोर्ट का प्रारूप है जिसमे मृदा एवं सिंचाई जल के परीक्षण के परिणामों के साथ-साथ उचित मार्गदर्शन भी दिया जाता है। मृदा स्वास्थ्य कार्ड में 12 मृदा गुणों के साथ-साथ सिंचाई जल के भी विभिन्न गुणों का परीक्षण किया जाता हैं। इसमें मृदा एवं पानी की जाँच के आधार पर विभिन्न फसलों में उर्वरकों की प्रयोग मात्रा की सिफारिस की जाती है जो किसानो को फसल एवं अपनी भूमि के आधार पर संतुलित पोषण प्रधान करने में मददगार हो सकती है।

2. मिट्टी परीक्षण: मिट्टी परीक्षण के द्वारा मिट्टी में उपस्थित पौधों के पोषक तत्वों का समुचित प्रबंधन संभव है। विभिन्न मृदा विकारों को दूर करने तथा उर्वरकों का सही प्रयोग करने के लिए मिट्टी परीक्षण अत्यन्त आवश्यक है। फसलों की लाभकारी उपज लेने तथा बाग लगाने के लिए मिट्टी विशेष रूप से लाभादायक है।

मिट्टी परीक्षण के मुख्य उद्देश्य

- विभिन्न विकारों जैसे अम्लीयता, लवणीयता, क्षारीयता, रेह, कल्लर तथा प्रदूषण आदि का पता लगाना तथा सुधार के उपायों के सुझाव देना।
- मिट्टी की उपजाऊ शक्ति का पता लगाना तथा उसी के अनुसार खादों व उर्वरकों की मात्रा की सिफारिश करना।
- उर्वरकों के प्रयोग से होने वाले लाभ का आंकलन करना तथा सम्बन्धित भावी योजना में सहायता करना।
- मिट्टी की उपजाऊ शक्ति के मानचित्र बनाना तथा उसी आधार पर क्षेत्र विशेष में मिट्टी की उपजाऊ शक्ति में समय के साथ-साथ होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करना और उर्वरक वितरण में मार्गदर्शन करना।

नमूना लेने की सही विधि

1.खेत का सर्वेक्षण – सर्वप्रथम खेत का सर्वेक्षण करके उसे ढलान, रंग, फसलोत्पादन तथा आकार के अनुसार उचित भागों में बाँट लें। इसके बाद प्रत्येक भाग में टेढे-मेढे चलते हुए 15-20 निशान लगा लें। प्रत्येक खेत का आकार एक एकड़ से अधिक न रखें। यदि पूरा खेत बहुत अधिक समानता वाला हो तो एक हैक्टेयर (2.5 एकड़) से केवल एक नमूना भी बनाया जा सकता है।

2.औजारों का चयन–ऊपरी सतह से नमूना लेने के लिए खुर्पो या ट्यूब ऑगर, अधिक गहराई से या गीली मिट्टी से लेने के लिए पोस्ट होल ऑगर तथा सख्त मिट्टी से नमूना लेने के लिए बर्मे (स्क्रू ऑगर) का प्रयोग करें। गड्ढे खोदन के लिए कस्सी, फावड़े या बेलचे का प्रयोग करें, अथवा लम्बी छड़ वाले ऑगर का प्रयोग करें।

3.नमूने की गहराई–अन्न, दलहन, तिलहन, गन्ना, कपास, चारे, सब्जियों, तथा मौसमी फूलों आदि के लिए ऊपरी सतह (0-15 से.मी.) से 15-20 निशानों से नमूना लें। बाग या अन्य वृक्षों के लिए 0-30, 30-60 तथा 60-90 से.मी. तक के अलग-अलग नमूने लें। सतह से नमूने लेने के लिए खुर्पी की सहयता से 'ट' के आकार का गडढ़ा 15 से.मी. गहराई तक बनाएं तथा एक किनारे से लगभग 2 से.मी. मोटी परत लें।

4.नमूना तैयार– एक खेत या भाग से लिए गए सभी नमूनों को एक बिल्कुल साफ सतह पर या कपड़े या पोलीथीन शीट पर रखकर खूब अच्छी तरह मिला लें। पूरी मात्रा को एक समान मोटाई में फैला लें तथा हाथ से चार बराबर भागों में बाँट लें। आमने-सामने वाले दो भाग हटा दें तथा शेष दो को फिर मिलाकर चार भागों में बाँट दें। यह क्रिया तब तक दोहराते रहें जब तक लगभग आधा कि.ग्रा. मात्रा न बच जाए।

5.नाम, पता आदि लिखना–अंत में बची हुई लगभग आधा कि.ग्रा. मिट्टी को कपड़े, कागज या पॉलीथीन की साफ (नई) थैली में रखकर उस पर किसान का नाम, पता, नमूना संख्या लिख दें। अलग से एक कागज पर यही विवरण लिखकर थैली के अन्दर भी रख दें। मिट्टी गीली हो तो छाया में सुखाकर थैली में रख दें तथा 2-3 दिन में ही प्रयोगशाला में भे दें।

6.अन्य आवश्यक जानकारी भी दें– नमूनों को पहचान चिन्ह, नमूने की गहराई, फसल प्रणाली, प्रयोग की गई खादों व उर्वरकों की मात्रा तथा समय, सिंचाई सुविधा, जल-निकास आदि की जानकारी के अतिरिक्त वांछित फसल का नाम भी लिखें।

7.सावधानियाँ– नमूना खेत का सच्चा प्रतिनिधि होना चाहिए। रंग, ढलान, उपजाऊ शक्ति की दृष्टि से भिन्न लगने वाले भागों से अलग-अलग नमूने लें। प्रयोग में लाए जाने वाले औजार, थैलियां आदि बिल्कुला साफ होनी चाहिए। नमूनों को खाद, उर्वरक, दवाइयों आदि के सम्पर्क में न आने दें। नमूना लेते समय सतह पर पड़ा हुआ कूड़ा, खरपतवार, गोबर आदि पहले ही हटा दें। पेड़ों के नीचे, खाद के गडढों के आस-पास तथा खेत की मेड़ों से लगभग 2 मीटर दूरी तक नमूने न लें।

8.मिट्टी परीक्षण का सही समय– फसल बोने या रोपाई करने के एक माह पूर्व, खाद व उर्वरकों के प्रयोग से पहले ही मिट्टी परीक्षण कराएं। आवश्यकता हो तो खड़ी फसल में से भी कतारों के बीच से नमूना लेकर परीक्षण के लिए भेज सकते हैं ताकि खड़ी फसल में पोषण सुधार किया जा सके।

9.पुनः परीक्षण कब कराएं?– साधारण फसलों के लिए एक या दो वर्ष में एक बार मिट्टी परीक्षण अवश्य करा लेना चाहिए। फसल कमजोर होने पर बीच में तुरंत समाधान के लिए परीक्षण कराया जा सकता है। खेती आरम्भ करने से पूर्व पूर फार्म की मिट्टी (तथा सिंचाई जल) का परीक्षण करा लेना बहुत आवश्यक है।

10.मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाएं कहाँ-कहाँ हैं?–देश के लगभग प्रत्येक जिले में प्रयोगशाला है। इसके लिए अपने निकटतम कृषि विज्ञान केन्द्र अथवा कृषि विभाग से सम्पर्क करें।

11.क्या मिट्टी परीक्षण स्वयं भी कर सकते हैं?– कुछ परीक्षणों के लिए मिट्टी परीक्षण किट का प्रयोग किया जा सकता है। परंतु इसके द्वारा केवल सीमित जानकारी ही मिल पाती है, प्रयुक्त किए गए रसायनों के लिए निर्माता पर ही निर्भर रहना पड़ता है तथा परीक्षण परिणामों की व्याख्या का सबसे महत्वपूर्ण कार्य किसान स्वयं नहीं कर सकते। अतः पूरी जानकारी तथा अधिक लाभ के लिए मिट्टी परीक्षण प्रयोगशालाओं से ही सम्पर्क करना चाहिए।

12.सिंचाई जल का परीक्षण भी आवश्यक है– यदि सिंचाई जल लवणीय है तो अच्छे खाद व उर्वरक प्रयोग के बावजूद भी अच्छी पैदावार लम्बे समय तक नहीं मिल पाती। साथ ही बहुमूल्य मिट्टी लवणीय या क्षारीय बन सकती है। पहले से ही बनी लवणीय या क्षारीय मिट्टी के सुधार के लिए भी अच्छी गुणवत्ता वाले सिंचाई जल की ही आवश्यकता होती है, अन्यथा सुधार असंभव हो जाता है। सिंचाई जल द्वारा मिट्टी का प्रदूषण रोकने के लिए भी उसकी गुणवत्ता का ज्ञान पहले से ही प्राप्त कर लेना चाहिए। नया नलकूप (ट्यूब वैल) लगाते समय ही परीक्षण करा लेने से भविष्य में होने वाी बड़ी मुसीबत से बचा जा सकता है। सिंचाई जल का नमूना एक बिल्कुल साफ बोतल में लें। इसके लिए बोतल को उसी जल से कई बार धोने के बाद लगभग आधा लीटर मात्रा लें तथा बोतल पर नाम, पता, दिनांक आदि लिखकर 2-3 दिन के अन्दर परीक्षण के लिए भेज दें।

13.कुछ विशेषताएं– कृषि विज्ञान केन्द्र, अठियासन, नागौर स्थित मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला विश्वसनीय परीक्षण सेवा के लिए प्रसिद्ध हैं। यहाँ मिट्टी व सिंचाई जल परीक्षण सम्बन्धी जानकारी तथा आवश्यक कदम उठाने के लिए यहाँ मृदा एवं शस्य वैज्ञानिकों से सीधा सम्पर्क हो जाता है तथा वैज्ञानिक खेती करने के लिए सुझाव मिल जाते हैं।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका
राजस्थान

बाजरा एवं ज्वार में समन्वित कीट - रोग प्रबंधन कर उत्पादन बढ़ाएं

डॉ. सुनील कुमार, सुशील कुमार शर्मा
संदीप कुमार रस्तोगी
कृषि विज्ञान केन्द्र (भाकृअनुप- भारतीय सरसों अनुसंधान संस्थान) गुंता-बानसूर, अलवर (राजस्थान)
डॉ. वी.वी. सिंह निदेशक, भाकृअनुप - भारतीय सरसों अनुसंधान संस्थान, भरतपुर

देसी बाजरा की तुलना में बाजरा की संकर एवं संकुल किस्मों की पैदावार काफी अधिक होती है। जहां वर्षा की कमी हो अर्थात् जहां वर्षा 250-300 मि.मि. के आस-पास होती है वहां भी संकर व संकुल बाजरा असिंचित फसल के रूप में बोया जाता है। बाजरा बीज के साथ हरे चारे के लिए भी बोये जाते है जब कि ज्वार राजस्थान में सिर्फ वही हरे चारे के लिए भी बोये। देशको खाद्य पदार्थ में आत्मनिर्भर बनाए रखने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रयासों की आवश्यकता है साथ ही प्रतिकूल जलवायु परिस्थितियां के कारण नये-नये हानिकारक कीट-रोग बाजरा व ज्वार को नुकसान पहुचा रहे हैं। जिसके कारण फसल की पैदावार व गुणवत्ता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। इन जैविक कारकों से बाजरा व ज्वार के उपज(बीज व हरे चारे) व गुणवत्ता में कमी हो सकती है।

सस्य क्रिया द्वारा कीट रोग प्रबंधन

सिंचाई एवं निराई-गुड़ाई

सिंचाई: पौधों में फुटान होते समय, सिट्टे निकलते समय तथा दाना बनते समय भूमि में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए। वर्षा की कमी की स्थिति में पौधे पीले पड़ने से पहले ही सिंचाई करें। फसल की सिंचाई समय-समय पर आवश्यकतानुसार करें लेकिन अधिक सिंचाई करने से खरपतवार में बढ़ोत्तरी के साथ कीट रोग के लगने की संम्भावना की बढ़ जाती है। बुवाई के तीसरे-चौथे सप्ताह तक खेत में निराई कर खरपतवार अवश्य निकाल दें। इसके बाद भी आवश्यकतानुसार खरपतवार निकालते रहें। गुड़ाई करते समय पौधों के अधिक नजदीक गुड़ाई न करें। निराई-गुड़ाई करना संभव न हो तो बाजरे की शुद्ध फसल में खरपतवार नष्ट करने हेतु बुवाई के तुरन्त बाद अथवा अंकुरण से पूर्व प्रति हैक्टेयर आधा किलो एट्राजिन सक्रिय तत्व का पानी में घोल बना कर छिड़काव करें। एट्राजिन 500 ग्राम सक्रिय तत्व को खड़ी फसल में बुवाई के 20-25 दिन बाद छिड़काव करें।

निराई एक बार हाथ से भी करके खरपतवार को अवश्य निकाल दें। सांठी खरपतवार नियंत्रण हेतु बाजरा बोने के उपरान्त अंकुरण से पूर्व ऑक्सीफ्लोरफैन 0.25 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर की दर से पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें तथा बुवाई के 25 दिन बाद एक निराई गुड़ाई भी करे। समय पर खरपतपार नहीं निकालने पर कीट-रोग होने की संभावना बढ़ जाती है। अतः खेत को साफ रखें।

प्रमुख कीट

कातरा: मानसून की वर्षा होते ही कातरे के पतंगों का जमीन से निकलना शुरू हो जाता है। इन पतंगों को यदि नष्ट कर दिया जाये तो फसलों में लट का प्रकोप कम हो जाता है। **इसकी रोकथाम प्रकाश पाश क्रिया से संभव है, जिसके लिए निम्न प्रकार से उपाय अपनायें**

पतंगों को प्रकाश कर आकर्षित करने हेतु रात्रि में खेत की मेड़ों पर चारागाहों व खेतों में गैस/लालटेन या बिजली का बल्व जलायें व इनके नीचे मिट्टी के तेल मिले पानी की परात रखे ताकि रोशनी पर आकर्षित पतंगे पानी में गिरकर नष्ट हो जायें।

कातरे की छोटी लट अवस्था: खेतों के पास उगे जंगली पौधे एवं जहां फसल उगी हुई हो तो वहां पर अण्डों से निकली लटों एवं इनकी प्रथम व द्वितीय अवस्था पर क्यूनॉलफॉस 1.5% चूर्ण का 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर के हिसाब से भुरकाव करें।

कातरे की बड़ी लट अवस्था: खेतों में लटें चुन चुनकर एवं एकत्रित कर 5ः मिट्टी के तेल मिले पानी में डालकर नष्ट करें। निम्नलिखित दवाइयों में से किसी एक दवा का भुरकाव/छिड़काव करें मैलाथियॉन 5% या क्यूनॉलफॉस 1.5% या फोसलॉन 4% या कार्बेरिल 5% 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर का भुरकाव करें। जहां पानी उपलब्ध हो वहां डाइक्लोरोवास 75 ई.सी. 300 मिलीलीटर या क्यूनॉलफॉस 25 ई.सी. 625 मिलीलीटर प्रति हैक्टेयर का छिड़काव करें।

रूट बग: जहां रूट बग का प्रकोप हो वहां कीट प्रकोप दिखाई देते ही 25 किलोग्राम क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत या मिथाइल पैराथियॉन 2ः चूर्ण प्रति हैक्टेयर के हिसाब से भुरकाव करें। जहां रूट बग का प्रकोप प्रति वर्ष होता हो वहां पर बुवाई से पूर्व भूमि व बीज उपचार कर बुवाई करनी चाहिए।

ग्रेवीविल, चेफर बीटल, ब्लिस्टर बीटल एवं ईयर हैड बग: कीट प्रकोप दिखाई देते ही क्यूनालफॉस 1.5% या मिथाइल पैराथियॉन 2% या मैलाथियॉन 5% चूर्ण 25 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से भुरकाव करें या फसल पर मोनोक्रोटोफॉस 36 डब्ल्यू.एस.सी. का 1 लीटर प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

चेफर बीटल: प्रकाश पर आकर्षित होती है अतः इसे प्रकाश पाश पर आकर्षित कर नष्ट करें।

फड़का एवं सैन्य कीट: प्रकोप होने पर मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण या क्यूनॉलफॉस 1.5% चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टेयर हिसाब से भुरकाव करें। भुरकाव हमेश सुबह के समय करनी चाहिए जब पत्तीयों पर ओस की नमी हो।

दीमक: बाजरा फसल में दीमक नियंत्रण हेतु फिप्रोनिल जी (कण) का 75 ग्राम सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर की दर से खड़ी फसल में भुरकाव करें। यदि फिप्रोनिल 0.3 प्रति ग्रेन्यूल है तो 25 कि.ग्रा. मात्रा प्रति हैक्टेयर के हिसाब से खडी फसल में भुरकाव करें।

तना छेदक कीट: प्रकाश पाश पर वयस्क कीटों को आकर्षित कर नष्ट करें। कटाई के बाद डंठलों को जला देवें जिससे तना मक्खी व तना छेदक के कीट नष्ट हो जाय। तना छेदक का प्रकोप कम करने हेतु क्यूनालफॉस 5% कण 8-10 किलोग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से बुवाई के 25 दिन बाद 5-7 कण प्रति पौधा, पौधों के पोटों में डालें। बाद में भी आवश्यकता हो तो दवा के कण 10 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से पौधों के पोटों में डालें। खड़ी फसलों इसके प्रकोप दिखाई देने पर इमिडाक्लोपरिड 17.8 एस.एल. आधा मिलीलिटर प्रति लीटर के हिसाब से 35-40 दिनों पर छिड़काव करना चाहिए।

तना मक्खी कीट: यह अंकुरण के चार सप्ताह तक आक्रमण करती है। वर्षा आरंभ होने के एक सप्ताह के अन्दर बुवाई करने पर इसका आक्रमण कम होता है। देर से बोयी गई फसल पर इसका असर ज्यादा होता है। इसकी रोकथाम हेतु बुवाई करते समय कतारों में बीच से 3 सेमी नीचे फोरेट 10% कण 10-15 किलो प्रति हैक्टेयर की दर से कूड में ऊर कर देवें। खड़ी फसलों इसके प्रकोप दिखाई देने पर इमिडाक्लोपरिड 17.8 एस.एल. आधा मिलीलिटर प्रति लीटर के हिसाब से 35-40 दिनों पर छिड़काव करना चाहिए। जहां सफेद लट की रोकथाम हेतु उपचार किया गया हो वहां अतिरिक्त उपचार की आवश्यकता नहीं है।

प्रमुख रोग: जोगिया (ग्रीन ईयर) हरित बाल रोगः रोगरोधी किस्में राज 171, आई सी एम एच 356, आई सी टी पी 8203, एच.एच.बी 67, बोआई करनी चाहिए। हरी चारे के लिए बाजरे की फसल में से रोगग्रस्त पौधों को निकालकर नष्ट करें। मुख्य फसल की बुवाई के समय रोग ग्रस्त पौधे खेत में नहीं रहने चाहिए। बीज को मैटालेक्सिल एस.डी 35 से 6 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से उपचारित करें। फसल में जहां जोगिया रोग दिखाई दे वहां बुवाई के 21 दिन बाद मैन्कोजेब 2 किलाग्राम प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करें।

अरगट रोग: सिट्टे निकलते समय 2.5 किलो जाइनेब या 1.5-2 किलोग्राम मैन्कोजेब के 3-3 दिन के अन्तराल पर 2-3 छिड़काव करने से प्रकोप कम होता है। बाजरे में और उसके आसपास अन्जन घास को निराई कर नष्ट करें, क्योंकि यह रोग अन्जन घास द्वारा फैलता है। हरी चारे के लिए बाजरे की बुवाई हुआ हो, तो चारे की कटाई करते रहें तथा उसमें सिट्टे नहीं आने दें क्योंकि इसके आसपास की बाजरा की फसल पर रोग तेजी से फैलता है। सिट्टे निकलते समय अरगट, कण्डुआ एवं हरित बाल रोग का पता लगाने के लिए फसल का निरीक्षण करते रहे एवं रोगग्रस्त पौधें दिखाई देने पर उखाड़कर नष्ट कर दें। अरगट रोग ब्लिस्टर बीटल या चेफर बीटल द्वारा भी फैलता है। अतः सिट्टे आने के समय इनकी रोक थाम हतु क्यनूालफासॅ 1.5% या मैलाथियान 5% चूर्ण 25 किलो प्रति हैक्टेयर के हिसाब से भुरकाव करें। बाजरा की बुवाई जुलाई के दूसरे सप्ताह में किए जाने पर अरगट के प्रकोप में स्वतः कमी होना पाया गया है।

पाइरिकूलेरिया पत्ती ब्लास्ट रोग : यह फफूंद पाइरिकुलेरिया पेनिसेटी, पाइरिकुलरिया सेटेरिया के द्वारा होता है। आर्द्र परिस्थितियों में पत्ती फटने से अंकुर जल्दी मर जाते हैं। यह चारे के मलिनकिरण का कारण बनता है और अनाज और चारे के उत्पादन को मध्यम से भारी तक कम कर सकता है। पत्ते पर घाव अण्डाकार या हीरे के आकार के लगभग 2.5-3.5×1.5-2.5 मिमी का होता है। ताजा होने पर घाव केंद्र में भूरे और पानी से लथपथ होते हैं लेकिन सूखने पर भूरे हो जाते हैं। घाव अक्सर क्लोरोटिक प्रभामंडल से घिरे होते हैं जो परिगलित हो जाते हैं, जिससे संकेंद्रित छल्लों का आभास होता है। प्रबंधन के लिए कार्बेन्डाजिम 12% +मैन्कोजेब 63%/2 ग्राम प्रति लीटर पानी के हिसाब से छिड़काव करें। आवश्यकतानुसार 5-7 दिनों के बाद दोहरावें।

अजोलाः पशुधन के लिए सदाबहार चारा

अनिता सैनी (शोध छात्रा) उद्यान विज्ञान विभाग, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

दीपक कुमार सैनी (फार्म मैनेजर) कृषि महाविद्यालय, कोटपूतली

दुग्ध के लिए बढ़ती हुई मांग, पशुपालन व्यवसाय को लाभदायक बनाने की नई संभावनाओं का सृजन कर रही है। यद्यपि ठीक इसी समय हरे चारे की उपलब्धता में निरंतर कमी परिलक्षित हो रही है। वनों एवं चारागाहो का क्षेत्रफल घट रहा है। साथ ही साथ फसल प्रति उत्पादों में भी कमी आ रही है जो कि अन्यथा पशु आहार के रूप में उपयोग किया जाता रहा है।

हरे चारे की इस कमी की पूर्ति व्यवसायिक पशु आहार से की जा रही है। जिसके कारण दुग्ध के उत्पादन लागत में वृद्धि हो रही है। पशु आहार के विकल्प की खोज एक विस्मयकारी पौधे अजोला पर समाप्त होती परिलक्षित होती है जिसमें कि पशुओं के लिए सदाबहार पौष्टिक आहार प्रदान करने की क्षमताएँ विद्यमान है। अजोला जल की सतह पर तैरने वाला एक फर्न है। अजोला की सतह पर नीलहरित शैवाल सहजैविक के रूप में विद्यमान होता है। इस नीलहरित शैवाल को (एनाबिना अजोली) के नाम से जाना जाता है। जो कि वातावरण से नत्रजन के स्थायीकरण के लिए जिम्मेदार होता है। अजोला शैवाल की वृद्धि के लिए आवश्यक कार्बन स्त्रोत एवं वातावरण प्रदान करता है।

अजोला का पशु आहार में महत्वः अजोला जल सतह पर तैरने वाली जलीय फर्न है, इसकी पंखुड़ियों में नील हरित शैवाल (एनाबेना अजोली) सह जीवन के रूप में पाई जाती है, जो वायुमण्डलीय नत्रजन का यौगिकीकरण करती है। अजोला प्रोटीन आवश्यक अमीनों एसिड, विटामिन (विटामिन ए, विटामिन बी-12 तथा बीटा कैरोटीन) सहायक तत्वों एवं कैल्शियम, फॉस्फोरस, पौटेशियम, फेरस, कॉपर, मैग्नेशियम से भरपूर होता है। शुष्क वजन के आधार पर इसमें 25-35 प्रतिशत प्रोटीन, 10-15 प्रतिशत खनिज एवं बॉयो-एक्टिव पदार्थ तथा बायो-पॉलीमर होते हैं। अजोला दुग्ध उत्पादक पशुओं तथा मुर्गियों के लिए प्रोटीन का एक अच्छा स्त्रोत है। अजोला की कई प्रजातियां पाई जाती है, परन्तु भारत में अजोला पिनाटा प्रजाति प्रमुखता से मिलती है। अजोला में रिजका व नैपियर घास की तुलना में 4 से 5 गुणा अधिक प्रोटीन (20-25 प्रतिशत) मिलती है। अजोला की विशेषता यह है कि यह अनुकूल वातावरण में 5 दिनों में ही दो-गुणा हो जाता है। यदि इससे पुरे वर्ष उत्पादन लिया जाए तो 300 टन से भी अधिक अजोला प्रति हैक्टेयर पैदा किया जा सकता है। यह गाय, भैंस मुर्गी, भेड़, बकरियों के लिए एक आदर्श हरा चारा है। अजोला अन्य चारों से ज्यादा पौष्टिक होता है और यह बेहद सुपाच्य होता है। दुधारू पशुओं को प्रतिदिन 1.5 से 2 किलो ताजा अजोला बाटे के साथ खिलाने से 15 प्रतिशत तक दुग्ध उत्पादन बढ जाता है। मुर्गियों को 25-40 ग्राम अजोला प्रतिदिन खिलाने से उनके शारीरिक भार व अण्डा उत्पादन दामता में 10-15 प्रतिशत तक की वृद्धि होती है। भेड़ व बकरियों को 100-200 ग्राम ताजा अजोला खिलाने से शारीरिक वृद्धि के साथ दुग्ध उत्पादन में भी वृद्धि देखी गई है।

कैसे करें अजोला का उत्पादनः अजोला का उत्पादन बहुत ही आसान है। सबसे पहले किसी भी छायादार स्थान पर 12 फीट लम्बी, 6 फीट चौड़ी, एक फीट ऊंची, एच. डी. पी. ई निर्मित ग्रोविंग अजोला बेड जो कि प्रकाश की पराबैगनी किरणों के लिए प्रतिरोधी क्षमता रखती है उसे लगायें। अब एच. डी. पी. ई निर्मित अजोला ग्रोविंग बेड में 100-150 किग्रा. मिट्टी फैलाना है। इसके अलावा 9 किग्रा. गोबर एवं 30 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट 30 लीटर पानी में मिलाकर गड्?ढे में डाल देना है। पानी का स्तर 10-12 सेमी. तक होना चाहिए। अब 2000-3000 ग्राम अजोला कल्चर एच.डी.पी. ई निर्मित ग्रोविंग अजोला बेड के पानी में डाल देते हैं। पहली बार अजोला कल्चर केवल हमारे दिशा ऑग्रेनिक साईन्स टेक इण्डस्ट्रीज के संस्थान से क्रय करना चाहिए। अजोला बहुत तेजी से बढ़ता है और 15-20 दिन के अंदर पूरे एच. डी. पी. ई निर्मित अजोला ग्रोविंग बेड को ढ़क लेता है। इसके बाद से 1.5 किलो से 2 किलो अजोला प्रतिदिन छलनी या बांस की टोकरी से पानी के ऊपर से बाहर निकाला जा सकता है। प्रत्येक सप्ताह एक बार 20 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट और 2 किलो गोबर बेड में डालने से अजोला तेजी से विकसित होता है। साफ पानी से धो लेने के बाद 1.5 से 2 किग्रा, अजोला नियमित आहार के साथ पशुओं को खिलाया जा सकता है।

पशुओं को अजोला चारा खिलाने के लाभः अजोला सस्ता, सुपाच्य एवं पौष्टिक पूरक पशु आहार है। इसे खिलाने से वसा व वसा रहित पदार्थ सामान्य आहार खाने वाले पशुओं के दूध में अधिक पाई जाती है। पशुओं में बांझपन निवारण में उपयोगी है। पशुओं के पेशाब में खुन की समस्या फॉस्फोरस की कमी से होती है। पशुओं को अजोला खिलाने से यह कमी दूर हो जाती है। अजोला से पशुओं में कैल्शियम, फॉस्फोरस, लोहे की आवश्यकता की पूर्ति होती है जिससे पशुओं का शारीरिक विकास अच्छा होता है। अजोला में प्रोटीन आवश्यक अमीनो एसिड विटामिन (विटामिन ए, विटामिन बी-12 तथा बीटा-कैराटीन) एवं खनिज लवण जैसे कैल्शियम फॉस्फोरस, पोटेशियम, आयरन, कापर, मैग्नेशियम आदि प्रचूर मात्रा में पाए जाते हैं। इसमें शुष्क मात्रा के आधार पर 30 प्रतिशत प्रोटीन 10-15 प्रतिशत खानिज एवं 7-10 प्रतिशत एमीनो अम्ल, जैव सक्रिय पदार्थ एवं पोलिमर्स आदि पाए जाते हैं। इसमें कार्बोहाइड्रेट एवं वसा की मात्रा अत्यंत कम होती है। अतः इसकी संरचना इसे अत्यंत पौष्टिक एवं असरकारक आदर्श पशु आहार बनाती है। यह गाय भैंस, भेड़ बकरियों, मुर्गियों आदि के लिए एक आदर्श चारा सिद्ध हो रहा है। दुधारू पशुओं पर किए गए प्रयोगो से साबित होता है कि जब पशुओं को उनके दैनिक आहार के साथ 1.5 से कि.ग्रा. अजोला प्रतिदिन दिया जाता है। तो दुग्ध उत्पादन में 15-20 प्रतिशत वृद्धि दर्ज की गयी है। इसके साथ इसे खाने वाली गाय-भैंसों की दूध की गुणवत्ता भी पहले से बेहतर हो जाती है। प्रदेश में मुर्गीपालन व्यवसाय भी बहुतायत में प्रचलित है। यह बेहद सुपाच्य होता है और यह मुर्गियों का भी पसंदीदा आहार है। कुक्कुट आहार के रूप में अजोला का प्रयोग करने पर ब्रायलर पक्षियों के भार में वृद्धि तथा अण्डा उत्पादन में भी वृद्धि पाई जाती है। यह मुर्गीपालन करने वाले व्यवसाइयों के लिए बेहद लाभकारी चारा सिद्ध हो रहा है। यही नहीं अजोला को भेड़-बकरियों, सुअरों एवं खरगोश, बतखों के आहार के रूप में भी बखुबी इस्तेमाल किया जा सकता है।

उत्पादन के दौरान ध्यान रखने योग्य बातें

1. अजोला के अधिक उत्पादन व बढवार के लिए प्रत्येक बेड से लगभग 200 ग्राम प्रति वर्ग मीटर प्रतिदिन की दर से अजोला बाहर निकालना जरूरी है।
2. बेड में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ने तथा सुक्ष्म पोषक की कमी को रोकने के लिए 30 दिनों में एक बार बेड की मिट्टी को लगभग 20 किलो नई मिट्टी से बदलना चाहिए।
3. प्रति 10 दिनों के अन्तराल पर 25-30 प्रतिशत पुराने पानी को ताजे पानी से बदल देना चाहिए जिससे नाइट्रोजन की अधिकता से बचाया जा सके।
4. प्रत्येक 40 दिनों में एक बार बेड को साफ किया जाना चाहिए पानी तथा मिट्टी को बदला जाना चाहिए एवं नये अजोला बीज का उपयोग किया जाना चाहिए।
5. कीटों तथा बीमारियों से संक्रमित होने पर अजोला के शुद्ध कल्चर से एक नई बेड तैयार करके पुनः नई बेड को उपयोग में लेना चाहिए।
6. अजोला को बेड से निकालने के लिए छलनी का उपयोग करना चाहिये व उसी छलनी में साफ पानी से धो लेना चाहिए ताकि छोटे-छोटे पौधे जो कि छलनी में चिपके रहते हैं उन्हें वापस क्यारी में डाला जा सके।
7. अजोला बेड का तापमान 30° सेंटीग्रेड से ऊपर न जाये इसके लिए बेड के तापमान पर विशेष ध्यान रखना चाहिए, अतः इसे तैयार करने वाला स्थान छायादार होना चाहिए।

इस प्रकार दिन-प्रतिदिन कम होती जा रही खेती योग्य जमीन और मौसम की अनिश्चतताओं के कारण पशुओं के लिए हरे चारे के संकट से जूझ रहे किसानों व डेयरी मालिकों के लिए अजोला किसी वरदान से कम नहीं है। इसे घर-आंगन में लगा कर पूरे साल हरा चारा प्राप्त कर सकते हैं। अजोला न केवल पशुओं के लिए स्वास्थयवर्द्धक है बल्कि पशुओं की दूध उत्पादन क्षमता भी बढ़ाता है

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

नानू राम शर्मा विद्यावाचस्पति, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय, स्वामी केशवानन्द राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

जितेश कुमार मुद्गल, श्रवण कुमार बाज्या

मुस्कान राजपूत सहायक आचार्य, ब्राइट केरियर कृषि महाविद्यालय, नोखा, बीकानेर

टमाटर में लगने वाले प्रमुख कीट एवं उनका समन्वित प्रबंधन

परिचय

टमाटर एक सोलेनेसी परिवार का पौधा है? टमाटर की उत्पत्ति पश्चिमी दक्षिण अमेरिका, मैक्सिको और मध्य अमेरिका में मानी जाती है जो भारत के अलावा विश्व के अन्य देशों में भी उगाया जाता है? टमाटर को रेतीली से लेकर भारी मिट्टी तक विभिन्न प्रकार की मिट्टी में उगाया जा सकता है। लेकिन 6.0-7.0 की पीएच, अच्छी जल निकासी वाली, कार्बनिक पदार्थों से भरपूर रेतीली या लाल दोमट मिट्टी को आदर्श माना जाता है।

टमाटर गर्म मौसम की फसल है लेकिन टमाटर को समशीतोष्ण जलवायु में व्यापक रूप से उगाया जाता हैं? फलों का सबसे अच्छा रंग और गुणवत्ता 21-24 डिग्री सेल्सियस के तापमान पर प्राप्त होती है? भारत में टमाटर का क्षेत्रपाल 0.181 मिलियन हैक्टेयर, उत्पादन 20.57 मिलियन टन तथा औसत उत्पादकता 25.39 टन प्रति हैक्टेयर है? टमाटर में प्रचुर मात्रा में पानी, खनिज लवण, प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट और अन्य तत्व जैसे कैल्शियम, आयरन, कैरोटीन, विटामिन आदि पाए जाते हैं? टमाटर का उपयोग सलाद व सब्जी के अलावा विभिन्न प्रकार के उत्पाद जैसे केचप, सॉस, चटनी तथा अन्य पेय पदार्थ बनाने के काम में भी लिया जाता है? टमाटर की फसल पाले व कीटों के प्रति संवेदनशील है? टमाटर की फसल में नर्सरी से लेकर अंतिम तुड़ाई तक विभिन्न कीटों का प्रकोप रहता है जो टमाटर की फूल, पत्तियां, तना व फल सहित अन्य भागों को नुकसान पहुंचाते हैं? टमाटर में एफिड, सफेद मक्खी, फल छेदक, पिनवर्म आदि कीट फसल को लगभग 50 से 80% तक क्षती पहुंचाते हैं?

टमाटर के प्रमुख कीट

फल छेदक, सफेद मक्खी, फल छेदक

फल छेदक कीट के पहँचान के लक्षण

फल छेदक कीट के अंडे भूरे पीले रंग के होते है? पूर्ण विकसित होने पर लार्वा सफेद रंग के साथ काले भूरे रंग की अनुदैर्ध्य धारिया दिखाई देती है? पूर्ण विकसित लार्वा 3.5 सेंटीमीटर लम्बा होता हैं? वयस्क कीट मजबूत शरीर और पीले बुरे रंग का होता है अग्र भाग पर भूरे रंग की लहरदार रेखाएं और ऊपरी तरफ अलग-अलग आकार के काले धब्बे और निचले हिस्से पर एक काले गुर्दे के आकार का निशान और गोल धब्बा पाया जाता है? पिछले पंख सफेद और हल्के रंग के तथा बाहरी किनारो पर एक चौड़ी काली पट्टी होती है? वयस्क कीट अपना जीवनकाल लगभग 30 से 35 दिन में पूर्ण कर लेता है एक वर्ष में लगभग 8 पीढ़िया पूर्ण कर लेता है?

क्षति की प्रकृति

फल छेदक कीट की लार्वा अवस्था पत्तियां, तना तथा फल को क्षति पहुंचाती है? नवजात लार्वा सर्वप्रथम पत्तियों को खाता है तथा लार्वा की अंतिम अवस्था फल को नुकसान पहुंचाती है तथा लार्वा फल को खाता है जिसके कारण फलो के ऊपर छेद दिखाई देते है? जिसके कारण फल की गुणवता व उपज में कमी हो जाती है?

सफेद मक्खी

सफेद मक्खी के पहँचान के लक्षण

सफेद मक्खी के अंडे हल्के पीले तथा बाद में भूरे रंग के हो जाते हैं प्युपा चौड़ा, चपटा और पारदर्शी या पीला तथा एक सिरा नुकीला होता है? वयस्क मक्खी के पंख 1 से 1.5 सेंटीमीटर लंबे, शरीर पीला, सफेद मोमी पाउडर के समान होता है? पिछले पंख लंबे तथा दोनों पंखों की जोड़ी सफेद रंग की होती है सफेद मक्खी अपना जीवन काल लगभग 14 से 122 दिन में पूर्ण कर लेती है? यह एक वर्ष में 11 पीढ़िया पूर्ण कर लेती है?

2. क्षति की प्रकृति

सफेद मक्खी का निम्फ व वयस्क दोनों ही पौधे की पत्तियों का रस चूसकर हानि पहुंचाते हैं? सफेद मक्खी मधुरस के समान पदार्थ छोड़ती है जो फफूंद को आकर्षित करता है जिस कारण पौधों में संक्रमण बढ़ जाता है संक्रमण के कारण पौधे कमजोर तथा प्रकाश संश्लेषण में बाधा उत्पन्न हो जाती है संक्रमण के कारण फसल की वृध्दि व उपज में कमी आ जाती है सफेद मक्खी कई प्रकार के वायरस रोगों का प्रसार भी करती है जैसे पत्ती मोडक रोग आदि?

कीटों का समन्वित प्रबंधन

- गर्मी के दिनों में खेत की गहरी जुताई करे?
- सफेद मक्खी से प्रभावित पोंधो को जड़ सहित उखाड़ देना चाहिये?
- भूमि की तैयारी के समय नीम की खली 250 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की दर से डाले?
- टमाटर में बीजों के अंकुरण के एक सप्ताह के बाद इमिडाक्लोप्रिड 200 एस एल का 0.3 एम एल प्रति लीटर का स्प्रे करें?
- रोपाई से पूर्व नर्सरी का जड़ उपचार इमिडाक्लोप्रिड 200 एस एल का 0.3 एम एल से करे?
- फल छेदक के नियंत्रण के लिए अंडा परजीवी ट्राईकोग्रामा चिलोनिस, ट्राईकोग्रामा ब्राजीलैन्सिस और ट्राईकोग्रामा प्रीटियोंसम को 2.5 लाख प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करे?
- फेरोमोन ट्रेप तथा प्रकाश जाल से भी वयस्क कीटो को पकड़ कर नष्ट किया जा सकता है?
- सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए पिला चिपचिपा ट्रेप का भी प्रयोग किया जा सकता है?
- सफेद मक्खी के नियंत्रण के लिए डाइमेथोएट 30 प्रतिशत या इमिडाक्लोप्रिड 200 एस एल का 0.3 एम एल का स्प्रे करे?
- फल छेदक के नियंत्रण के लिए फ्लूबेंडामाइड 20 डब्ल्यू जी 5 ग्राम या इण्डोक्साकार्ब 5 एस सी का 8 एमएल प्रति 10 लीटर की दर से स्प्रे करें?
- फल छेदक के नियंत्रण हेतु बेसिलस थूरिन्जेंसिस 2 ग्राम प्रति लीटर का स्प्रे करें?
- टमाटर के कीट नियंत्रण के लिए ऐजाडिरेक्टीन 1 ईसी 2 एमएल प्रति लीटर पानी अथवा नुवालुरोन 10 ईसी का स्प्रे करें?

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

बाजरा की वैज्ञानिक खेती: हरियाणा के परिप्रेक्ष्य में

✍ **डॉ. सोनिका** सहायक प्रोफेसर, आनुवांशिकी एवं पौध प्रजनन विभाग, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, कृषि महाविद्यालय, 'कौल'

परिचय

बाजरा (Pearl Millet) एक प्रमुख मोटा अनाज है, जिसे हरियाणा सहित भारत के कई राज्यों में पारंपरिक रूप से उगाया जाता है। हरियाणा में विशेष रूप से दक्षिणी और पश्चिमी जिलों जैसे महेंद्रगढ़, भिवानी, रेवाड़ी, हिसार और सिरसा में बाजरे की खेती की जाती है। राज्य की जलवायु और मृदा इस फसल के लिए उपयुक्त मानी जाती है। वैज्ञानिक तरीकों को अपनाकर न केवल उपज में वृद्धि की जा सकती है, बल्कि किसान की आय भी कई गुना बढ़ सकती

हरियाणा में बाजरा की स्थिति

हरियाणा में खरीफ ऋतु में बाजरे की बुवाई जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के मध्य तक की जाती है। यह फसल मुख्य रूप से वर्षा पर आधारित होती है, लेकिन वैज्ञानिक सिंचाई विधियों और नई किस्मों के माध्यम से कम पानी में भी अधिक उत्पादन संभव है।

बाजरा की वैज्ञानिक खेती की प्रमुख विधियाँ

1.उन्नत किस्मों का चयन

हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार द्वारा विकसित की गई कुछ प्रमुख उन्नत किस्में हैं:

* HHB 67 Improved
* HHB 197
* HC 20
* HHB 299

ये किस्में कम समय में पकने वाली, रोग प्रतिरोधक और अधिक उपज देने वाली होती हैं।

2.भूमि तैयारी

खेत की दो बार गहरी जुताई के बाद हेंगा चलाकर समतल कर देना चाहिए। अच्छे जल निकास की व्यवस्था होनी चाहिए क्योंकि बाजरा जलजमाव सहन नहीं कर पाता।

3.बुवाई की विधि

बुवाई समय: जून के अंत से जुलाई के मध्य तक
बीज दर: 4-5 किलोग्राम प्रति एकड़
बीज उपचार: बीजों को कार्बेन्डाजिम या थिरम से उपचारित करने से बीजजनित रोगों से सुरक्षा मिलती है।

4.उर्वरक प्रबंधन

* **नाइट्रोजन:** 40-60 किग्रा/हेक्टेयर
* **फॉस्फोरस:** 20-30 किग्रा/हेक्टेयर

अर्ध मात्रा बुवाई के समय और शेष 30 दिन बाद देना चाहिए।

5.सिंचाई प्रबंधन

सामान्यतः बाजरा वर्षा पर आधारित होता है, लेकिन यदि बारिश नहीं हो तो 2-3 सिंचाई आवश्यक होती है : एक बुवाई के 20-25 दिन बाद और दूसरी फूल आने के समय।

6.रोग व कीट नियंत्रण

डाउन माइल्ड्यू: प्रभावित पौधों को उखाड़कर नष्ट करें।

तना मक्खी: मोनोक्रोटोफॉस या थायमेथॉक्साम का छिड़काव करें।

7.कटाई व भंडारण

फसल पकने के बाद बालियों को काटकर सुखाना चाहिए। दाने पूरी तरह सूखने पर उन्हें थ्रेशिंग कर भंडारण किया जाता है।

बाजरा की वैज्ञानिक खेती से लाभ

उपज में वृद्धि: वैज्ञानिक विधियों से पारंपरिक खेती की तुलना में 25-40% अधिक उपज मिलती है।

रोग प्रतिरोधक किस्में: कम दवाओं में बेहतर उत्पादन।

मिट्टी की उर्वरता बनी रहती है: रोटेशन में बाजरे का प्रयोग मृदा स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है।

पोषण में लाभकारी: बाजरा एक पोषक अनाज है जो विशेष रूप से मधुमेह, मोटापा और हृदय रोग के लिए उपयोगी है।

निष्कर्ष

हरियाणा जैसे अर्ध-शुष्क राज्य में बाजरे की वैज्ञानिक खेती न केवल किसानों की आय बढ़ाने का एक सशक्त माध्यम है, बल्कि यह खाद्य सुरक्षा और पोषण सुधार में भी योगदान देती है। राज्य सरकार और कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा समय-समय पर जारी की जाने वाली सलाह और योजनाओं का लाभ उठाकर किसान बाजरे की खेती को लाभकारी बना सकते हैं।

।। श्री गणेशाय नम ।।

फक्कड़ बाबा
खाद बीज भण्डार
खाद बीज एवं कृषि कीटनाशक दवाईयों के विक्रेता

सदर बाजार गंज मुरार, ग्वालियर, मोबा. 9926988124, 9340964335
01/2023-24

मीनू शोध छात्रा, **कविता दुआ** सह- प्राध्यापक संसाधन प्रबंधन और उपभोक्ता विज्ञान विभाग, इंद्रा चक्रवर्ती सामुदायिक विज्ञान महाविद्यालय, चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि वि.वि., हिसार, (हरियाणा)

यशपाल यादव शोध छात्र, फार्म मशीनरी एवं पावर इंजीनियरिंग विभाग, कॉलेज ऑफ टेक्नोलॉजी एंड इंजीनियरिंग, एमपीयूएटी, उदयपुर।

सतत् आंतरिक डिज़ाइन: बेहतर कल के लिए आज के प्रयास

परिचय

आज के युग में जब जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधनों की कमी और प्रदूषण जैसे गंभीर मुद्दे हमारे सामने खड़े हैं, तब वास्तुकला और आंतरिक सज्जा के क्षेत्र में भी एक जिम्मेदार और टिकाऊ (सतत्) दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक हो गया है। सतत् आंतरिक डिज़ाइन केवल सौंदर्य या सजावट की बात नहीं है, यह हमारे पर्यावरण और भविष्य की पीढ़ियों के प्रति हमारी ज़िम्मेदारी को दर्शाता है। यह डिज़ाइन दृष्टिकोण इस बात पर ज़ोर देता है कि कैसे हम पर्यावरण के अनुकूल तरीके से घर, कार्यालय और सार्वजनिक स्थानों को सजाएं, ताकि ऊर्जा की बचत हो, संसाधनों का पुनः उपयोग हो और कार्बन उत्सर्जन कम किया जा सके।

सतत् आंतरिक डिज़ाइन का अर्थ

सतत् आंतरिक डिज़ाइन का तात्पर्य एक ऐसे आंतरिक स्थान का निर्माण करना है जो पर्यावरण पर न्यूनतम प्रभाव डालते हुए अधिकतम कार्यक्षमता, स्वास्थ्य और सुविधा प्रदान करे। **इसमें निम्नलिखित प्रमुख पहलुओं पर ध्यान दिया जाता है-**

* पर्यावरण-अनुकूल और पुनर्नवीनीकरण सामग्री का उपयोग
* ऊर्जा और जल की बचत
* अपशिष्ट न्यूनकरण और पुनर्चक्रण
* प्राकृतिक प्रकाश और वेंटिलेशन का समुचित प्रयोग
* टिकाऊ फर्नीचर और सजावटी वस्तुओं का चयन

सतत् डिज़ाइन के प्रमुख घटक

1.सामग्री का चयन

पर्यावरण-अनुकूल सामग्री जैसे बांस, कॉर्क, पुनर्नवीनीकरण लकड़ी, पत्थर, ईको-फ्रेंडली पेंट, और प्राकृतिक वस्त्र (जैसे खादी, जूट, ऑर्गेनिक कॉटन) का उपयोग टिकाऊ डिज़ाइन की नींव होती है। ये सामग्री न केवल पर्यावरण को नुकसान से बचाती हैं, बल्कि स्वास्थ्य के लिए भी सुरक्षित होती हैं।

2.ऊर्जा दक्षता

ऊर्जा की खपत कम करने के लिए LED लाइट्स, सोलर पैनल्स, ऊर्जा कुशल उपकरणों और थर्मल इंसुलेशन तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। खिड़कियों का डिज़ाइन ऐसा होना चाहिए जिससे दिनभर प्राकृतिक रोशनी मिल सके।

3.जल संरक्षण

वॉटर-सेविंग टॉयलेट्स, लो-फ्लो टोंटी और वर्षा जल संचयन जैसी प्रणालियाँ जल की बर्बादी को रोकती हैं और टिकाऊ निर्माण में योगदान देती हैं।

4.पुनर्चक्रण और अपशिष्ट प्रबंधन

पुराने फर्नीचर, लकड़ी और सजावटी वस्तुओं का नया रूप देकर पुनः उपयोग करना एक किफायती और पर्यावरण-मित्र तरीका है। इसके अलावा, बायोडिग्रेडेबल सामग्री का उपयोग भी सतत् डिज़ाइन में बढ़ावा पाता है।

5.स्वस्थ आंतरिक वातावरण

गैर-विषैली पेंट, वेंटिलेशन सिस्टम और इनडोर पौधों का उपयोग करके एक ताजा, प्रदूषण-मुक्त और स्वास्थ्यवर्धक वातावरण तैयार किया जा सकता है।

सतत् डिज़ाइन और भारतीय परिप्रेक्ष्य

भारत में पारंपरिक वास्तुकला और आंतरिक डिज़ाइन सदैव से प्रकृति के अनुरूप रही है। ग्रामीण घरों में मिट्टी की दीवारें, खपरैल की छत, आंगन और वेंटिलेशन जैसी संरचनाएं प्राकृतिक रूप से टिकाऊ थीं। आज आवश्यकता है कि हम इन परंपरागत तकनीकों को आधुनिक विज्ञान के साथ समन्वित करें और उन्हें फिर से अपनाएं।

फायदे

1.पर्यावरण संरक्षणः प्रदूषण और संसाधनों की बर्बादी को कम करके सतत् डिज़ाइन हमारे पर्यावरण को सुरक्षित बनाता है।

2.स्वास्थ्य लाभः रासायनिक तत्वों से मुक्त वातावरण मानसिक और शारीरिक स्वास्थ्य को बढ़ावा देता है।

3.लंबी अवधि में आर्थिक लाभः प्रारंभिक निवेश भले ही अधिक हो, लेकिन दीर्घकाल में यह डिज़ाइन ऊर्जा और मरम्मत में भारी बचत करता है।

4.सामाजिक जागरूकताः यह लोगों को पर्यावरणीय मुद्दों के प्रति जागरूक बनाता है और जीवनशैली में सकारात्मक परिवर्तन लाता है।

निष्कर्ष

सतत् आंतरिक डिज़ाइन सिर्फ एक विकल्प नहीं, बल्कि आवश्यकता है। यह केवल एक सजावटी अवधारणा नहीं, बल्कि हमारे ग्रह और भविष्य की पीढ़ियों के प्रति हमारी ज़िम्मेदारी है। यदि आज हम अपने घरों और कार्यस्थलों में टिकाऊ डिज़ाइन को अपनाते हैं, तो हम एक बेहतर और सुरक्षित भविष्य की ओर कदम बढ़ा रहे हैं।

कुंज एजेंसीज

अपने भाई चप्पा सेठ की दुकान

हमारे यहां सभी प्रकार के खाद बीज एवं कीटनाशक दवाईयां उचित रेट पर मिलती है

प्रो. कार्तिक गुप्ता 9589545404
प्रो. हार्दिक गुप्ता 9644689094

भितरवार रोड, डबरा, जिला-ग्वालियर (म.प्र.)

10/2023-24

उन्नत तकनीकी का महत्व जल बचत हेतु

डॉ. सुशील कुमार सिंह
डॉ. एम. डी. परिहार
डॉ मुकेश कुमार जाट
डॉ. दिनेश एंव डा. रोहतास कुमार
मृदा विभाग, कृषि महाविद्यालय
चौधरी चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार, हरियाणा

उन्नत सिंचाई तकनीकी का प्रयोग: परंपरागत सिंचाई विधियों के उपयोग से प्रति इकाई क्षेत्र में ज्यादा पानी देना पड़ता है। अतः वर्तमान समय में बहुत आवश्यक है कि सिंचाई की उन्नत विधियों का प्रयोग करें जैसे:

बूँद-बूँद (ड्रिप) सिंचाई पद्धति का प्रयोग: पानी की कमी देखते हुए इस अमूल्य संसाधन को आने वाली पीढ़ियों के लिये सुरक्षित रखने के लिये अति आवश्यक है कि उपलब्ध उपयोगी जल की दक्षता को बढ़ायें तथा बूंद-बूंद सिंचाई तकनीक को समय रहते अपनायें। जल प्रबंधन एवं उपलब्ध संसाधनों का भरपूर उपयोग के लिये ड्रिप प्रणाली एक अच्छा सिंचाई का साधन है। यह सिंचाई की नवीन पद्धति है, जिसके द्वारा पौधों को उसकी आवश्यकता के अनुसार मृदा के प्रकार, जलवायु, फसल की मांग, फसल की उम्र, फसल की प्रकृति को ध्यान रखते हुए बूँद-बूँद करके पौधों की जड़ों के पास जल उपलब्ध कराया जाता है। जल उपयोग क्षमता अत्यधिक, 95% तक (40 से 70% जल की बचत)। यह पद्धति रेतीली मिट्टी एवं ऊबड़-खाबड़ भूमि के लिये भी बहुत उपयोगी है। इसके साथ ही श्रम व आर्थिक बचत के साथ फसल की गुणवत्ता भी प्राप्त होती है। इस विधि से पौधे में सिंचाई जल का धीमा किंतु सतत प्रयोग करते हुए इसे पौधों को जड़ में ड्रिपर की मदद से सुगमतापूर्वक पहुँचाया जाता है। इस प्रकार मृदा में सिंचाई जल की गहराई में प्रवेश होने पर जल वाष्पीकरण तथा बहाव जैसे कारणों से होने वाले नुकसान को कम किया जा सकता है। इससे पानी की 60-70%मात्रा की बचत होती है

ड्रिप सिंचाई के लाभ:

1.**जल बचत:** यह पद्धति पानी की बर्बादी को रोकने में सहायक होती है।

2.**पोषक तत्वों की अधिक उपलब्धता:** उर्वरक और पोषक तत्व सीधे जड़ों तक पहुँचते हैं, जिससे फसल की वृद्धि बेहतर होती है।

3.**कम पोषक तत्वों की क्षति:** मिट्टी में अधिक जल का प्रवाह न होने से पोषक तत्वों का रिसाव कम होता है।

4.**खेत की सतह का अव्यवस्थित होना:** यह पद्धति मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने में मदद करती है क्योंकि यह खेत में अधिक गड्ढे या जलभराव का कारण नहीं बनती।

5.**कम श्रम की आवश्यकता:** यह पद्धति किसानों को सिंचाई कार्य में कम समय और श्रम खर्च करने की सुविधा देती है।

6.**स्वास्थ्य पर प्रभाव:** ड्रिप सिंचाई से खेतों में पानी की बहुतायत के कारण बिमारियों का असर भी कम होता है, क्योंकि मिट्टी में अधिक नमी नहीं रहती, जिससे रोगजनकों के फैलने का खतरा कम हो जाता है।

ड्रिप सिंचाई की सीमाएँ:

1.**प्रारंभिक लागत अधिक:** इस प्रणाली को स्थापित करने की प्रारंभिक लागत अपेक्षाकृत अधिक होती है।

2.**सिस्टम की देखभाल:** ड्रिप पाइपलाइन और ड्रिपर्स की नियमित सफाई और देखभाल की आवश्यकता होती है, ताकि वे चोक न हो जाएं।

3.**उपयुक्तता:** यह प्रणाली उन क्षेत्रों में अधिक प्रभावी है जहां जल की कमी है और जहाँ मिट्टी की प्रकृति ऐसी हो कि पानी का संचयन आसानी से किया जा सके।

निष्कर्ष: ड्रिप सिंचाई एक अत्याधुनिक और जल बचाने वाली पद्धति है, जो किसानों के लिए लाभकारी साबित हो सकती है, विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहाँ पानी की उपलब्धता कम है। हालांकि इसकी प्रारंभिक लागत अधिक हो सकती है, लेकिन दीर्घकालिक दृष्टिकोण से यह बहुत फायदेमंद साबित होती है।

जल बचत हेतु स्प्रिंकलर सिंचाई विधि

छिड़काव सिंचाई पद्धति एक ऐसी पद्धति है जिसके द्वारा सिंचाई जल का हवा में छिड़काव किया जाता है और यह जल भूमि की सतह पर कृत्रिम वर्षा के रुप में गिरता है। इस विधि में पौधों की दो पंक्तियों के बीच में लोहे या रबर के पाइप भूमि के ऊपर बिछा दिये जाते है। स्प्रिंकलर सिंचाई बलुई मृदा, ऊँची-नीची भूमि तथा जहाँ पर जल कम उपलब्ध है वहाँ पर प्रयोग की जा सकती है। इस विधि के द्वारा गेहूँ, कपास, मूँगफली, तम्बाकू तथा अन्य फसलों में सिंचाई की जा सकती है।

स्प्रिंकलर सिंचाई विधि के लाभ

1.**जल बचत:** * इस विधि में पानी को समान रूप से और नियंत्रित रूप से वितरण किया जाता है, जिससे वाष्पीकरण और जल का अपव्यय कम होता है। * पानी की बर्बादी की संभावना कम होती है क्योंकि पानी सीधे पौधों के आसपास जाता है, न कि खेत की पूरी सतह पर।

2.**उपयुक्तता विविध प्रकार की मिट्टी के लिए:** * यह विधि विभिन्न प्रकार की मिट्टी पर उपयोग की जा सकती है, जैसे रेतीली, चिकनी या दोमट मिट्टी। विशेष रूप से उन क्षेत्रों में जहां भूमि में जल धारण क्षमता कम होती है, यह पद्धति प्रभावी होती है।

3.**स्वचालित संचालन:** * स्प्रिंकलर सिंचाई के सिस्टम को स्वचालित किया जा सकता है, जिससे किसानों को अधिक श्रम की आवश्यकता नहीं पड़ती है। आप निर्धारित समय पर स्प्रिंकलर सिस्टम को चालू और बंद कर सकते हैं।

स्प्रिंकलर सिंचाई विधि की सीमाएँ

1.**प्रारंभिक लागत अधिक:** * इस पद्धति को स्थापित करने की प्रारंभिक लागत अधिक होती है। पाइपलाइन और स्प्रिंकलर हेड्स के लिए निवेश करना पड़ता है, जो छोटे किसानों के लिए कठिन हो सकता है।

2.**वातावरणीय प्रभाव:** * उच्च हवा की गति या तेज हवाओं में, स्प्रिंकलर से निकलने वाला पानी वाष्पीकरण के रूप में उड़ सकता है, जिससे पानी की बचत कम हो सकती है।

3.**नियमित देखभाल की आवश्यकता:** * स्प्रिंकलर सिस्टम में रुकावट (जैसे जाम होना) हो सकती है, इसलिए इनकी नियमित देखभाल और सफाई जरूरी होती है।

4.**सिस्टम की सटीकता:** * यह पद्धति उन क्षेत्रों में कम प्रभावी हो सकती है जहां जल का दबाव कम हो या जल की उपलब्धता सीमित हो।

स्प्रिंकलर सिंचाई की दिशा में कुछ सुझाव

1.**जल दबाव का ध्यान रखें:**

* स्प्रिंकलर हेड्स के सही कामकाज के लिए उचित जल दबाव जरूरी है। कम दबाव पर पानी ठीक से छिटक नहीं पाता, जिससे पानी का वितरण असमान हो सकता है।

2.**स्प्रिंकलर का चुनाव सही करें:** * खेत की प्रकृति और पौधों की ज़रूरत के अनुसार स्प्रिंकलर का चुनाव करें। यदि छोटे क्षेत्र में सिंचाई करनी है तो छोटे स्प्रिंकलर का उपयोग करें, और बड़े क्षेत्र के लिए बड़े स्प्रिंकलर का चयन करें।

निष्कर्ष: स्प्रिंकलर सिंचाई एक जल-बचत विधि है जो खेतों को समान रूप से पानी प्रदान करती है और फसल की उर्वरता बनाए रखने में मदद करती है। यह पद्धति उन क्षेत्रों में विशेष रूप से लाभकारी है जहां पानी की उपलब्धता सीमित है या जहां भूमि की जल धारण क्षमता कम है। हालांकि, इसे स्थापित करने की लागत अधिक हो सकती है, लेकिन लंबे समय में यह पर्यावरणीय और आर्थिक दृष्टिकोण से लाभकारी साबित हो सकती है।

जल बचत हेतु लेजर लैंड लेवलिंग पद्धति

आधुनिक खेती में ट्रैक्टर एवं भारी-भरकम कृषि मशीनों के उपयोग के कारण खेती में समतलता एवं मेंड़ें सुरक्षित नहीं रहीं, जिससे वर्षा जल का अधिकांश भाग बहकर नष्ट हो जाता है। इसके अलावा कृषि भूमि की समतलता बिगड़ती जा रही है, साथ ही फसलों को दिए गए पोषक तत्वों का एक बड़ा हिस्सा भी वर्षा जल के साथ बहकर नष्ट हो जाता है। इस समस्या के कारण फसल की औसत पैदावार में गिरावट आ जाती है। कभी-कभी एक ही तरह के कृषि यंत्रों द्वारा एक ही गहराई पर बार-बार जुताई करने के कारण अधो-भूमि में हल तल के नीचे सख्त (कठोर) परतों का निर्माण हो जाता है, जिसके कारण मृदा में वायु नमी के आवागमन में बाधा पहुँचती है। साथ ही पौधों की जड़ों का विकास भी ठीक तरह से नहीं हो पाता है। इस प्रकार की समस्याओं के निवारण के लिए आधुनिक कृषि यंत्र लेजर लैण्ड लेवलर के उपयोग से खेतों को पूर्णतया समतल किया जा सकता है।

लेजर लैंड लेवलिंग पद्धति की प्रक्रिया:

1.**लेजर सिस्टम का उपयोग:** इस प्रक्रिया में एक लेजर लेवलिंग उपकरण का इस्तेमाल किया जाता है। यह उपकरण खेत में उचाई के अंतर को मापने के लिए एक लेजर बीम का उपयोग करता है, जिससे भूमि की सटीक ढलान का पता चलता है।

2.**सटीक ढलान का निर्धारण:** खेत की भूमि में अनियमित ऊँचाईयों को कम करने और समान स्तर पर लाने के लिए लेजर तकनीक का उपयोग किया जाता है। यह पानी को खेत में समान रूप से वितरित करने में मदद करता है, जिससे पानी की बर्बादी कम होती है।

3.**पानी का समान वितरण:** जब भूमि समान ऊँचाई पर होती है, तो सिंचाई के दौरान पानी का वितरण अधिक समान रूप से होता है। इससे पानी की बचत होती है और अधिकतम फसल उपज प्राप्त होती है।

4.**सिंचाई में सुधार:** लेजर लैंड लेवलिंग से खेत की सिंचाई प्रणाली में सुधार होता है, क्योंकि जल का प्रवाह और वितरण बेहतर होता है।

जल बचत के लाभ:

1.**पानी की बचत:** इस पद्धति से पानी का अत्यधिक उपयोग रोका जा सकता है, क्योंकि पानी समान रूप से खेतों में वितरित होता है और किसी स्थान पर भी पानी का ठहराव नहीं होता।

2.**भूमि की उर्वरता में वृद्धि:** भूमि की उचाई में सुधार होने से, यह समान रूप से सिंचित होती है और मिट्टी में नमी का स्तर भी बेहतर बना रहता है, जिससे भूमि की उर्वरता बढ़ती है।

3.**उत्पादकता में वृद्धि:** बेहतर जल प्रबंधन के कारण, फसलें अधिक मात्रा में और अच्छी गुणवत्ता की होती हैं। इससे कृषि उत्पादन बढ़ता है।

4.**समान जल वितरण:** पानी की समान आपूर्ति से फसलों की वृद्धि एक समान होती है, जिससे उनकी उपज में वृद्धि होती है।

निष्कर्ष: लेजर लैंड लेवलिंग एक अत्यंत प्रभावी और आधुनिक पद्धति है, जो न केवल जल की बचत करती है, बल्कि खेतों की उपज में भी सुधार करती है। यह तकनीक किसानों को जल संकट से बचने और अधिक उत्पादकता प्राप्त करने में मदद करती है। जल के सीमित स्रोतों के ध्यान में रखते हुए, यह पद्धति कृषि में सस्टेनेबिलिटी को बढ़ावा देती है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत
कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन द्वारा अनाज की गुणवत्ता बढ़ने से किसान की आय में वृद्धि

डॉ. दिनेश रजक (सह-प्राध्यापक)
डॉ. विशाल कुमार (सह-प्राध्यापक)
डॉ. देवेन्द्र कुमार (प्राध्यापक)
प्रसंसकरण एवं खाद्य अभियन्त्रिकी विभाग, कृषि अभियंत्रण एवं प्रौधोगीकी महविद्यालय
डॉ.रा.प्र.कें.कृ. वि. पूसा, समस्तीपुर (बिहार)

परिचय

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जहां अधिकांश जनसंख्या अपनी आजीविका के लिए खेती पर निर्भर करती है। परंतु कई बार किसानों को उनके उपज का उचित मूल्य नहीं मिल पाता क्योंकि अनाज की गुणवत्ता बाज़ार की मांग के अनुरूप नहीं होती। ऐसे में "क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन" (Cleaner cum Grading Machine) एक क्रांतिकारी समाधान के रूप में सामने आई है, जिससे अनाज की सफाई और ग्रेडिंग करके उसकी गुणवत्ता में सुधार किया जा सकता है।

क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन- यह एक यांत्रिक उपकरण है जो फसल की कटाई के बाद उसमें से धूल, कंकड़, भूसी, टूटी दाने और अन्य अवांछनीय पदार्थों को छांटकर शुद्ध अनाज निकालता है। साथ ही यह दानों को उनके आकार, भार और रंग के आधार पर वर्गीकृत (ग्रेडिंग) करता है, जिससे उच्च गुणवत्ता वाला अनाज अलग हो जाता है।

क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन द्वारा गुणवत्ता में सुधार- क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन कृषि उपज की गुणवत्ता सुधारने का एक अत्यंत प्रभावी उपकरण है। यह मशीन फसल से धूल, कचरा, भूसी, पत्थर, और कीटग्रस्त दानों को छांटकर शुद्ध और एकसमान अनाज प्रदान करती है। ग्रेडिंग की प्रक्रिया के अंतर्गत अनाज को आकार, रंग और वजन के आधार पर वर्गीकृत किया जाता है, जिससे उच्च गुणवत्ता वाले दाने अलग हो जाते हैं। इस तकनीकी प्रक्रिया से न केवल अनाज का भंडारण सुरक्षित होता है, बल्कि बाजार में उसकी मांग और मूल्य दोनों में वृद्धि होती है। कुल मिलाकर, यह मशीन किसानों को गुणवत्तापूर्ण उपज बेचने में सक्षम बनाकर उनकी आय में सीधा योगदान देती है। इसका कुछ प्रमुख तरीका है जैसे

साफ-सुथरा अनाज: क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन की मदद से अनाज से धूल, भूसी, कंकड़, पत्तियां और अन्य अवांछनीय पदार्थों को पूरी तरह से हटा दिया जाता है। इससे अनाज साफ-सुथरा, चमकदार और एकसमान बन जाता है, जो न केवल देखने में बेहतर लगता है, बल्कि उसकी गुणवत्ता भी बढ़ जाती है। साफ अनाज का बाजार में मूल्य अधिक होता है और उपभोक्ताओं की मांग में भी वृद्धि होती है। इसके अलावा, साफ अनाज को लंबे समय तक सुरक्षित रूप से संग्रहित किया जा सकता है, जिससे भंडारण के दौरान नुकसान की संभावना कम हो जाती है।

उच्च श्रेणी का वर्गीकरण: क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन अनाज को उसके आकार, वजन और रंग के आधार पर अलग-अलग श्रेणियों में वर्गीकृत करती है। इस प्रक्रिया में उच्च गुणवत्ता वाले दाने, टूटे हुए दानों और खराब दानों को अलग कर दिया जाता है। इससे किसान उच्च श्रेणी के अनाज को प्रीमियम मूल्य पर बाजार में बेच सकता है, जबकि निम्न गुणवत्ता वाले अनाज का उपयोग चारे, बीज या अन्य औद्योगिक उपयोगों में किया जा सकता है। इस वर्गीकरण से उत्पाद की गुणवत्ता सुनिश्चित होती है और खरीदारों का विश्वास भी बढ़ता है।

भंडारण और निर्यात योग्य: क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन से प्रसंस्कृत अनाज पूरी तरह से साफ और श्रेणीकृत होता है, जिससे उसमें नमी, कीट या फफूंदी लगने की संभावना बहुत कम हो जाती है। ऐसे अनाज को लंबे समय तक सुरक्षित रूप से भंडारित किया जा सकता है, बिना गुणवत्ता में कमी आए। साथ ही, अंतरराष्ट्रीय मानकों के अनुरूप ग्रेडिंग होने के कारण यह अनाज निर्यात के लिए उपयुक्त बनता है। निर्यात योग्य गुणवत्ता से किसानों को वैश्विक बाजार में प्रवेश का अवसर मिलता है और उन्हें अधिक लाभकारी मूल्य प्राप्त होता है।

किसान की आय में वृद्धि: क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन के उपयोग से अनाज की गुणवत्ता और बाजार मूल्य दोनों में सुधार होता है, जिससे किसान को सीधे आर्थिक लाभ मिलता है। साफ-सुथरे और ग्रेडिंग किए गए अनाज के लिए व्यापारी अधिक दाम देने को तैयार रहते हैं। इसके अलावा, किसान निम्न गुणवत्ता वाले दानों को अलग बेचकर भी अतिरिक्त आय अर्जित कर सकता है। यदि कोई किसान इस मशीन को स्वयं संचालित करता है, तो वह आस-पास के किसानों की फसल भी प्रोसेस कर सेवा शुल्क से अतिरिक्त आमदनी कर सकता है। इस प्रकार यह तकनीक खेती को लाभकारी बनाकर किसान की कुल आय में स्थायी वृद्धि करती है।

बाजार में शुद्ध अनाज का मूल्य अधिक मिलना: जब अनाज क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन द्वारा साफ और ग्रेड किया जाता है, तो उसकी गुणवत्ता बाजार मानकों के अनुरूप हो जाती है। इस प्रकार का शुद्ध और एकसमान अनाज उपभोक्ताओं, व्यापारियों और खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों की पहली पसंद बनता है। साफ अनाज देखने में आकर्षक होता है, इसमें मिलावट नहीं होती और उसका भंडारण आसान होता है। यही कारण है कि बाजार में ऐसे अनाज का मूल्य सामान्य अनाज की तुलना में अधिक मिलता है। इससे किसानों को उनकी मेहनत का सही मूल्य प्राप्त होता है और उनकी आर्थिक स्थिति में सुधार होता है।

बिचौलियों पर निर्भरता कम होना: क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन की मदद से किसान अपने स्तर पर ही अनाज की सफाई और ग्रेडिंग कर सकता है, जिससे उसे मंडी या व्यापारी पर निर्भर रहने की आवश्यकता नहीं रहती। पहले किसान को अस्वच्छ या अव्यवस्थित अनाज बेचने के लिए बिचौलियों की मदद लेनी पड़ती थी, जो कम कीमत पर फसल खरीदते थे। लेकिन जब किसान स्वच्छ, ग्रेडेड और बाजार-तैयार अनाज स्वयं तैयार करता है, तो वह सीधे थोक खरीदारों, प्रोसेसिंग यूनिट्स या निर्यात एजेंसियों से संपर्क कर सकता है। इससे न केवल बिक्री का बेहतर मूल्य मिलता है, बल्कि बिचौलियों द्वारा ली जाने वाली मध्यस्थता राशि भी बचती है, जिससे किसान की कुल आमदनी बढ़ जाती है।

गुणवत्ता के आधार पर निर्यात और प्रोसेसिंग यूनिट्स से डिमांड बढ़ना:- "गुणवत्ता के आधार पर निर्यात और प्रोसेसिंग यूनिट्स से डिमांड बढ़ना" का आशय यह है कि जैसे-जैसे उत्पादों की गुणवत्ता में सुधार होता है, वैसे-वैसे विदेशी बाजारों में और देश की प्रोसेसिंग यूनिट्स (जैसे खाद्य प्रसंस्करण, वस्त्र उद्योग, आदि) में उन उत्पादों की मांग बढ़ती है। **इसका मुख्य कारण यह है कि अच्छी गुणवत्ता वाले उत्पाद:**

- अंतरराष्ट्रीय मानकों पर खरे उतरते हैं, जिससे उनका निर्यात संभव होता है।
- प्रोसेसिंग के लिए उपयुक्त होते हैं, जिससे इनका उपयोग करने से अंतिम उत्पाद की गुणवत्ता भी बेहतर होती है।
- ब्रांड और देश की साख में सुधार होता है, जिससे दीर्घकालिक व्यापार संबंध बनते हैं।

उदाहरण: यदि कोई किसान उच्च गुणवत्ता वाला फल उगाता है, तो वह फल न केवल स्थानीय बाजार में महंगे दामों में बिकेगा, बल्कि उसे विदेशी कंपनियां या प्रोसेसिंग यूनिट्स भी खरीदने में रुचि दिखाएंगी।

- ग्राम स्तरीय प्रोसेसिंग यूनिट लगाने पर अन्य किसानों का अनाज भी प्रोसेस करके सेवा से आय अर्जित की जा सकती है।

निष्कर्ष: "क्लीनर कम ग्रेडिंग मशीन" एक आधुनिक तकनीक है, जो छोटे और सीमांत किसानों के लिए भी अत्यंत लाभकारी सिद्ध हो सकती है। इससे न केवल अनाज की गुणवत्ता में सुधार होता है बल्कि किसान को उसके परिश्रम का उचित मूल्य भी प्राप्त होता है। यदि सरकार और कृषि विभाग द्वारा इसका प्रचार-प्रसार और सब्सिडी पर उपलब्ध कराया जाय, तो यह किसानों की आय दोगुनी करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम हो सकता है।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

साइलेज बनाने की वैज्ञानिक विधि

रंजना सिन्हा, सोनी कुमारी बिहार पशु चिकित्सा महाविद्यालय, बिहार पशु विज्ञान विश्वविद्यालय, पटना

अंजली कुमारी बिहार कृषि विश्वविधालय, सबौर

साइलेज एक तरह का संरक्षित हरा चारा है, जिसमे नमी की मात्रा 65 से 70 प्रतिशत होती है। साइलेज प्राकृतिक अवायवीय (एनारोबिक) किण्वन के माध्यम से पीएच को कम करके संरक्षित किया जाता है, इसका उपयोग हरा चारा के आभाव के समय, सूखे तथा बाढ़ के दौरान पशुओं के खिलाने के लिए किया जाता है। साइलेज 45 से 50 दिनों में तैयार हो जाता है, चारे में मौजूद शर्करा लैक्टिक एसिड में बदल जाता है, जो एक संरक्षक के रूप में कार्य करता है और रुमेन सूक्ष्मजीवों के लिए आसानी से किण्वित होने वाली शर्करा का एक अच्छा श्रोत है। उचित भंडारण स्थिति के तहत, साइलेज को दो साल तक संग्रहीत किया जा सकता है। अच्छी गुणवत्ता वाले साइलेज में कोई ब्यूटिरिक एसिड नहीं होना चाहिए, जो साइलेज को स्वाद खराब करता है।

साइलेज बनाने के लिए चारे का चयन

साइलेज की गुणवत्ता चारा फसलों का चुनाव एवं बनाने की विधि पर निर्भर करता है, साइलेज बनाने के लिए मक्का, ज्वार, तथा बाजरा उत्तम चारा है क्योंकि इसकी तने मोटी और इसमें इसमें शर्करा और पोषक तत्वों का अच्छा संतुलन होता है, जो किण्वन के बाद लैक्टिक एसिड में बदल जाता है। इसके अतिरिक्त संकर नेपियर घास, जई और सूडान घास भी इस्तेमाल होता है।

साइलेज बनाने की प्रक्रिया

साइलेज बनाने में निम्नलिखित चरण शामिल हैं

1.फसलों की कटाई - अच्छा साइलेज बनाने के लिए फसलों की कटाई फूल आने से लेकर दूध आने की अवस्था में करनी चाहिए, क्योंकि इस अवधि के दौरान फसल में पोषक तत्वों की मात्रा सबसे ज्यादा होती है।

2.चारा काटना - साइलेज बनाने के लिए चारे को 10 से 15 मिलीमीटर की आकर में कुट्टी काट लेना चाहिए, यह आकार चारे को अच्छी तरह से पैक करने और हवा रहित वातावरण बनाने के लिए महत्वपूर्ण है।

3.साइलेज गड्ढे बनाना : साईलेज बनाने के लिए गड्ढे कई प्रकार के होते हैं। साईलेज बनाने के लिए खत्तियाँ काफी सुविधाजनक और उपयोगी होती है। गड्ढो का आकार उपलब्ध चारे व पशुओं की संख्या पर निर्भर करता है। गड्ढों के धरातल में ईंटों से तथा चारों और सीमेंट एवं ईंटो से भली भांति भराई कर देनी चाहिए जहाँ ऐसा सम्भव न हो सके वहाँ पर चारों और तथा धरातल की गीली मिटटी से खुब लिपाई कर देनी चाहिए। और इनके साथ सूखे चारा की एक तह लगा देनी चाहिए या चारों और दीवारों के साथ पोलीथीन लगा दें।

4.साइलो भरना और संघनन : साइलेज बनाने के लिए गड्ढे (साइलो) की ऊंचाई 10 फीट, चौड़ाई 15-20 फीट और लंबाई 70-100 फीट होनी चाहिए। कटा हुआ

चारे को साइलो की सत्ता पर सामान रूप से फैलाये और उसे दबाकर संघनित करे, जिससे साइलो से हवा बाहर निकलता है और इस प्रकार एनारोबिक किण्वन तथा पोषक तत्वों को बरकरार रखने में मदद करता है। अच्छा साइलेज बनाने के लिए। 0.5 प्रतिशत नमक, 1 प्रतिशत यूरिया तथा 3- 3.5 प्रतिशत गुड़ मिलाये।

5.साइलो पिट को सही तरीके से सील करना - इसे इस तरह से ढका जाना चाहिए कि साइलो में न तो हवा प्रवेश करे और न ही साइलो से गैस बाहर निकले। पॉलीथीन शीट का उपयोग करना बेहतर है, लेकिन ध्यान रखें कि पॉलीथीन शीट की पूरी सतह को 6-8 इंच की मोटाई तक भूसे या किसी अन्य सूखे पदार्थ से ढक कर मिट्टी का लेप लगाना चाहिए, जिससे कि कुत्ते, बिल्ली या अन्य जानवरों द्वारा पॉलीथीन शीट को नुकसान न पहुंचे। सुनिश्चित करें कि बारिश के दौरान पानी गड्ढे में न जाए। साइलेज 45 से 60 दिनों में तैयार हो जाएगा, जो उपयोग की जाने वाली सामग्री के प्रकार पर निर्भर करता है। जई जैसी पतली तने वाली फसल का साइलेज 45 दिनों में तैयार हो जाता है जबकि मक्का, ज्वार और बाजरा जैसी मोटी तने वाली फसलें 60 से 70 दिनों में तैयार हो जाती हैं।

6.गड्ढों का खोलना : गड्ढे भरने के तीन महीने बाद गड्ढों को खोलना चाहिए। खोलते समय यह ध्यान रखें कि साईलेज को एक तरफ से परतों में निकाला जाए और गडढे का कुछ हिस्सा ही खोला जाए तथा तुरंत उसे ढक दें। गडढा खोलने के बाद साईलेज को जितना जल्दी हो सके पशुओं को खिलाकर समाप्त करना चाहिए।

साइलेज गड्ढेमुख्य रूप से तीन प्रकार के होते हैं।

1. बंकर साइलो

* बंकर साइलो आमतौर पर खुले होते हैं और जमीन की सतह पर बनाए जाते हैं।
* बंकर साइलो खुले होते हैं और इनकी दीवारें ईंटों से बनी होती हैं, जबकि फर्श पक्का होता है।
* जहाँ भूमिगत जल स्तर अधिक होता है. ये साइलो उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त हैं।
* बंकर साइलो में साइलेज को भरने और निकालने में आसानी होती है।
* इनका उपयोग बड़ी मात्रा में साइलेज के भंडारण के लिए किया जाता है।

2. पिट साइलो (च्पजें पसवे)

* पिट साइलो जमीन में खोदे जाते हैं. ये साइलो आमतौर पर जमीन में 2.4 से 3 मीटर गहरे खोदे जाते हैं।
* इनका आकार उपयोग की जाने वाली चारे की मात्रा और मवेशियों की संख्या के अनुसार निर्धारित किया जाता है।
* पिट साइलो में साइलेज को भरने और कॉम्पैक्ट करने के बाद, इसे हवा बंद करने के लिए प्लास्टिक शीट और मिट्टी से ढक दिया जाता है।
* यह उन क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है जहाँ भूमिगत जल स्तर कम होता है।
* छोटे पैमाने पर साइलेज के भंडारण के लिए पिट साइलो का उपयोग किया जाता है।

3. पिट साइलो (ज्तमदबीँ पसवे)

?यह एक लंबी और संकरी खाई के रूप में होता है, जिसे जमीन में खोदा जाता है। यह पिट साइलो से थोड़ा अलग होता है, क्योंकि यह लंबाई में ज्यादा होता है.

साइलेज के फायदे

* पशुओं के लिए वर्ष भर पौष्टिक चारा उपलब्ध होता है।
* हरे चारे को लंबे समय तक संरक्षित किया जा सकता है। जिससे हवा और नमी से होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है।
* पशुधन को सूखे मौसम में भी हरा चारा खिलाया जा सकता है।
* पशुधन का स्वास्थ्य बेहतर होता है।
* साइलेज खिलाने से पशुओं के दूध उत्पादन में वृद्धि आवश्यक पोषक तत्व मिलते हैं, जिससे उनकी दूध उत्पादन क्षमता में वृद्धि होती है।

साइलेज बनाने के लिए सावधानियां

1.फसलों का सही चुनाव करना चाहिए।
2.सही समय पर फसल का कटाई होना चाहिए।
3.हरे चारे में नमी की मात्रा 65 से 75 प्रतिशत होना चाहिए।
4.साईलेज बनाने के लिए गड्ढो के लिए सही जगह का चुनाव करना चाहिए।
5.साइलो पिट में चारा भरने समय अधिकतम वायु का निष्कासित करना चाहिए।
6.साइलो पिट का तापमान 30 से 38 सेंटी ग्रेड होना चाहिए।
7.साइलो में चारा भरने में कम से कम समय लगना चाहिए।
8.साइलो भरने के बाद उसे पॉलिथीन से अच्छी तरह से ढक दे और ऊपर से मिट्टी की मोटी परत का लेप लगाए।
9.साइलो में कहीं से छेद नहीं होना चाहिए।

ISSN-2582-5976
www.krishakbharti.in
मध्य भारत कृषक भारती
हिन्दी भाषी राज्यों में प्रमुखता से पढ़ी जाने वाली कृषि पत्रिका

बाजरे में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनकी रोकथाम

सुस्मिता कुमारी मौर्या (शोध छात्रा) पादप रोग विज्ञान विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

समरेंद्र कुमार यादव (शोध छात्र) अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

अंकित शर्मा शोध छात्र अनुवांशिकी एवं पादप प्रजनन विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

डॉ शहनशी हाशमी (सहायक प्राध्यापिका)पादप रोग विज्ञान विभाग कृषि विज्ञान संस्थान बुंदेलखंड विश्वविद्यालय झांसी

परिचय

बाजरा भारत की प्रमुख फसलों में से एक है जिसका उपयोग भारतीय लोग बहुत लंबे समय से करते आ रहे हैं इसकी खेती अफ्रीका और भारतीय महाद्वीप में बहुत समय पहले से की जा रही है यह फसल अत्यधिक सुखा सहनशील कर सकती है बुंदेलखंड जैसे क्षेत्रों में इनकी खेती आसानी से की जा सकती है यह उच्च तापमान एवं अम्लीयता सहने के कारण बाजरा उन क्षेत्रों में भी आसानी से उगाया जा सकता है जहां मक्का या गेहूं नहीं उगा सकते बाजरा बहुत ही रोगों से प्रभावित होता है जिसका समय-समय पर उपचार कर फसलों को नुकसान से बचाया जा सकता है बाजरे की बीमारियां निम्न प्रकार से लगती हैं

बाजरे में लगने वाले प्रमुख रोग एवं उनकी रोकथाम

हरित बाली रोग

यह एक फफूंद जनित रोग है जिसको जोगिया या हरित बाली आदि नाम से जाना जाता है यह बाजरे की फसल का प्रमुख रोग है तथा हमारे देश में लगभग सभी बाजरा उत्पादक राज्यों में पाया जाता है यह रोग सर्वप्रथम 15 से 20 दिन के अंदर पौधों की पत्तियां इसमें पीली पड़ जाती हैं पत्तियों के नीचे की सतह पर कटक की सफेद वृद्धि दिखाई देती है पत्तियों पर एक दूसरे के समांतर पीली धारियां बन जाती हैं जो की पत्तियों की संपूर्ण लंबाई में फैल जाती हैं रोग की उग्रता के साथ धारियां भूरे रंग की हो जाती है तथा पत्तियां भुरी होकर सिरे से लंबाई में चित्रों में फट जाती हैं या सिकुड़ जाती हैं इस रोग के प्रमुख लक्षण बाजरे की बालियां पर दिखाई देते हैं जिसमें दानों की जगह पूरी बालिया या निचले भाग में छोटी बैठी हुई बालिदार हरी पत्तियां जैसी संरचनाओं में परिवर्तित हो जाती है इसी लक्षण की वजह से इसे हरित बाली रोग के नाम से जाना जाता है

रोगों की रोकथाम

समानता रोग प्रतिरोधी किस्म की ही बुवाई करने के लिए किस्म का चयन करें जैसे आरसीबी 2 हाइब्रिड, आईसीएमएच 88088, एचबी-5, एन एच बी-10 किस्म का चयन करना चाहिए

गर्मियों में खेत की गहरी जुताई करनी चाहिए खेत में रोग ग्रसित पौधे दिखाई दे तो उखाड़ कर गड्ढे में डालकर दबा देना चाहिए या उन्हें जला देना चाहिए फसल की अगेती बुवाई करनी चाहिए जिससे रोग का प्रकोप कम हो या फसल चक्र अपनाना चाहिए खेत में गोबर की खाद एवं उर्वरक का सही मात्रा में प्रयोग करना चाहिए फसल में दिखाई देते ही बुवाई के 30 दिन बाद रिडोमिल, 1 किलो 1000 लीटर पानी प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें

अर्गट रोग

यह रोग बालियो पर पुष्पन के समय दिखाई देते हैं यह रोग सबसे पहले दाने बनते समय या बनने से पूर्व गुलाबी जैसी छोटी-छोटी बिदु के रूप में दिखाई देते हैं यह मधुबिंदु अवस्था कहलाती है यह फसल पकने के साथ ही बाद में मधुरस गायब हो जाता है तथा बलियो के दाने के स्थान पर छोटी बैगनी हरे भरे रंग की अन्य संरचना बन जाती है जिन्हें अर्गट रोग कहते हैं

फसल कटने के समय यह संरचनाओं दानों के साथ या भूमि में मिल जाती हैं यह रोगाणु अगले वर्ष फसल में रोग उत्पन्न करते हैं

रोकथाम

20 प्रतिशत नमक के घोल में बीजों को 5 मिनट तक डूबाना चाहिए एवं पानी में तैरते हुए बीजों को निकाल देना चाहिए और डुबे ही हुए बीजों को साफ पानी में धोकर छाया में सुखा कर बुवाई के लिए पहले बीजों को थिरम 2 ग्राम प्रति किलो बीज दर से उपचारित कर देना चाहिए बाजरे की अगेती बुवाई करके रोग को प्रकोप से बचाया जा सकता है बलिया

निकलते समय यदि आसमान में बादल छाए हो हवा में नमी हो तो 2 किलो मेकोजेब या 1 किलो कार्बन डियोजिम प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए

कंडवा रोग

यह रोग बाजरा बोय जाने वाले सभी क्षेत्रों में पाया जाता है यह रोग दाना बनने के समय दिखाई देता है यह रोग से ग्रसित बालियां में दानों के स्थान पर चमकीले हरी या चॉकलेट रंग के दाने बन जाते हैं जो की सामान्य रूप से दाने में डेढ़ से दो गुना बड़े हो जाते हैं तथा यह आकार में अंडाकार से जैसे में दिखाई देते हैं कभी-कभी यह बालियों में एक तरफ या बालियो के निचली सतह पर ही बनते हैं रोगग्रस्त दानों का रंग हरा धीरे-धीरे गहरे भूरे काले रंग में बदल जाते हैं जिनके अंदर काला रंग का चूर्ण होता है जो की रोगजनक के रोगाणु होते हैं

रोगों की रोकथाम

बुवाई के लिए सुथरे एवं प्रमाणित बीज का ही प्रयोग करना चाहिए बालिया निकलते समय यदि आसमान में बादल छाए हो या हवा में नमी हो तो प्रीपोकोनाजोल या हेक्सागोनजोले 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करके रोगों की तीव्रता कम की जा सकती है रोगों की रोकथाम के लिए संकर किस्म बोनी चाहिए

रोली रोग

यह रोग पत्तियां पर लाल भूरे रंग के छोटे-छोटे धब्बे बनते हैं जो कि हाथ से रगड़ने पर हाथ पर लाल भूरे रंग लग जाता है जो बाद में दाने काले रंग की हो जाते हैं यह रोग अधिक आद्रता वाले क्षेत्रों में अधिक होता है

रोगों की रोकथाम

इस रोग के लक्षण दिखाई देते ही फफूंद नाशक दो किलो प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करने से रोग को बढ़ने से रोका जा सकता है यदि आवश्यक हो तो 15 दिन में छिड़काव दोबारा करके इसे नियंत्रण किया जा सकता है।

POP fusion
#Cornilicious
perfect snack
POP fusion
Classic Salted Butter Caramel Popcorn
POP fusion
Artisan Dark Chocolate Popcorn
POP fusion
Gourmet Makhana
Balances health and taste
Crunchy and munchy
www.popfusion.in

Postal Regd. No.: Gwalior/40020242/2025-27

R.N.I. Regd. No.: MPHIN/2006/16946

मध्य भारत कृषक भारती

जुलाई -2025

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, प्रधान संपादक राजू गुर्जर द्वारा सर्वोदय प्रिंटिंग प्रेस, महाडिक की गोठ, जनक हॉस्पिटल के पीछे कम्पू रोड, लश्कर-ग्वालियर से मुद्रित एवं ई.एम.-120, कुशवाह मार्केट के पास दीनदयाल नगर ग्वालियर (म.प्र.) से प्रकाशित। संपादक: राजू गुर्जर. मोबा. 9425101132, 94245-22090